MATS UNIVERSITY

NAAC GRADE A+ ACCREDITED UNIVERSITY

MATS CENTRE FOR OPEN & DISTANCE EDUCATION

हिन्दी भाषा की उत्पत्ति एवं विकास

बैचलर ऑफ़ आर्ट्स (बी.ए.)

द्वितीय सेमेस्टर

SELF LEARNING MATERIAL

COURSE DEVELOPMENT EXPERT COMMITTEE

1- Prof.(Dr.) Reshma Ansari, HOD Hindi Department , MATS University Raipur Chhattisgarh
2- Dr. Sudhir Sharma , Subject Expert ,HOD Hindi Department, Kalyan College, Bhilai
3- Dr. Kamlesh Gogia Associate Professor, MATS University ,Raipur, Chhattisgarh
4- Dr. Sunita Shashikant Tiwari Associate Professor, MATS University Raipur Chhattisgarh
5- Dr. Rajesh Kumar Dubey , Subject Expert, Principal , Shahid Rajeev Pandey Government College ,Bhatagaon , Raipur ,Chhattisgarh

COURSE COORDINATOR

Prof.(Dr.) Reshma Ansari, HOD Hindi Department , MATS University Raipur Chhattisgarh

COURSE /BLOCK PREPARATION

Prof.(Dr.) Reshma Ansari, HOD Hindi Department , MATS University Raipur Chhattisgarh

March, 2025

ISBN-978-93-49916-36-4

@MATS Centre for Distance and Online Education, MATS University, Village- Gullu, Aarang, Raipur-(Chhattisgarh)

All rights reserved. No part of this work may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from MATS University, Village- Gullu, Aarang, Raipur-(Chhattisgarh)

Printed & Published on behalf of MATS University, Village-Gullu, Aarang, Raipur by Mr. Meghanadhudu Katabathuni, Facilities & Operations, MATS University, Raipur (C.G.)

Disclaimer-Publisher of this printing material is not responsible for any error or dispute from contents of this course material, this is completely depends on AUTHOR'S MANUSCRIPT.

Printed at: The Digital Press, Krishna Complex, Raipur-492001(Chhattisgarh)

अनुक्रमणिका

माड्यूल	विषय – हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास – II	
माड्यूल – 1	**भाषा की परिभाषा और अभिलक्षण**	
	इकाई – 1 भाषा का अर्थ, परिभाषा ,महत्व	3-10
	इकाई – 2 भाषा के अभिलक्षण	11-19
माड्यूल – 2	**हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास**	
	इकाई – 3 हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकासक्रम	20-30
	इकाई – 4 हिन्दी की मूल आकार भाषाएँ	31-40
	इकाई – 5 पुरानी हिन्दी अवहट्ट हिन्दी तथा विभिन्न भाषाओं का विकास	41-55
माड्यूल – 3	**हिन्दी भाषा के विभिन्न रूप**	
	इकाई– 6 हिन्दी भाषा के विभिन्न रूप एक परिचय	56-60
	इकाई– 7 बोलचाल की भाषा, रचनात्मक भाषा तथा राष्ट्रभाषा का परिचय	61-64
माड्यूल – 4	**हिन्दी का शब्द भण्डार एवं शब्दकोष**	
	इकाई – 8 शब्द सम्पदा का महत्व	65-70
	इकाई – 9 हिन्दी शब्दों का परिचय	71-76
	इकाई – 10 उत्पत्ति के आधार पर, रचना के आधार पर, व्याकरण के आधार पर शब्द परिचय	77-80
	इकाई – 11 हिन्दी शब्दकोष	80-84
	इकाई – 12 परिभाषिक शब्दावली	85-87
माड्यूल – 5	**हिन्दी भाषा का मानकीकरण**	
	इकाई – 13 मानक भाषा अर्थ व महत्व	88-110
	इकाई – 14 मानक भाषा विकास के चरण	110-120
	इकाई – 15 मानक भाषा की विशेषताएँ	121-135
	इकाई – 16 हिन्दी भाषा की आधुनिकीकरण – आवश्यक कारक तथा समस्याएँ	136-160

Acknowledgement

The Material (Pictures and images) we have used is purely for educational purpose. Every effort has been made to trace the copyright holders of material reproduced in this book. Sould any infringement have occurred, the publishers and editors apologize and will be pleased to make the necessary corrections in future of this book.

NOTES

माड्यूल – 1

भाषा की परिभाषा और अभिलक्षण

इकाई – 1 भाषा की अर्थ, परिभाषा,महत्व

भाषा शब्द संस्कृत की 'भाष' धातु से निर्मित है, जिसका सामान्यक अर्थ – बोलना' है। सामान्यपरू भाषा प्रयोक्तर अपनी बात को विभिन्नक अवसरों पर यथा संदर्भ बोलकर समझाते हैं और स्रोता उसे सुनकर वक्ता द्वारा कही बात समझते हैं। माता पिता बच्चे को निर्देश देते हैं तो बच्चा माता–पिता से बोलकर अपने मनोभाव प्रकट करता है और बच्चां और माता–पिता एकदूसरे की बात को कहकर एवं सुनकर भावों को प्रकट करते हैं तथा एक दूसरे के भावों को सुनकर समझते हैं। बोलते तो संसार के प्रायः सभी प्राणी हैं जैसे– गाय, बन्दर, कुत्ता, बिल्ली, चिड़िया आदि। ये सभी भी मनुष्योंा की तरह आपस में विचारों एवं भावों कों साझा करने के लिए किसी–न–किसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं, परंतु मानव उनकी भाषा समझ नहीं पाता है। उनके मध्यन विचारों के आदान प्रदान को मानव समुदाय भाषा के रूप में मान्यंता नहीं देता है क्यों कि उसे मानव नहीं समझ पाता है परंतु वह भाषा नहीं है ऐसा मानना कदापि उचित प्रतीत नहीं होता क्योंलकि जानवर, पशु पक्षी आपस में उनसे संबंधित कार्य व्या पार पूरे करते हैं। प्रायरू देखा जाता है कि हमारे घरों के आस–पास रहने वाले कुत्तोंश का दल, उनमें से किसी एक सदस्यै के आवाज देने पर तुरंत इकट्ठा हो जाता है। इसी प्रकार बंदरों को देखा जा सकता है किसी मनुष्य द्वारा किसी बंदर को मारे जाने पर पहले तो वह स्वपयं घुड़की देकर डराने का प्रयास करता है। फिर भी मनुष्यु नहीं डरा तो वह विशेष प्रकार की आवाज निकालता है और पल भर में ही वहां बहुत सारे बंदर इकट्ठा होकर उस मनुष्यय पर हमला कर देते हैं। पक्षियों में इसी प्रकार की भाषिक संप्रेषण देखा जाता है। उदाहरण के लिए कौओं को लिया जा सकता है किसी एक कौए के आवाज देते ही बहुत से कौऐ वहां आ पहुंचते हैं। इससे सिद्ध होता है कि भाषा तो उनकी भी है और आपस में बोलते एवं समझते भी हैं परंतु चूंकि हम उसे ठीक से समझ नहीं पाते हैं इसलिए उनकी भाषा सांकेतिक भाषा कहते हैं। मानव की भाषा का स्वरूप सांकेतिक मौखिक एवं लिखित है। मानव समुदाय द्वारा विचारों और भाव–विनिमय के साधन के रूप में मौखिक या लिखित रूप को ही भाषा माना गया है। मानव समुदाय द्वारा भावों, विचारों और अभिप्रेत अर्थों को ध्वनि प्रतीकों के माध्यम से अभिव्ययक्तस करना ही भाषा माना गया है। मानव द्वारा प्रयुक्त, भाषा का निर्माण जिन व्यक्त ध्वनियों से हुआ है, उन्हें 'वर्ण' कहा जाता है। स्वर–विकार, मुख–विकृति, इंगन आदि भी भाषा के प्रमुख अंग हैं। ये विशेषताएं अशिक्षित लोगों की भाषा में भी होती हैं परंतु विकसित एवं शिक्षित मानव समुदायों के द्वारा लिखित एवं मौखिक रूप से स्पष्ट उच्चंरित ध्वभनि व्यतवस्थाा को ही भाषा के नाम से स्वीषकार करते हैं। किसी देश, देश–विभाग या बड़ी जाति द्वारा परस्पहर विचार विनिमय हेतु प्रयुक्त ध्वननि समूहों को उनके द्वारा प्रयुक्तु 'बोली' या 'भाषा' कहा जाता है। इस अर्थ में हिंदी, बंगला, ओडिया,

NOTES

नेपाली, तिब्बती, चीनी, फारसी आदि भाषाएँ भी 'भाषा' कहलाती हैं। एक भाषा में अनेक स्थानीय और प्रांतीय भेद हो सकते हैं। 'हिंदी एक भाषा है, किंतु इसमें अनेक स्थानीय और प्रांतीय भेद हैं, किंतु हिंदी को अंतरंग भाषाओं और बोलियों को बोलने वाले भी समझते हुए प्रयोग में ला सकते हैं।

भाषा व्यकक्ति के मन के भावों को प्रकट करने करने तथा एक से दूसरे तक अपनी बात को पहुंचाने का सबसे उत्तुम साधन है। दूसरे शब्दों में संसार के विभिन्न प्राणियों द्वारा मनोभावों को प्रकट करने के साधनों जैसे अंग–प्रत्यंगों के संचालन, भाव–मुद्राओं और ध्वनि संकेतों को भाषा कहा जाता है। संसार के सभी प्राणियों की अपनी–अपनी कोई कोई न भाषा अवश्य। होती है। मानव उनमें से कुछ को समझ पाता है कुछ को नहीं और प्रत्येहक भाषा में विचारों के प्रकटीकरण के अपने अपने नियम होते हैं। आदि काल में तो मनुष्य भाषा के अभाव में अपने कार्य प्रायः अंग–प्रत्यंगों के संचालन, भाव–मुद्राओं और विभिन्न प्रकार की ध्वनियों के माध्यम से करता था। परंतु धीरे–धीरे उसने विचार प्रधान भाषा के माध्यचम से भावों को प्रस्तुनत करने के लिए निश्चित ध्वनि संकेतों के लिए निश्चित लिपि का विकास किया। आज मनुष्य की भाषा की व्याख्या मुख्य रूप से समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों और भाषा–वैज्ञानिकों द्वारा की जा चुकी है। समाजशास्त्रियों ने स्पष्ट किया कि भाषा का विकास सामाजिक क्रियाकलापों क माध्योम से होता है और इसलिए भाषा सामाजिक अंतरूक्रिया का आधार एवं परिणाम दोनों मानी जाती है। भाषा के द्वारा ही मनुष्य सामाजिक समूहों में संगठित होते हैं और भाषा के द्वारा ही वे अपनी सभ्यता एवं संस्कृति का विकास कर पाते हैं। भाषा मानव समाज के विकास की आधारशिला है।

➢ भाषा : अर्थ एवं परिभाषा

'भाषा' शब्द की निष्पत्ति भाष् धातु से हुई है। शास्त्रों में कहा गया है– ''भाष् व्यक्तायां वाचि'' अर्थात् व्यक्त वाणी ही भाषा है। भाषा स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यक्ति प्रकट करने में सक्षम होती है। संसार में जितनी वर्ष प्राचीन मानव सभ्यता है उतना ही प्राचीन भाषा का इतिहास माना जा सकता है क्योंकि भाषा के अभाव में मानव समाज का अस्तित्व पूर्ण नहीं माना जा सकता है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि प्रारंभ में भाषा भले ही आज के वर्तमान स्वरूप में न रही हो परंतु इसकी अवस्थिति किसी न किसी रूप में अवश्य रही होगी और धीरे धीरे विकसित होते हुए ये आज अपने वर्तमान स्वरूप तक आ पहुंची है। भाषा को मनुष्य के विचार–विनिमय और भावों के संप्रेषण का साधन माना जाता है। भाषा की परिभाषा पर विचार करते समय रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव की यह बात ध्यान देने योग्य है कि– 'भाषा केवल अपनी प्रकृति में ही अत्यन्त जटिल और बहुस्तरीय नहीं है वरन् अपने प्रयोजन में भी बहुमुखी है।' उदाहरण के लिए अगर भाषा व्यक्ति के निजी अनुभवों एवं विचारों को व्यक्त करने का माध्यम हैय तब इसके साथ ही वह सामाजिक संबंधों की अभिव्यक्ति का उपकरण भी है, एक ओर अगर वह हमारे मानसिक व्यापार (चिंतन प्रक्रिया) का आधार है तो दूसरी तरफ वह हमारे सामाजिक व्यापार(संप्रेषण प्रक्रिया) का साधन भी है। इसी प्रकार संरचना के स्तर पर जहाँ भाषा अपनी विभिन्न इकाइयों में सम्बन्ध स्थापित कर अपना संश्लिष्ट रूप ग्रहण करती है जिनमें वह प्रयुक्त

होती है। प्रयोजन की विविधता ही भाषा को विभिन्न सन्दर्भों मे देखने के लिए बाध्य करती है। यही कारण है कि विभिन्न विद्वानों ने इसे विभिन्न रूपों में देखने और परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। परिभाषाओं पर आगेध दृष्टिपात किया जा रहा है।

NOTES

- **भाषा के प्रकार**

भाषा के विभिन्नक प्रकारों को अग्रलिखित रूप में समझा जा सकता है –

1. **मौखिक भाषा**

सामान्य तरू भाषा का मौखिक रूप वही है जिसके माध्य म से अधिकांश मानव समाज परस्प र विचारों का आदान प्रदान करता है। भाषा के जिस रूप का हम मुख से उच्चावरण करते हुए बोलचाल हेतु प्रयोग में लाते हैं वहीं मौखिक भाषा कहलाती है। उच्च रित भाषा का प्रारंभ मानव के मुंह से सार्थक ध्वेनियों के निकलने के काल से माना जा सकता है। चूंकि मानव प्रारंभ में मौखिक भाषा का प्रयोग श्रवण एवं अनुकरण से सीखता है इसलिए भाषा को मूलतरू मौखिक ही माना जाता है। भाषण, संगीत, नाटक, चलचित्र आदि सभी मौखिक भाषा के रूप हैं। जिसमें एक व्यजक्ति बोलता है और दूसरा एक या एकाधिक लोगों द्वारा सुनकर उसके संदेश को ग्रहण किया जाता है। यही भाषा का मौखिक रूप है। इस प्रकार, भाषा का वह रूप जिसमें एक व्यक्ति बोलकर विचार प्रकट करता है और दूसरा व्यक्ति सुनकर उसे समझता है, मौखिक भाषा कहलाती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जिस ध्वनि का उच्चारण करके या बोलकर मानव समुदाय के सदस्यख अपनी बात एक से दूसरों को समझाते हैं या समझते हैं उसे मौखिक भाषा कहते हैं। उदाहरण के लिए टेलीफोन, मोबाइल, दूरदर्शन, भाषण, वार्ता, नाटक, रेडियो पर किए जाने वाला संवाद आदि को लिया जा सकता है।

➢ **मौखिक भाषा की विशेषताएं**

1. मौखिक भाषा में दो लोगों के मध्य परस्पषर बात–चीत के रूप में भाषा का अस्थाई रूप माना जाता है। सुनी हुई बात अल्प.कालीन प्रभाव वाली होती है। थोड़ी बहुत देर में इसका बहुत अंश मानव के दिमाग से हट जाता है। कुछ ही संवाद ऐसे होते हैं जो पूरी तरह से याद रह जाते हैं। वह भी बहुत हद तक वक्तो की विशेष की शैली पर तथा स्रोता की स्मऐरण शक्ति की क्षमता पर निर्भर करता है।
2. मौखिक भाषा को पुनरू प्रस्तुरत करने पर उसके स्वहरूप में बहुत सारा परिवर्तन आने की पूरी पूरी गुंजाइश रहती है। पहले से कही गई बात में कुछ छूट जाता है तो बहुत कुछ जुड़ भी जाता है।
3. मौखिक भाषा का प्रयोग अधिकांशतरू स्वांुत सुखाय की स्थिति अर्थात गीत, संगीत, भजन आदि गाने के अतिरिक्त वक्तास और श्रोता के आमने–सामने होने पर किया जाता है।
4. मौखिक भाषा की आधारभूत इकाई 'ध्वोनि' है। एक से अधिक ध्वानियों का संयोजन शब्दज कहलाता है और कई सारे शब्दों से वाक्या बनते हैं। इन्हीं का प्रयोग सामान्यितरू आपस में बातचीत के दौरान दो या उससे अधिक लोगों द्वारा किया जाता है।
5. मौखिक भाषा को भाषा का मूल या प्रधान रूप माना जाता है।

NOTES

2. लिखित भाषा

मौखिक भाषा के बाद भाषा का लिखित रूप अस्तित्वर में आता है। इसमें एक व्यक्ति अपने मनोभावों को लिखकर प्रकट करता है और दूसरा पढ़कर उसे समझता है। अन्य शब्दों में कहा जाए तो लिखित भाषा, भाषा का वह रूप है जिसमें एक व्यक्ति वर्णों या चिन्हों की सहायता से अपने विचारों, मनोभावों को लिखित रूप में प्रकट करते हुए संप्रेषण करता है और दूसरा व्यक्ति उन्हेंद पढ़कर ग्रहण करता है। यथा– पत्र, लेख, पत्रिका, समाचार–पत्र, उपन्याजस, कहानी, संस्मीरण, जीवनी, तार आदि के रूप में।

➢ लिखित भाषा की विशेषताएं

1. लिखित भाषा को भाषा का स्थाकई रूप माना जाता है क्योंकि पत्र, लेख, आलेख, पुस्त क आदि के रूप में प्रस्तु त किए गए विचारों को दीर्घकाल तक संरक्षित रखा जा सकता है।
2. लिखित भाषा में वक्ताक तथा स्रोता के आमने–सामने रहने की कोई आवश्यिकता नहीं होती है।
3. लिखित भाषा की आधारभूत इकाई 'वर्ण' है। एकाधिक वर्णों का संयोजन शब्दय बनाता है और कई सारे शब्दों से वाक्यए का गठन होता है। जिनका प्रयोग सामान्य्तरू एक दूसरे के लिए संदेश भेजने या समझने के लिए किया जाता है।
4. लिखित भाषा के प्रयोग के लिए लेखक एवं पाठक दोनों का साक्षर होना आवश्यूक है । अक्षर ज्ञान के अभाव में लिखित भाषा के संदेश को ग्रहण करने के लिए मौखिक भाषा रूप का सहारा लेना पड़ सकता है जिसमें एक का निश्चित रूप से साक्षर होना आवश्येक होता है।

3. सांकेतिक भाषा

सामान्य तरू मानव समुदाय एकल या सामूहिक रूप में एक दूसरे के साथ आपस में विचारों के आदान–प्रदान के लिए वर्णात्मक भाषा का ही प्रयोग करता है। सामान्यए बोल चाल में मौखिक रूप से विचारों की प्रस्तुाति में तीव्रता लाने या विशेष बल देने के लिए मुखाकृति, चेष्टा और संकेतों का सहारा लिया जाता है। परंतु जैसा कि हम सब जानते हैं संसार में बहुत सारी भाषाएं प्रचलित हैं और सभी को सभी भाषाओं का ज्ञान होना असंभव है इसलिए कई बार एक दूसरे की भाषा का ज्ञान न होने की स्थिति में भी लोगों द्वारा सांकेतिक भाषा का भी प्रयोग किया जाता है। कानों से सुन न पाने वाले तथा मुंह से बोल न पा सकने वाले लोग अर्थात गूंगे–बहरे व्याक्तियों के मध्या विचारों के आदान–प्रदान के लिए सांकेतिक भाषा का प्रयोग किया जाता है। आम बोलचाल की भाषा में इसे 'गूँगे–बहिरों' की भाषा के नाम से भी जाना जाता है। छोटे बच्चों , कुछ घरेलू पालतू जानवरों के लिए विशेष ध्व–नि संकेतों तथा शारीरिक भाव भंगिमाओं की सहायता से संदेश संप्रेषण किया जाता है वह भी सांकेतिक भाषा का ही अंग है। चौराहे पर खड़ा यातायात विभाग का कर्मचारी शारीरिक संकेतों से वाहन उपयोगकर्ताओं को मार्ग पर चलने का संकेत देता है। हालांकि अब तकनीक के प्रयोग में बढ़ोत्तररी होने के कारण विद्युत चालित संकेतकों के माध्य म से यातायात नियंत्रण किया जाता है। यह भी सांकेतिक भाषा का

NOTES

ही एक रूप है। मूक–बधिर व्यक्तियों के वार्तालाप में भी सांकेतिक भाषा ही प्रमुख होती है। भाषाविज्ञान का ऐसी भाषाओं से कोई विशेष संबंध नहीं होता है परंतु यह है तो भाषा रूप ही।

4. कृत्रिम भाषा

साधारणत : कृत्रिम भाषा उसे कहते हैं जिसे कुछ मनुष्य अपनी सुविधा या उद्देश्य के लिए सीमित लोगों के मध्यक संदेश संप्रेषण हेतु गढ़ लेते हैं। कुछ प्रमुख कृत्रिम भाषाओं की सूची निम्निलिखित रूप में देखी जा सकती है–

भाषा का नाम	आइएसओ	प्रकाशन	निर्माता
वोलापूक	o, vol	879–1880	जॉहान मार्टिन स्कैलियेर
एस्पेरांतो	o, epo	1887	लुडविग लाजर जामेनहोफ
इदीओम नेउत्राल लातीनो सीने फ्लेक्शॉने (पेआनो		1902	वाल्देमार रॉसेनबेर्गर
की अंतरभाषा)		1903	जूझेप्पे पेआनो
ईदो	o, ido	1907	लुई कुतूरात, लुई द बोफ्रों
ओक्सिडेन्टल	e, ile	1922	एडगर ड वाल
नोवियाल	ov	1928	ओटो येस्पर्सन
ग्लोसा अन्तरभाषा	gs ina	1943 1951	लांसलोट होगबैन इंटरनैशनल आक्जीलरी लैंग्वेज
(इंटरलिंगुआ), लिंगुआ फ्रांका			एसोसियेशन
नोवा	fn	1998	सी. जॉर्ज बुरी
टोकि पोना अंतरस्लाव भाषा (स्लोव्यान्स्की)		2001 1665	सोन्जा एलिन किसा यूरी क्रिझानिच, ओंद्रेय रेचनिक, गाब्रियेल स्वोबोदा, यान वान स्तय्न्बेर्गन, इगोर पोल्याकोव, वोयतेक मेरुंन्का

(स्रोत– https://hi-wikipedia-org/wiki/ कृत्रिम भाषाओं की सूची, अभिगमन तिथि 22–03–2023)

➢ भाषा की परिभाषा

विभिन्न भाषाशास्त्रियों ने 'भाषा' के शास्त्रीय अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसकी परिभाषा निर्धारित करने का प्रयत्न किया है। इनमें भारतीय और पाश्चात्य, प्राचीन और आधुनिक सभी वर्गों के विद्वान हैं। इनमें प्रमुख मत इस प्रकार हैं–

NOTES

- भारतीय परिभाषाकार

1. संस्कृकत आचार्य

संस्कृत आचार्यों की परिभाषाएँ संस्कृत आचार्यों की परिभाषाएँ संस्कृत आचार्यों की परिभाषाएँ अग्रलिखित रूप में देखी जा सकती हैं–

महर्षि पतंजलि

पाणिनि की अष्टाध्यायी महाभाष्य में भाषा की परिभाषा करते हुए पतंजलि ने कहा है कि "व्यक्ता वाचि वर्णा येषां त इमे व्यक्तवाचः।" जो वाणी से व्यक्त हो उसे भाषा की संज्ञा दी जाती है। अन्यव शब्दों में भाषा वह व्यापार है जिससे हम वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।

भर्तृहरि

भर्तृहरि ने शब्द उत्पत्ति तथा ग्रहण के सम्बन्ध में भाषा को इस प्रकार परिभाषित करते हुए कहा है कि "शब्द कारणमर्थस्य स हि तेनोपजायन्ते। तथा च बुद्धि विषयादर्थाच्छब्दः प्रतीयते।।" अर्थात् शब्द व्यापार (भाषा) दो बुद्धियों के बीच विचार आदान–प्रदान का एक माध्यम है।

अमरकोश

अमरकोश में भाषा को वाणी का पर्यायवाची बताते हुए कहा गया है। "ब्राही तु भारती भाषा गी᳴वाग् वाणी सरस्वती।"

काव्यादर्श

काव्याददर्श के अनुसार ष्यह समस्त तीनों लोक अंधकारमय हो जाते, यदि शब्द रूपी ज्योति से यह संसार प्रदीप्त न होता।ष

कामताप्रसाद गुरु

''भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली–भांति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकते हैं।'' (हिंदी–व्याकरण)

दुनीचंद

हम अपने मन के भाव प्रकट करने के लिए जिन सांकेतिक ध्वनियों का उच्चारण करते हैं, उन्हें भाषा कहते हैं। (हिंदी–व्याकरण')

- **आधुनिक भारतीय भाषा परिभाषाकार**

डॉ. मंगलदेव शास्त्री

आपने 'भाषा' को परिभाषित करते हुए लिखा है कि 'भाषा मनुष्य की उस चेष्टा या व्यापार को कहते हैं, जिससे मनुष्य अपने उच्चारणोपयोगी शरीरावयवों से उच्चारण किये गये वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों के द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं। (तुलनात्मक भाषाशास्त्र)

डॉ. बाबूराम सक्सेना

"एक प्राणी अपने किसी अवयव द्वारा दूसरे प्राणी पर कुछ व्यक्त कर देता है– यही विस्तृत अर्थ में भाषा है।" (सामान्य भाषाविज्ञान)

NOTES

डॉ. राम बाबू सक्सेना

''जिन ध्वनि–चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय करता है, उसे भाषा कहते हैं।''

डॉ. श्यामसुंदर दास

"मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान–प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं।" (भाषाविज्ञान)

किशोरीदास बाजपेयी

"विभिन्न अर्थों में सांकेतिक शब्द–समूह हीदृभाषा है, जिसके द्वारा हम अपने मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत सरलता से प्रकट करते हैं।" (भारतीय भाषाविज्ञान)

डॉ. भोलानाथ तिवारी

"भाषा, उच्चारणावयवों से उच्चरित मूलतः प्रायः यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा किसी भाषा–समाज के लोग आपस में विचारों का आदान–प्रदान करते हैं।" (भाषाविज्ञान)

डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा

"उच्चरित ध्वनि संकेतों की सहायता से भाव या विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति भाषा है।" अथवा "जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय या सहयोग करते हैं, उस यादृच्छिक, रूढ़, ध्वनि–संकेत की प्रणाली को भाषा कहते हैं।" (भाषाविज्ञान की भूमिका)

सुमित्रानंदन पंत

''भाषा संसार का नादमयं चित्र हैं, ध्वनिमय स्वरूप हैं, यह विश्व की हृदय तन्त्री की झंकार हैं, जिनके स्वर में अभिव्यक्त पाती हैं।''

सीताराम चतुर्वेदी

भाषा के आविर्भाव से सारा मानव संसार गूँगों की विराट बस्ती बनने से बच गया।

सुकुमार सेन

''अर्थवान कण्ठोदगीर्ण ध्वनि–समष्टि ही भाषा हैं।''

पी.डी. गुणे

''शब्दों द्वारा हृदयगत भावों तथा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।''

देवेंद्रनाथ शर्मा

"उच्चरित ध्वनि संकेतों की सहायता से भाव या विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति भाषा है। जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय या सहयोग करते हैं, उस या दृच्छिक, रूढ़ ध्वनि–संकेत की प्रणाली को भाषा कहते हैं। (भाषाविज्ञान की भूमिका)

डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल

"भाषा वाणी द्वारा व्यक्त स्वच्छंद प्रतीकों की वह रीतिबद्ध पद्धति है जिससे मानव समाज में अपने भावों का परस्पर आदान–प्रदान करते हुए एक–दूसरे को सहयोग देता

NOTES

है।"

श्री नलिनि मोहन सन्याल

"अपने स्वर को विविध प्रकार से संयुक्त तथा विन्यस्त करने से उसके जो–जो आकार होते हैं उनका संकेतों के सदृश व्यवहार कर अपनी चिन्ताओं को तथा मनोभावों को जिस साधन से हम प्रकाशित करते हैं, उस साधन को भाषा कहते हैं।"

डॉ. देवीशंकर

''भाषा यादृच्छिक वाक्यप्रतीकों की वह व्यवस्था के, जिसके माध्यम से मानव समुदाय परस्पर व्यवहार करता है।''

आचार्य देवनाथ शर्मा

'जब मनुष्य उच्चारण के लिए ध्वनि संकेतों की मदद से परस्पर विचार–विनिमय में करते हैं तो उस संकेत प्रणाली को भाषा कहा जाता है।''

➢ पाश्चाात्यक परिभाषाकार

प्लेटो

''विचार आत्मा की मूक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होंठों पर प्रकट है, तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।''

ब्लॉ क एवं ट्रेगर

A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a social group co&operates (भाषा स्वैच्छिक ध्वनि संकेतों की वह व्यवस्था है जिसके माध्यम से कोई सामाजिक समूह सहयोग एवं अन्तः क्रिया करता है।)

ए. एच. गार्डिनर

"The common definition of speech is the use of articulate sound symbols for the expression of thought-" (Speech Language) (विचारों की अभिव्यक्ति के लिए जिन व्यक्त एवं स्पष्ट ध्वनि–संकेतों का व्यवहार किया जाता है, उन्हें भाषा कहते है।)

हेनरी स्वीट

"Language may be defined as eÛpression of human thought] by means of speech] sounds or articulate sounds-"(The History of Language) (जिन व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति होती है, उसे भाषा कहते हैं।)

सट्रटेवेंट

''Language is a system of arbitrary vocal symbols by mceans of which member of a social group cooperate and interact" (भाषा यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तन्त्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह के सदस्य सहयोग एवं समृपर्क करते हैं।)

क्रोचे

"Language is articulate limited organised sound employed in eÛpression"-(भाषा उस स्पष्ट, सीमित तथा सुसंगठित ध्वनि को कहते हैं, जो अभिव्यंजना के लिए नियुक्त की जाती है।)

हॉलिडे

"Language can be thought of as organised noise used in situations] actual so-

cial situations or in other words conteÛtualised systematic sound-" (भाषा को स्थितियों, वास्तविक सामाजिक स्थितियों, या दूसरे शब्दों में संदर्भित व्यवस्थित ध्वनि में उपयोग किए जाने वाले संगठित शोर के रूप में माना जा सकता है।)

NOTES

मैक्समूलर

'भाषा और कुछ नहीं है, केवल मानव की चतुर बुद्धि द्वारा आविष्कृत ऐसा उपाय है जिसकी मदद से हम अपने विचार सरलता और तत्परता से दूसरों पर प्रकट कर सकते हैं और चाहते हैं, कि इसकी व्याख्या प्रकृति की उपज के रूप में नहीं बल्कि मनुष्यकृत पदार्थ के रूप में करना उचित है।"

वेन्द्रीय

भाषा एक तरह का चिह्न है। चिह्न से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपना विचार दूसरों के समक्ष प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं जैसे नेत्रग्राह्य, श्रोत्र ग्राह्य और स्पर्श ग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोत्रग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ हैं।

स्त्रुत्वा

भाषा यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तन्त्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह के सदस्य सहयोग एवं समृपर्क करते हैं।

जॉन डूई

भाषा जानने का साधन या पूछताछ का उपकरण है।

इनसाइक्लोपीडिया

भाषा को यादृच्छिक भाष् प्रतिकों का तन्त्र है जिसके द्वारा मानव प्राणि एक सामाजिक समूह के सदस्य और सांस्कृतिक साझीदार के रूप में एक सामाजिक समूह के सदस्य संपर्क एवं सम्प्रेषण करते हैं।

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी

भाषण और लेखन में संचार की प्रणाली जो किसी विशेष देश या क्षेत्र के लोगों द्वारा उपयोग की जाती है, भाषा कहलाती है।

उपर्युक्त। परिभाषाओं के आधार पर निवेदन किया जा सकता है कि भाषा के द्वारा मानव वास्तविकता व अवास्तविकता, तथ्य एवं कल्पना, वर्तमान, भूत, भविष्य सभी के विषयों पर विचार प्रस्तुात एवं ग्रहण कर सकता है। भाषा के विषय में भी विचार विमर्श भाषा के माध्यकम से ही किया जा सकता है। विचार की अभिव्यक्ति या उन्हें ग्रहण करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का व्यवहार जिस माध्यमम से किया जाता है उसे ही 'भाषा' कहा जाता है।

इकाई – 2 भाषा के अभिलक्षण

भाषाविज्ञान के अध्यधयन में सदैव इस बात का ध्यान रखता है कि भाषा एक सामाजिक सुजन, अनुसृजन का वह क्रिया व्या पार है, जो कि वह किसी व्यक्ति विशेष की व्यषक्तिगत न होकर सामूहिक सम्पत्ति है जिसका उपयोग या प्रयोग सभी कर सकते हैं परंतु एकाधिकार नहीं दिखा सकते हैं। अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि भाषा सामूहिक विचार विनिमय हेतु मानव समाज द्वारा निर्धारित एक सर्वउपयोगी सम्पत्ति है जिसके अभाव में मानव समाज के कार्यव्याभपारों का संचालन असंभव है। भाषा के मुख्यतः

NOTES

चार मूल स्तंयभ होते हैं यथा– वक्ता, श्रोता, शब्द और अर्थ। इन चारों का समेकित स्वसरूप भाषा की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए भाषाविज्ञान का अध्यायन संभव है और उसके आधार पर कहा जा सकता है कि मनुष्य और मनुष्य के बीच, वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान–प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का सामूहिक व्यवहार 'भाषा' कहलाता है।

➢ भाषा का अभिलक्षण

उपर्युक्तक परिभाषाओं के आलोक में भाषा के स्वरूप एवं अभिलक्षण को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्य म से समझा जा सकता है–

(1) भाषा उच्चरित ध्वनि संकेतों की व्यवस्था है।

सर्वविदित है कि 'भाषा' शब्द की व्युत्पत्ति भाष् धातु से हुई है जिसका अर्थ है 'स्पष्ट वाणी'। भाषाविज्ञान में वागवयवों से उच्चरित ध्वनिसमूह को ही भाषा कहा या माना जाता है। तालियों की आवाज या पैर पटकने की आवाज, मुख से विशेष प्रकार की ध्वमनि निकालना, अन्य। प्रकार की ध्वरनियां इत्या, दि संप्रेषण का आंशिक साधन माने जा सकते हैं परंतु ये 'भाषा' की परिधि में नहीं आते हैं, क्योंककि इनकी ध्विनि न तो सर्वमान्यध, सर्वग्राह्य या मानक नहीं होती है। एक व्यतक्ति इन ध्वनियों को भिन्नी मानसिक स्थितियों में अलग–अलग तरह से निकाल सकता है और अलग–अलग मानसिक अवस्थायओं के अनुसार ग्रहण कर सकता है।

प्राय : प्रश्न के रूप एक तथ्यक उपस्थित होता है कि लिपिबद्ध भाषा, ब्रेल लिपि की 'स्पर्श भाषा' या 'मूक–बधिरों की 'संकेत भाषा' को 'भाषा' कहा जा सकता है अथवा नहीं? इसका उत्तिर यह है कि निःसन्देह! ये भी भाषा रूप हैं परंतु ये सब उच्चरित भाषा के ही रूपांतरण हैं। मूल रूप से भाषा उच्चरित ही होती है। लिपि उसे दृश्य रूप प्रदान करती है। ब्रेल लिपि स्पर्श रूप में तथा संकेत भाषा दृश्य संकेत रूप में प्रयोग में लाई जाती है। इन माध्यमों से जिस 'अभिप्राय' को श्रोता तक पहुंचाया जाता है, वह वस्तुतः 'शब्द' रूप होता है और माध्यम बहुत व्यापक होते हैं। रेडियो, टेपरेकॉर्डर, टेलीविजन, कंप्यूंटर, मोबाइल फोन जैसे संप्रेषण के आधुनिकतम साधन भी इस सत्य को झुठला नहीं सकते कि भाषा आखिरकार शब्द रूप है– उच्चरित ध्वनियों की व्यवस्था ही भाषा है।

भाषा विज्ञान के अंतर्गत जिस भाषा का अध्ययन किया जाता है उसका उच्चाधरण मनुष्य के मुख के विभिन्नक अंगों की सहायता से किया जाता है। इस प्रकार भाव अभिव्यं जना की स्पर्श तथा संकेत–आधारित भाषा इससे स्पनष्टदतरू अलग हो जाती है। इसके अंतर्गत वाचिक तथा लिखित भाषाएँ ही आती हैं। इस प्रकार ध्वनि–संकेत एक भेदक तत्त्व है, जिसका निर्धारण आवश्यक होता है।

क. ध्वशन्यात्मि कता

1. द्वयात्मकता या द्वैध संरचना

प्रत्येक भाषा में ध्वतनि तथा अर्थ दो प्रकार की व्यवस्थाएँ अंतर्निहित होती हैं। उदाहरणार्थ– वह फेल हो गया। यह वाक्य तीन शब्दों से निर्मित है– 'वह', 'फेल' तथा 'हो गया'। इनमें से पहला प्राथमिक एकक निम्न द्वितीयक अथवा स्वन प्रक्रियात्मक एककों

NOTES

से निर्मित है–

इसी प्रकार से दूसरे व तीसरे प्राथमिक एकक क्रमशः निम्नलिखित स्वन प्रक्रियात्मक एककों से निर्मित हैं–

वैसे तो ऊपर प्राथमिक स्तर के एककों को सार्थक बताया गया है। पंरतु यह बात सभी एककों के विषय में नहीं कही जा सकती है। जैसे– मैंने चाहा मैं भी कूद जाऊं।' यहाँ 'भी' का उतना अर्थ नहीं हैय जितना 'चाहा' का है तथा 'कि' का लगभग कोई अर्थ नहीं है।

2. सार्थक एवं विश्लेषणीय ध्वनि

उन्हीं ध्वनियों को भाषा अध्यियन के अंतर्गत रखा जाता है जो सार्थक होती हैं तथा उनसे सार्थक शब्दों का निर्माण हो सकता है ताकि उनका समुचित विवेचन एवं विश्लेषण किया जा सके।

अ. निश्चित ध्वनि–रूप

क्योंतधकि किसी न किसी रूप में भाषिक तत्वों की आवृत्ति होती है, इसलिए ध वनि–रूप का निश्चित होना अनिवार्य होता है। ऐसा न होने पर ध्वनियों के अर्थ बदलते रहेंगे और उनसे किसी मानक रूप निर्धारित नहीं हो पाएगा और उसके अभाव में ध्व नियों से किसी एक निश्चित प्रयोजन की अभिव्यक्ति न हो सकने के कारण उसे भाषा नहीं कहा जा सकेगा।

ब. पूर्व निर्धारित अर्थ

भाषा के अंतर्गत आने वाली 'ध्वनि' का अर्थ परंपरागत होता है। उदाहरण के लिए 'काम' शब्द को ही लेते हैं। संस्कृत और हिंदी में इस शब्द का अर्थ 'कार्य या इच्छाथ' निश्चित रूप से स्वीकृत है। 'काम' का एक और निर्धारित अर्थ है जो विशेष संदर्भों में 'यौनइच्छा'' के लिए प्रयोग में लाया जाता है और यह भी निश्चित एवं विशिष्ट संदर्भ में प्रयुक्त् होता है। परंतु अंग्रेजी में यही ध्वनि 'काम'(बंसउ) 'शांत' के अर्थ में प्रयुक्त होती है। जो वहां की परंपरा का बोध कराती है। इससे स्पष्ट होता है कि 'काम' शब्द का अर्थ व्यवहृत परंपरा के अनुसार ही दोनों भाषाओं में गृहीत एवं प्रयुक्त होता है।

(2) ध्वनि संकेत यादृच्छिक होते हैं।

हिंदी का यादृच्छिक शब्दं अंग्रेजी 'ऑबिटेरी' शब्द का अनुवाद है, जिसका अर्थ है 'उन्मुक्त' या 'स्वच्छंद'। भाषिक ध्वनि संकेतों के यादृच्छिक होने का तात्पर्य यह है कि शब्द और अर्थ के बीच जो संबंध होता है, उसके पीछे कोई तर्कसंगत आधार नहीं होता। उदाहरण के लिए 'पुस्तक'तथा कॉपी शब्द को लिया जा सकता है। पुस्तेक से पढ़ने की सामग्री का अर्थबोध होता है और कॉपी से लेखन का बोध होता है परंतु कॉपी में भी जब लिख दिया जाता है तो वह सामग्री भी पढ़ने की हो जाती है पंरतु उसे पुस्तखक नहीं कहा जाता है। पुस्तभक को अर्थ क्यों है और कॉपी का क्योंा निर्धारित हुआ इसका कोई तर्कसंगत उत्त र दे पाना कठिन है क्यों कि पुस्तसक में सामग्री टंकित या मुद्रित हो सकती है परंतु कॉपी में हस्तहलिखित सामग्री को पढ़ा जाता है। शब्दा और अर्थ का संबंध उन्मुक्ती जो किसी 'सह–सम्बन्ध' पर आधारित नहीं है।

NOTES

भारतीय व्याकरण में भी इस प्रश्न पर विचार किया गया है, जिसके अंतर्गत शब्द और अर्थ के पारस्परिक संबंधों का इतिहास ढूँढ़ने का प्रयास किया गया है। उदाहरणार्थ 'पततीति पत्रम्' या 'गच्छतीति गौः जैसी व्युत्पत्तियाँ 'पत्र' और 'गौ' शब्दों का उनके अर्थों से संबंध जोड़ती है। जो गिरता है वह 'पत्र' (पत्ता) तथा जो चलती है वह गौः (गाय)। ऊपर से देखने पर यह प्रयास शब्द और अर्थ के संबंध का आधार तलाश करता हुआ प्रतीत होता है, परंतु यादृच्छिकता की बात फिर भी वहीं की वहीं रह जाती है। प्रश्न उठता है कि गिरने की क्रिया को 'पत' और जाने को गम् (गच्छ) क्यों कहते हैं? और फिर गिरना पत्तें के मामले में तथा गौ सिर्फ गाय के लिए ही लागू नहीं होता है। यह किसी अन्यम गिरने वाली वस्तु एवं चलने वाली वस्तु पर भी तो समान रूप से लागू हो सकता है। यही बात यह है कि शब्द और अर्थ का संबंध यादृच्छिक ही होता है। इसीलिए तो भिन्न–भिन्न भाषाओं में एक ही अर्थ के वाचक भिन्न–भिन्न शब्दछ पाए जाते हैं। यदि शब्द विशेष में अर्थ का संबंध तर्क संगत होता तो प्रत्येक वस्तु के लिए सभी भाषाओं में एक ही वस्तु के लिए अलग–अलग शब्द प्रयुक्त होते हैं, यथा–

हिंदी	संस्कृत	अंग्रेजी	बंगला	ओड़िया	मराठी
लड़की	बालिका	गर्ल	मेय	टोकी	मुल्गीज
लड़का	बालक	बॉय	झेले	टोका	मुल्गाज
कुत्ता	कुक्कुरः	डॉग	कुकुर	कुकुर	कुकुर
बेटा	सुत	सन	बेटा	पुअ	पोरगा
बेटी	सुता	डॉटर	मेय	झिअ	पोरगी

सभी शब्दों के विषय में भी यह स्पष्ट नहीं किया जा सकता है कि विशेष जीव या वस्तु को प्रारंभ से गाय, कुत्ता, कुर्सी, लड़का, लड़की, बेटा, बेटी आदि ही क्यों कहा गया है। ये ध्वनियाँ इच्छानुसार निर्धारित कर समाज द्वारा स्वीकार कर ली जाती है। इस प्रकार निश्चित ध्वनियों से निश्चित जीव या वस्तु का बोध होता है। इससे स्पष्ट होता है कि भाषा यादृच्छिक है।

(3) भाषा व्यानकरणिक व्यवस्था है।

प्रत्येक मौखिक या लिखित भाषा का अपना व्याकरण होता है, जो उसके नियमों का निर्धारण करता है। मौखिक रूप से सामान्य वक्ता भाषा के नियमों का बहुत सतर्कता से पालन नहीं करता, परंतु बहुत हद तक उस पर भी व्यायकरण का नियंत्रण होता ही है। जैसे 'जाना' खाना' सोना, रोना आदि क्रिया रूपों को स्त्री एवं पुरूष द्वारा अलग अलग तरह से वाक्यय में प्रयोग में लाया जाता है यथा–

क्रिया रूप	पुरूष	स्त्री
जाना	जाता हूं।	जाती हूं।
खाना	खाता हूं।	खाती हूं।
सोना	सोता हूं।	सोती हूं।
रोना	रोता हूं।	रोती हूं।

यदि कोई पुरुष 'मैं जाती, खाती, सोती, रोती हूँ' कहता है, तो श्रोता उसके आशय को भले ही समझ लें, यह प्रयोग हास्यास्पद माना जाएगा। इसी प्रकार यदि कोई स्त्री

NOTES

जाता, खाता, सोता, रोता आदि का प्रयोग करती है तो भी अटपटा लगता है, क्योंाकि व्यायकरण में लिंग के अनुसार प्रयोग निर्धारित हैं और हम सभी उन्हींआ के प्रयोग के अभ्यअस्तज हैं। यह भी देखा जाता है कि कुछ परिवारों में बेटियां, पिता के अधिक स्नेसह के कारण या पिता के द्वारा अक्स रकिये तो मेरा बेटा है' आदि संबोधनों के फलस्वररूप वाक्यों में पुल्लिंग प्रयोग करने लगती हैं। किंतु अधिकांशत : लिंग का स्पिष्टो बोध होने के उपरांत इस प्रकार के प्रयोग बंद हो जाते हैं और वे अपने समाज द्वारा निर्धारित लिंग के अनुरूप ही वाक्य : प्रयोग करने लगती हैं। ऊपर कहा जा चुका है कि भाषा नित्य परिवर्तनील है। प्रयत्नलाघव, अज्ञान और अपूर्ण अनुकरण के कारण उसमें निरंतर परिवर्तन होता रहता है। परंतु इन सब परिवर्तनों का नियंत्रण जिस माध्यम से किया जाता है उसे व्याकरण कहा जाता है। 'अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति के कारण भाषा में परिवर्तन होते रहते हैं और व्याकरण से उसे स्थिर रखा जाता है। विद्वानों ने व्याकरण भाषा को पुलिसमैन संज्ञा दी है। जैसे पुलिस मनुष्यों को आपराधिक गतिविधियां करने से रोकते हुए उन्हेंन नियंत्रण में रखती है उसी प्रकार भाषा में आने वाले परिवर्तनों को बेतरीब होने से बचाती है । यदि व्याहकरण की व्यहवस्थाय न हो तो भाषिक अराजकता छा जायेगी और परिवर्तन की गति इतनी तेज हो जायेगी कि एक पीढ़ी की भाषा दूसरी पीढ़ी के लिए समझना कठिन हो जाएगा। इसलिए भाषा के मानकीकरण और स्थिरीकरण के लिए व्या करण की आवश्यकता होती है। ऊपर से देखने पर परिवर्तन और स्थिरीकरण परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं, परंतु भाषा के संदर्भ में ये दोनों साथ–साथ काम करते हैं। परिवर्तन भाषा की केंद्रापगामी तथा स्थिरीकरण केंद्राभिगामी प्रवृत्ति है। इन दोनों में निरंतर संघर्ष चलता रहता है और अंतिम विजय परिवर्तन की ही होती हैं किंतु स्थिरीकरण उसकी गति का नियमन करता है और फलस्वरूप परिवर्तन धीरे–धीरे होता है।

(4) भाषा संप्रेषण का सहज माध्यम है।

मनुष्यै की सामान्य् प्रवृत्ति होती है दैनिक व्यवहार में अपने भाव या विचार दूसरों तक पहुँचाना। खाने, पीने की या अन्य प्रकार की वस्तु ओं की आवश्यैकता होने पर हम किसी से इनका नाम लेकर मांग सकते हैं और वो उपलब्धप हो जाती हैं। इशारों से इन वस्तुओं की ओर इशारा करते हुए भी इन्हेंक मांगा जा सकता है परंतु संकेतों की अपनी सीमाएं हैं। संश्लिष्ट भावों और विचारों को उनके द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता। भाषा के माध्य म से बहुत ही सरलता से वांछित चीजों को मांगा जा सकता है या मन की बात को दूसरे व्यीक्ति तक पहुंचाया जा सकता है। समझा या समझाया जा सकता है।

➢ भाषा की प्रकृति

1. भाषा की सामाजिकता

मानव–मुख सार्थक ध्वकनियों के माध्य म से भाषिक संदेश संप्रेषित करता है। भाषा का उद्‌भव और विकास मनुष्य की सामाजिकता के फलस्वरूप हुआ है। पारस्परिक सहयोग, संपर्क और विचारों के एक से दूसरे तक पहुंचाने के उद्देश्य से ही भाषा का विकास किया गया होगा या यों कहा जाए तो गलत न होगा कि संदेश के एक से दूसरे तक संप्रेषण की प्रक्रिया में भाषा विकसित होती गई होगी। बाद में उसका परिमार्जन किया गया। भाषा ही वह कड़ी है जो व्यक्ति को व्येक्ति से जोड़ते हुए समाज का निर्माण करती

NOTES

है। मनुष्य समाज में रहकर ही भाषा का अर्जन, संवर्द्धन एवं विकास करता है। भाषा भी मनुष्यए के व्यावहार का परिमार्जन करते हुए उसे विकास के विभिन्न् सोपानों तक पहुंचने में सहायता करती है। समाज में भाषा के विविध रूप विभिन्नत समुदायों के अनुरूप ही पाए जाते हैं। इसके साथ ही भाषा समुदायों को पहचान प्रदान करती है। 'भाषा मनुष्य को बोलती है।' यह उक्ति समाज और व्यहक्ति के परस्पचर संबंध को दर्शाती है। भाषा से ही मनुष्यु के उन्न त या सामान्य् होने का बोध होता है। ग्रामीण परिवेश में रहने वाले लोगों की तुलना में शहरी क्षेत्र के लोगों की भाषा में अंतर पाया जाता है। समाज में प्रचलित विभिन्नो व्यणवसायों के अनुसार भी भाषा के रूप पाए जाते हैं।

भाषा का मुख्य ध्येजय सामाजिक व्यवहार होता है। मनुष्ये भाषा के सहारे ही अकेले में सोचते या चिंतन करता है और उसके बाद एक से अधिक लोगों के साथ उसे साझा करता है, किंतु वह भाषा इस सामान्य यादृच्छिक ध्वनि–प्रतिकों पर आधारित भाषा से भिन्न होती है। भाषा अघोपांत समाज से संबंधित होती है। भाषा का विकास समाज में हुआ, उसका अर्जन समाज में होता है और उसका प्रयोग भी समाज में ही होता है। भाषा का सामाजिक स्तर पर भेद हो जाता है। विस्तृत क्षेत्र में प्रयोग में प्रयोग में लाई जाने वाली किसी भी भाषा की आपसी भिन्नता देखी जा सकती है। सामान्य रूप में सभी हिंदी भाषा–भाषी हिंदी का ही प्रयोग करते हैं, किंतु विभिन्न क्षेत्रों की हिंदी भी समान नहीं है। इसलिए हिंदी राजस्थादनी, पहाड़ी, ब्रज, कन्नौीजी, अवधि, भोजपुरी, बघेली इत्या दि प्रमुख बोलियों का समुच्चौय है। क्षेत्र भिन्नता उनके शैक्षिक, आर्थिक, धार्मिक, व्यावसायिक तथा सामाजिक आदि स्तरों के कारण होती है। भाषा के प्रत्येक क्षेत्र की अपनी शब्दावली होती है उसके कारण भी भिन्नता दिखाई पड़ती है। शिक्षित व्यक्ति जितना सतर्क रहकर भाषा का प्रयोग करता है सामान्य अथवा अशिक्षित, अल्पखशिक्षित व्यक्ति उतनी सतर्कता से भाषा का प्रयोग नहीं पाता है।

2. भाषा अर्जित संपत्ति होती है

कोई भी व्य क्ति जन्मप से ही किसी भी भाषा में पारंगत नहीं होता है। इसलिए भाषा मनुष्य को पैतृक संपत्ति के रूप में प्राप्त नहीं होती है। मनुष्यम उम्र के अलग अलग पड़ावों पर धीरे धीरे और अभ्या्स से अर्जन करता है। व्येक्ति कौन–सी भाषा सीखेगा यह उसकी पारिवारिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। भाषा एक सनातन वस्तु है,जो व्यरक्तिा को परंपरा से प्राप्त होती है। हम अपने परिवार में जो भाषा बोलते हैं, वह बच्चेघ को अपने माता–पिता से मिलती है, माता–पिता को दादा–दादी, नाना–नानी से और उन्हें उनकी पूर्ववर्ती पीढ़ी से। यह प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार चला आ रहा है। बचपन से उम्रभर व्याक्ति अनुकरण करके सीखता है। यदि किसी अंग्रेज बच्चे का लालन–पालन हिंदी भाषी माता–पिता करें तो वह बच्चा हिंदी–भाषी के रूप में पहचाना जाता है, क्योंकि वह जन्म से उसके अतिरिक्त कोई अन्या भाषा नहीं जानता है। धीरे धीरे व्यिक्ति स्कूेल, कॉलेज, रोजगार स्थ ल, बाजार आदि के अनुरूप भाषा के नवीन रूपों को सीखता है। वस्तुतः भाषा सीखने का कार्य जीवनपर्यंत निरंतर चलता रहता है।

प्राकृतिक रूप से मनुष्य में अनुकरण के माध्य म से क्रियाकलापों को देखते हुए सीखने की प्रवृत्ति होती है और इसी के अनुसार भाषा सीखने की स्वाभाविक प्रवृत्ति भी एक है। जिस प्रकार मनुष्यक अपने से बड़े या समकक्ष लोगों से विभिन्घ्न कार्यों को करना

NOTES

सीखता है उसी प्रकार अन्य सदस्यों का अनुकरण कर भाषा सीख जाता है। उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश में पैदा होने वाला बच्चा अपने सामाजिक पर्यावरण में हिंदी भाषा सीखता है लेकिन यदि उसे जन्म के बाद उडीसा, बंगाल, असम या दक्षिण भारत के चेन्नई, बैंगलूर, हैदराबाद में भेज दिया जाए तो वह ओडिघ्या, बंगला, असमिया या तमिल, कन्नयड़, तेलेगु को अनुकरण करते हुए सीख जएगा। यदि किसी मानव शिशु को जंगल में या किसी ऐसे स्था न पर रख जाए जाहं किसी भी भाषा–भाषी से उसका संपर्क न हो तो वह भाषा सीखने से वंचित रह जाएगा। भाषा का संबंध परंपरा से होता है। यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक अपने आप तथा अभ्यााास से पहुंचती है। विभिन्न स्तंरों, इसके मूल रूप में थोड़ा–बहुत परिवर्तन तो कर सकते हैं लेकिन इसमें आमूल–चूल परिवर्तन या बिल्कुल नई भाषा का सृजन एक साथ नहीं कर सकते हैं।

3. **भाषा भाव–संप्रेषण का साधन होती है**

भाषा के अभाव में मनुष्य को अपने विचारों को एक से दूसरे तक पहुंचाने के लिए संकेतों का सहारा लेना पड़ेगा। मूक लोग सामान्यंतरू संकेतों के माध्यकम से ही अपने विचारों एवं भावों की अभिव्यक्ति करते हैं। परंतु संकेतों की भाषा भावों को पूरी तरह से प्रकाशित नहीं कर पाती है। पूर्ण संदेश संप्रेषण के लिए भाषा का होना आवश्यीक है।

4. **प्रत्येक भाषा की भौगोलिक और ऐतिहासिक सीमा होती है**

प्रत्येक भाषा की स्थान और काल की दृष्टि से सुनिश्चित सीमाऐं होती हैं। जैसे पंजाबी की सीमाएँ, पंजाब, बंगला की बंगाल, ओडिया की उडीघ्सा, मराठी की महाराष्ट्र, कन्नाड़ का कर्नाटक तथा गुजराती की गुजरात प्रदेश तथा अन्यो भारतीय भाषाओं की राजनैतिक दृष्टि से सीमाएं बंटी हुई हैं। हमारे देश में भाषाओं के अनुसार प्रांतों की रचना की गई है। अतः भाषाओं की सीमाओं को लेकर कोई अनिश्चबतिता की स्थिति नहीं है। परंतु यदि ऐसा न होता तो भी भाषाओं की सीमाएँ स्वतः निर्धारित होती। काल की दृष्टि से भी भाषाओं की व्यापकता निर्धारित की जाती है। उदाहरण स्वारूप आर्य भाषाओं के विकास क्रम को देखने पर पाया जाता है कि मध्यकालीन भाषाओं का समय 500 ई.पू. से लेकर 1000 ई. तक माना गया है। इस 1500 वर्ष के कालखंड में भी 500 ई. पू. से 0 ई. तक का काल पालि भाषा का है। 0 ई. से 500 ई. तक का प्राकृतों का तथा 500 ई. से 1000 ई. तक का समय अपभ्रंश भाषाओं का माना जाता है। यहाँ यह बात स्पष्ट करना भी जरूरी है कि भाषा की सीमाएँ राजनैतिक सीमाओं की तरह सुस्पष्ट नहीं होती। दो भाषाओं के बीच सैकड़ों वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र संधि क्षेत्र होता है, जहाँ दोनों भाषाएँ बोली जाती हैं। जैसे–जैसे हम एक भाषा के केंद्र की ओर बढ़ते हैं, पहली भाषा का प्रभाव कम होता जाता है।

5. **प्रत्येक भाषा का अपना स्वतंत्र ढाँचा होता है**

ध्वनि, रूपरचना, वाक्यविन्यास और अर्थ की दृष्टि से प्रत्येजक भाषा की अपनी स्वकतंत्र संरचना होती है। उदाहरणार्थ हमारा परंपरागत मूर्द्धन्य स्वर 'ऋ' मराठी में 'रु' के रूप में उच्च रित होता है और इसी का उच्चौरण हिंदी में 'रि' के रूप में होता है। वैदिक भाषा की ध्वनि 'रु' मराठी में अब तक प्रचलन में है। रूप रचना की दृष्टि से भी उपर्युक्त हिंदी तथा मराठी दोनों भाषाओं में स्पष्ट अंतर देखने में मिलता है जहां हिंदी में 'स्त्री लिंग

NOTES

एवं पुल्लिंग' दो प्रकार की लिंग होते हैं परंतु मराठी में पुल्लिंग और स्त्रीलिंग के अतिरिक्त नपुंसक लिंग का भी वर्तमान तक प्रचलन है। अंग्रेजी में उपसर्ग का प्रयोग होता है, भारतीय भाषाओं में परसर्गों का। हिंदी में वाक्य–विन्यास कर्ता–कर्म–क्रिया के पदक्रम पर आधारित है। जबकि अंग्रेजी का वाक्यल विन्याास कर्ता–क्रिया–कर्म है। उपर्युक्त्‍ से सीधा साधा तात्पर्य यह है कि प्रत्येक भाषा के अपने व्याकरणिक नियम होती है, अपनी संरचना पद्धति होती है।

6. **भाषा सर्वव्यापिक होती है**

यह सर्वमान्य तथ्य है कि विश्व के समस्त कार्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी न किसी भाषा के ही माध्यम से संभव होता है। समस्त ज्ञान भाषा पर आधारित है। व्यक्ति–व्यक्ति का संबंध या व्यक्ति–समाज का संबंध भाषा के अभाव में नहीं हो सकता है। भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा है–

"न सोऽस्ति प्रत्ययों लोके यः शब्दानुगमादृते।

अनुविद्धमिव ज्ञानं सवं शब्देन भासते।" (वाक्यपदीय 123.24)

7. **भाषा सतत प्रवाहमयी होती है**

मनुष्य के साथ भाषा सतत गतिशीली अवस्था में विद्यमान रहती है। भाषा की उपमा प्रवाहमान जलस्रोत–नदी से दी जा सकती है, जो पर्व से निकल कर समुद्र तक लगातार बढ़ती रहती है, अपने मार्ग में वह कहीं सूखती नहीं है। समाज के साथ भाषा का आरम्भ हुआ और आज तक गतिशील है। मानव समाज जब तक रहेगा तब तक भाषा का स्थायित्व पूर्ण निश्चित है किसी व्यक्ति या समाज के द्वारा उसमें परिवर्तन किया जा सकता है, किन्तु उसे समाप्त करने की किसी में शक्ति नहीं होती है।

8. **भाषा का पारंपरिक उच्चेरित रूप होता है।**

भाव संप्रेषण सांकेतिक, आंगिक, लिखित और यांत्रिक आदि अनेक रूपों में होता है, किंतु इनकी भी कुछ न कुछ सीमाएँ हैं अर्थात् इन माध्यमों के द्वारा पूर्ण रूप से भावों की अभिव्यक्ति संभव नहीं है। स्पर्श तथा संकेत भाषा तो स्पष्ट रूप में अपूर्ण होती ही है, साथ ही लिखित भाषा भी पूर्ण रूप से भावों की अभिव्यक्ति करने में सक्षम नहीं होती है। वाचिक भाषा में आरोह–अवरोह तथा विभिन्न भाव–भंगिमाओं के कारण पूर्ण रूप से प्रभावी अभिव्यकक्ति संभव होती है। इन्हीं विशेषताओं के कारण वाचिक भाषा को सजीव तथा लिखित तथा अन्य भाषाओं को निर्जीव भाषा कहा जाता है। वाचिक भाषा का प्रयोग भी सर्वाधिक रूप में होता है।

9. **भाषा चिरपरिवर्तनशील होती है**

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। संसार की सभी वस्तुओं के समान भाषा भी परिवर्तनशील है। किसी भी देश के एक काल की भाषा परवर्ती काल में पूर्वत् नहीं रह सकती, उसमें कुछ–न–कुछ परिवर्तन अवश्य हो जाता है। यह परिवर्तन अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण होता है। जिस प्रकार मानव जीवन में कोई भी अंतिम सत्यि नहीं होता है वैसे ही भाषा का भी कोई रूप स्थिर या अंतिम रूप नहीं होता है। भाषा में यह परिवर्तन ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ आदि सभी स्तरों पर होता रहता है। उदाहरण के लिए संस्कृत का 'हस्त' शब्द प्राकृत में 'हत्थ' होकर हिंदी में 'हाथ' के रूप में प्रचलित

है। संस्कृत में 'साहस' शब्द हत्या, व्यभिचार आदि के अर्थ में प्रयोग में लाया जाता था जबकि हिंदी भाषा में इसका अर्थ अब 'हिम्मत' हो गया है। भाषा का निर्माण मुख्य्व रूप से ध्वनियों से होता है, जिन्हें सामान्यि रूप से 'वर्ण' कहा जाता है। ये 'वर्ण' स्वंर और व्यं जन कहलाते हैं। सर्वविदित है कि भाषा अनुकरण के माध्यम में सीखी जाती है। मूल–भाषा (वाचक–भाषा) का पूर्ण अनुकरण संभव नहीं है। इसके कारण हैं–अनुकरण की अपूर्णता, शारीरिक तथा मानसिक रचना की भिन्नता एवं भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृ तिक परिस्थितियों की भिन्नता। इस प्रकार भाषा प्रतिपल परिवर्तित होती रहती है।

NOTES

10. भाषा मानकीकरण पर आधारित होती है।

भाषा परिवर्तनशील है, यही कारण है कि एक ही भाषा एक युग के पश्चात् दूसरे युग तक पहुँचते–पहुँचते उसमें शब्द से लेकर स्व रूप तक में बहुत सी भिन्न ताएं आ जाती हैं। विभिन्नप कारण से घटित परिवर्तन के कारण भाषा में विविधता आ जाती है। यदि भाषा–परिवर्तन पर बिल्कुल ही नियंत्रण न रखा जाए तो तीव्रगति के परिवर्तन के परिणामस्वरूप कुछ ही दिनों में भाषा समझने योग्यत नहीं रह जाएगी। भाषा में होने वाले परिवर्तनों को पूर्णरूप से रोका तो नहीं जा सकता, किंतु भाषा में बोधगम्यता बनाए रखने के लिए उसके परिवर्तन–क्रम का स्थिरीकरण आवश्यक होता है। इस प्रकार की स्थिरता से भाषा का मानकीकरण हो जाता है। मानक भाषा ही स्थ रीकृत रूप से व्यारपकता को प्राप्तह करती है।

11. भाषा कठिनता से सरलता की ओर जाती है

प्रयत्न ।लाघव मानव की सबसे सहज प्रवृत्ति है और यही प्रवृत्ति भाषा के विकास पर भी लागू होती है। ध्वनि, रूप, वाक्यरचना आदि सभी क्षेत्रों में भाषा सरलता की ओर बढ़ती रहती है। संस्कृत के संयुक्ताक्षर पालि और प्राकृत में द्वित्ताक्षरों के रूप में परिवर्तित हो गए और बाद में द्वित्व भी समाप्त हो गया। कर्म–कम्म–काम, अक्षि– अक्खि–आंख आदि शब्दोंत का विकास क्रम कठिन से सरल की ओर परिवर्तन का प्रमाण है। द्विवचन का धीरे–धीरे समाप्त हो जाना, विभक्तियों का घिसना और उनके स्थाकन पर परसर्गों का प्रयोग में आना, क्रिया के तिड़त रूपों की जगह कृदंतों का प्रचलन भी भाषा की इसी प्रवृत्ति का परिचायक है। अंग्रेजी में भी जीवन, जीमम, जील आदि सर्वनामों का लुप्त हो जाना, 'स्ट्रांग' क्रियाओं के स्थासन पर 'वीक' क्रियाओं के प्रयोग का बढ़ जाना भी भाषा के सरलता की ओर बढ़ने के उदाहरण हैं।

12. भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता और अप्रौढ़ता स प्रौढ़ता की ओर जाती है

भाषा प्रारंभ में स्थूल होती है। धीरे–धीरे सूक्ष्म मनोभावों और विचारों को व्यक्त करने के लिए उसकी अभिव्यक्ति की क्षमता भी सूक्ष्म होती जाती है। मानव के मस्तिष्क से सीधे जुड़े होने के कारण उसके विकास का प्रभाव भाषा पर पड़ता है। बालक पहले वस्तुओं का ज्ञान उनके स्थूल रूप में ग्रहण करता है। बाद में धीरे–धीरे वह अन्य सूक्ष्म भावों का परिचय प्राप्त करता है। इसी प्रकार भाषा का विकास भी स्थूल से सूक्ष्म की ओर होता है।

13. भाषा का प्रारंभिक रूप अनघड़ या अप्रौढ़ होता है

भाषा अनुप्रयोग में व्याकरण संबंधी अनियमिताएं, ग्राम्य प्रयोग, अपवाद तथा अशुद्धियाँ देखने में आती हैं। बाद में भाषा प्रयोग और प्रतिष्ठा के कारण संस्कृत होकर व्यवस्थित तथा प्रौढ़ रूप धारण कर लेती है। अनेक लोकभाषायें या बोलियाँ साहित्यिक रूप ग्रहण कर लेने पर कहीं अधिक प्रौढ़ प्राज्जना और व्यापक हो जाती हैं।

माड्यूल – 2 हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास
इकाई – 3 हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकासक्रम

हिंदी भाषा का इतिहास लगभग एक हजार वर्ष पुराना माना गया है। हिंदी भाषाव साहित्य के जानकार अपभ्रंश की अंतिम अवस्था 'अवहथा' से हिंदी का उद्भव स्वीकार करते हैं। चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने इसी अवहथा को 'पुरानी हिंदी' नाम दिया। अपभ्रंश की समाप्ति और आधुनिक भारतीय भाषाओं के जन्मकाल के समय को संक्रांतिकाल कहा जा सकता है। हिंदी का स्वरूप शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से विकसित हुआ है। 1000 ई. के आस–पास इसकी स्वतंत्रा सत्ता का परिचय मिलने लगा था, जब अपभ्रंश भाषाएँ साहित्यिक संदर्भों में प्रयोग में आ रही थीं। यही भाषाएँ बाद में विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के रूप में अभिहित हुईं। अपभ्रंश का जो भी कथ्य रूप था। वही आधुनिक बोलियों में विकसित हुआ। अपभ्रंश के सम्बंध में 'देशी' शब्द की भी बहुधा चर्चा की जाती है। वास्तव में 'देशी' से देशी शब्द एवं देशी भाषा दोनों का बोध होता है। प्रश्न यह कि देशीय शब्द किस भाषा के थे ? भरत मुनि ने नाट्यशास्त्रा में उन शब्दों को 'देशी' कहा है 'जो संस्कृत के तत्सम एवं तद्भव रूपों से भिन्न है। ये 'देशी' शब्द जनभाषा के प्रचलित शब्द थे, जो स्वभावतः अप्रभंश में भी चले आए थे। जनभाषा व्याकरण के नियमों का अनुसरण नहीं करती, परंतु व्याकरण को जनभाषा की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना पड़ता है, प्राकृत–व्याकरणों ने संस्कृत के हिंदी दुनिया में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है, लगभग 341 मिलियन देशी वक्ता और अन्य 274 मिलियन लोग इसे दूसरी भाषा के रूप में उपयोग करते हैं। यह भारत की आधिकारिक भाषा है और नेपाल, मॉरीशस, फिजी, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनिदाद और टोबैगो, सिंगापुर और दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों में महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व भी रखती है। संस्कृत से उत्पन्न, हिंदी सदियों से कविता, नाटक और धार्मिक ग्रंथों जैसे साहित्य के विभिन्न रूपों के माध्यम से विकसित हुई है। आज यह देवनागरी लिपि का उपयोग करके लिखा जाता है जिसमें स्वर और व्यंजन सहित 47 प्राथमिक वर्ण शामिल हैं। 1947 में भारत की स्वतंत्रता हिंदी की वैश्विक पहुंच के लिए एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुई। अब जब देश ब्रिटिश शासन से मुक्त हो गया, तो हिंदी को आधिकारिक भाषा के रूप में स्थापित करके राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने पर जोर दिया गया। हालाँकि, इस निर्णय को उन राज्यों के विरोध का सामना करना पड़ा जहाँ अन्य क्षेत्रीय भाषाएँ प्रभावी थीं। परिणामस्वरूप, हिंदी

NOTES

के साथ अंग्रेजी को भी आधिकारिक भाषा के रूप में बरकरार रखा गया।

अपने देश में इन चुनौतियों के बावजूद, प्रवासन पैटर्न और बॉलीवुड फिल्मों जैसे विभिन्न कारकों के कारण हिंदी विश्व स्तर पर फैलती रही है। भारतीय प्रवासियों की एक बड़ी आबादी दुनिया भर में विशेषकर कनाडा, यूनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, मलेशिया, संयुक्त अरब अमीरात आदि देशों में पाई जा सकती है, जो अपनी संस्कृति और भाषा को अपने साथ लाती है।

इसके अलावा, पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक अवधारणाओं के अनूठे मिश्रण के कारण बॉलीवुड फिल्मों ने पिछले कुछ वर्षों में दुनिया भर में काफी लोकप्रियता हासिल की है। इन फिल्मों को अक्सर स्थानीय भाषाओं में उपशीर्षक या डब संस्करणों के साथ विश्व स्तर पर रिलीज किया जाता है, जिससे वे गैर–हिंदी भाषी दर्शकों के लिए सुलभ हो जाती हैं। इसने लोगों को न केवल हिंदी भाषा बल्कि भारतीय संस्कृति से भी परिचित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

योग और आयुर्वेद पद्धतियों की लोकप्रियता ने भी हिंदी की वैश्विक पहुंच के विकास में योगदान दिया है। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में कई लोग इन प्राचीन प्रथाओं को सीख रहे हैं जो भारत से उत्पन्न हुई हैं और इसलिए हिंदी भाषा से परिचित हैं।

पिछले कुछ वर्षों में प्रवासन, बॉलीवुड फिल्मों और सांस्कृतिक प्रभावों जैसे विभिन्न माध्यमों से हिंदी की वैश्विक पहुंच लगातार बढ़ रही है। अपने समृद्ध इतिहास, विविध साहित्य और बढ़ती वैश्विक उपस्थिति के साथ, हिंदी संस्कृतियों को जोड़ने और दुनिया के विभिन्न हिस्सों के लोगों को जोड़ने का काम कर रही है।

341 मिलियन से अधिक देशी वक्ताओं और अतिरिक्त 274 मिलियन दूसरी भाषा बोलने वालों के साथ हिंदी दुनिया में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। यह भारत की आधिकारिक भाषा है और इसे फिजी की आधिकारिक भाषाओं में से एक के रूप में भी मान्यता प्राप्त है। हालाँकि, इसकी पहुँच इन दोनों देशों से कहीं आगे तक है।

हिंदी की ऐतिहासिक उत्पत्ति का पता प्राचीन भारत में, लगभग 1500 ईसा पूर्व में लगाया जा सकता है। यह हिंदू धर्मग्रंथों की शास्त्रीय भाषा संस्कृत से विकसित हुई, और फारसी, अरबी, तुर्की और द्रविड़ भाषाओं जैसी अन्य भाषाओं से बहुत प्रभावित थी। परिणामस्वरूप, आधुनिक हिंदी में समृद्ध शब्दावली और विविध भाषाई संरचना है।

भारत में मुगल काल (16वीं से 18वीं शताब्दी) के दौरान, व्यापार और सांस्कृतिक आदान–प्रदान के कारण हिंदी विभिन्न क्षेत्रों में फैलने लगी। मुगल कला और साहित्य के संरक्षण के लिए जाने जाते थे, जिसके कारण हिंदी साहित्य के उपयोग और विकास में वृद्धि हुई। इस अवधि में हिंदी शब्दावली में फारसी और अरबी शब्दों का मिश्रण भी देखा गया।

19वीं शताब्दी के दौरान जैसे ही भारत में ब्रिटिश उपनिवेशीकरण शुरू हुआ, विभिन्न क्षेत्रों के भारतीयों के बीच संचार के लिए अंग्रेजी एक महत्वपूर्ण भाषा बन गई। हालाँकि, इससे हिंदी का महत्व या उपयोग कम नहीं हुआ क्योंकि इसका उपयोग भारतीयों के बीच

NOTES

सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के साधन के रूप में जारी रहा।

1947 में भारत को ब्रिटिश शासन से आजादी मिलने के बाद, अंग्रेजी के साथ–साथ हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में बढ़ावा देने के प्रयास किए गए। भारतीय संविधान दोनों भाषाओं को संघीय स्तर पर आधिकारिक भाषाओं के रूप में मान्यता देता है। भारत के कई राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, हरियाणा और दिल्ली में बोली जाने के अलावाय नेपाल, पाकिस्तान, बांग्लादेश, मलेशिया, सिंगापुर और मॉरीशस सहित पड़ोसी देशों में भी बड़े समुदायों द्वारा हिंदी बोली जाती है।

वैश्वीकरण के साथ दुनिया भर में भारतीयों के लिए प्रवासन और आर्थिक अवसर बढ़ेय जिससे वे यूरोप, अमेरिका, अफ्रीका, ओशिनिया और मध्य पूर्व के विभिन्न हिस्सों में बस गए। इससे इन क्षेत्रों में भी हिंदी का प्रसार हुआ। वास्तव में, हिंदी दक्षिण अफ्रीका के कुछ हिस्सों में चौथी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है और फिजी में दूसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है।

हाल के वर्षों में, गैर–देशी भाषियों के बीच हिंदी सीखने की रुचि और मांग में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। दुनिया भर के कई विश्वविद्यालय हिंदी भाषा के अध्ययन में पाठ्यक्रम और डिग्री प्रदान करते हैं, जो इसके प्रसार में और योगदान देते हैं।

हिंदी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और इसके विविध भाषाई प्रभावों से जटिल रूप से जुड़ी हुई है। विभिन्न महाद्वीपों में इसका व्यापक उपयोग और बढ़ती लोकप्रियता इसे एक महत्वपूर्ण वैश्विक भाषा बनाती है जो विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को जोड़ती रहती है।

➢ प्राचीन भारतीय आर्य भाषाएं

भाषाविद् आम तौर पर इंडो–आर्यन भाषाओं के तीन प्रमुख प्रभागों को पहचानते हैंरू पुरानी, मध्यम और नई (या आधुनिक) इंडो–आर्यन। ये विभाजन मुख्य रूप से भाषाई हैं और इन्हें उसी क्रम में नामित किया गया है जिसमें वे शुरू में प्रकट हुए थे, बाद में विभाजन पहले वाले विभाजनों को पूरी तरह से प्रतिस्थापित करने के बजाय उनके साथ मिलकर अस्तित्व में आ गए।

पुराने इंडो–आर्यन में विभिन्न बोलियाँ और भाषाई राज्य शामिल हैं जिन्हें आम तौर पर संस्कृत कहा जाता है। सबसे पुरातन पुराना इंडो–आर्यन हिंदू पवित्र ग्रंथों जिन्हें वेद कहा जाता है, में पाया जाता है, जो लगभग 1500 ईसा पूर्व का है। वैदिक और उत्तर–वैदिक संस्कृत के बीच एक स्पष्ट अंतर है कि पहले में कुछ निश्चित संरचनाएँ होती हैं जिन्हें बाद में समाप्त कर दिया जाता है। वैयाकरण पाणिनि (लगभग 5वीं–6वीं शताब्दी ईसा पूर्व) पवित्र ग्रंथों की भाषा में उचित उपयोग (चंदस, स्थानीय एसजी चंदसी) – यानी, वैदिक उपयोग – और मौखिक भाषा में क्या होता है (भाषा, स्थानीय एसजी) के बीच उचित रूप से अंतर करता है। .भाष्यम) अपने समय का। भाषा के भीतर अन्य भेद भी किए जाते हैं, इसलिए विद्वान शास्त्रीय संस्कृत और महाकाव्य संस्कृत की बात करते हैं। हालाँकि, शैली में अंतर के बावजूद, ऐसे कार्यों में पाई जाने वाली संस्कृत आम तौर पर पाणिनि द्वारा वर्णित भाषा से मेल खाती है। तथाकथित गैर–पाणिनियन रूप न केवल स्थानीय भाषाओं के प्रभाव को दर्शाते हैं, बल्कि उपयोग की स्वतंत्रता भी जारी रखते हैं – जिसे अर्शप्रयोग (ऋषियों का उपयोग) कहा जाता है – पहले से ही वर्णित जीवित बोली

NOTES

जाने वाली भाषा पाणिनि के पहलुओं में देखा जा सकता है।

मध्य इंडो–आर्यन में तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व से चौथी शताब्दी ईस्वी तक के शिलालेखों की बोलियाँ और साथ ही विभिन्न साहित्यिक भाषाएँ शामिल हैं। अपभ्रंश बोलियाँ मध्य इंडो–आर्यन विकास के नवीनतम चरण का प्रतिनिधित्व करती हैं। हालाँकि सभी मध्य इंडो–आर्यन भाषाएँ प्राकृत नाम के अंतर्गत शामिल हैं, लेकिन अपभ्रंश को छोड़कर प्राकृतों के बारे में बात करना प्रथागत है।

प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं का काल 2500 ई.पूर्व से 500 ई.पूर्व तक माना जाता है। कुछ भाषा वैज्ञानिक इसका काल 1500 ई.पू. से 500 ई.पू. तक मानते हैं (श्री भगवान तिवारी)। प्राचीन आर्यभाषा का स्वरूप ऋग्वेद में प्राप्त होता है। कालक्रम की दृष्टि से भारतीय आर्य भाषा समूह को तीन अवस्थाओं अथवा वर्गों में विभाजित किया गया है–

1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा 1500 ईसवी पूर्व से 500 ईसा पूर्व तक।
2. मध्य भारतीय आर्य भाषा 500 ईसा पूर्व से 1000 तक ।
3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषा 1000 ईसा से लेकर आज तक।

ऋग्वेद के मंत्रों के अध्ययन से इस बात का स्पष्टीकरण होता है कि उनकी रचना भिन्न–भिन्न कालों तथा भिन्न–भिन्न स्थानों में हुई है। अतः उसके मंत्रों में भाषा की एकरूपता का अभाव पाया जाता है। इसका मूल कारण देश और काल भेद है। ऋग्वेद में कुल 10 मंडल है जिनमें प्रथम तथा दशम मंडल के मंत्रों की भाषा अपेक्षाकृत बाद की है। ऋग्वेद की रचना छन्दोबद्ध है, इसलिए इसे छंद स् भी कहा जाता है। ब्राह्मण ग्रंथों की रचना गद्य में हुई है अतः वेदों की अपेक्षा ब्राह्मण ग्रंथ का महत्त्व अधिक है क्योंकि गद्य से किसी भाषा की वाक्य रचना प्रक्रिया का परिज्ञान होता है।

ब्राह्मण ग्रंथों, प्राचीन उपनिषदों तथा सूत्र ग्रंथों का अध्ययन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी भाषा का क्रमशः विकास हुआ है। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा को कालक्रम के अनुसार दो भागों में विभाजित किया गया है– वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत।

वैदिक साहित्य के अन्तर्गत संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्– इन चारों की गणना होती है। संहिता से उपनिषद् तक के विकास भावधारा की दृष्टि से ही नहीं, अपितु भाषा की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। यह अंतर शताब्दियों में ही संभव हुआ होगा। उदाहरणार्थ– निम्नलिखित उदाहरणों की तुलना रोचक है–

उपत्वाऽग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम्।
नमो भरन्त एमसि। (ऋग्वेद –1.1.7)

(हे अग्नि! हम प्रतिदिन प्रातः, सायं बुद्धिपूर्वक प्रणाम करते हुए तुम्हारे पास आते हैं। जहाँ से मन के साथ वाणी उसे न पाकर लौट आती है, उस ब्रह्म के आनन्द को जाननेवाला किसी से भयभीत नहीं होता।)

पहला उदाहरण ऋग्वेद का है और दूसरा तैत्तिरीयोपनिषद् का। ऋग्वेद के उद्धरण की भाषिक प्राचीनता बिना कहे भी स्पष्ट है। ऋग्वेद की रचना जिस भाषा में हुई वह उस समय की परिनिष्ठित साहित्यिक भाषा थी। अर्थात् वह अभिजात्य वर्ग की भाषा थी अतः

NOTES

उसके समांतर कोई न कोई बोली साधारण जनता द्वारा अवश्य व्यवहृत होती रही होगी। कुछ विद्वानों का विचार है कि संस्कृत का विकास वैदिक भाषा से हुआ है। इसके विपरीत कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि संस्कृत का विकास तत्कालीन प्रयुक्त किसी बोली से हुआ है जो राजनीतिक आदि कारणों से अभिव्यक्ति का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गई पर संस्कृत के महत्त्व को पाने के बाद भी साधारण जन द्वारा बोली जाने वाली भाषा अंततः सलिला की तरह आम जनता के हृदय को शीतल करती रही और आगे चलकर वही अर्वाचीन भाषाओं का विकास स्रोत बन गई।

पाणिनी काल तक वैदिक भाषा तथा साधारण जन–जन की भाषा में अत्यधिक दूरी पड़ गई थी। भाषा विभेद के कारण बुद्ध काल तक भाषा के तीन विभाग हो गए थे ।

- **उदीच्य, प्राच्य तथा मध्य देशीय**

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के अंतर्गत वैदिक तथा लौकिक संस्कृत की गणना होती है। संस्कृत शब्द को कभी–कभी दोनों का बोधक माना जाता है और कभी–कभी केवल लौकिक संस्कृत का। वैदिक भाषा से ही लौकिक संस्कृत का विकास हुआ है। संस्कृत की स्थिति को समझने के लिए खड़ी बोली का उदाहरण लिया जा सकता है। खड़ी बोली मेरठ के आसपास के कुछ जिलों की बोली है किन्तु राजनैतिक, आर्थिक, व्यापारिक आदि कारणों से वह अन्य बोलियों की तुलना में बहुत आगे निकल गई और आज संपूर्ण भारत की राष्ट्रभाषा बन गई है। इसी तरह संस्कृत भी समसामयिक इतर भाषाओं की तुलना में अधिक आगे निकल गई और भारत की सांस्कृतिक भाषा बन गई, किन्तु जो भाषाएँ उस समय जनसाधारण में प्रचलित रही होंगी उनका विकास अवरुद्ध नहीं हुआ होगा। उनसे भारत की अनेक वर्तमान भाषाओं का विकास हुआ होगा। 'संस्कृत' शब्द से वैदिक का भी बोध होता है किन्तु उससे भेद दिखाने के लिए संस्कृत के पहले लौकिक विशेषण लगा दिया जाता है। संस्कृत उस समय की शिष्ट भाषा थी जो बोलचाल के अतिरिक्त साहित्य रचना का भी माध्यम थी। उसमें अभिव्यंजना की कुछ ऐसी विशेषताएँ आ गईं कि हजारों वर्षों बाद भी वह आज अपनी महत्ता बनाए हुए है।

- **प्राचीन इंडो–आर्यन ग्रंथों की विशेषताएँ**

पुराने इंडो–आर्यन का सबसे पुरातन चरण वेदों की संस्कृत में प्राप्त होता है। आधुनिक भाषावैज्ञानिक सामान्य तरू वेद शब्द को एक संज्ञा के रूप में मानते हैं जिसका अर्थ है श्ज्ञान।श यद्यपि, पारंपरिक भारतीय टीकाकारों के अनुसार, वेद एक ऐसे साधन का प्रदर्शक है जिसके माध्यंम से व्यक्ति उन साधनों का ज्ञान प्राप्त करता है– जिन्हें धारणा या अनुमानित तर्क के माध्यम से नहीं जाना जा सकता है और जो व्ययक्ति को वांछित अर्थ की प्राप्ति की ओर अग्रसर करते हैं। वेद ऐसे साधनों को प्रकट करने वाला माध्यसम माना जाता है जो अवांछित से बचाते हुए समापन की ओर ले जाता है। चार प्रमुख वैदिक पाठ समूह हैं जिन्हें संहिता कहा जाता हैरू ऋग्वेद (ष्छंदों में रचित वेदष), सामवेद (ष्मंत्रों का वेदष), यजुर्वेद (ष्बलि सूत्रों का वेदष), और अथर्ववेद (ष्अग्नि पुरोहित का वेदष)। यजुर्वेद को दो मुख्य शाखाओं में विभाजित किया गया है, श्वेत (शुक्ल) यजुर्वेद और काला (कृष्ण) यजुर्वेद। हालाँकि, इन सभी वैदिक ग्रंथों को अलग–अलग पाठ्य परंपराओं द्वारा दर्शाया जाता है, जिन्हें शाखाएँ (शाखाएँ) कहा जाता है और जिन्हें पश्चिमी भाषाशास्त्री पाठन के

रूप में संदर्भित करते हैं (हिंदू धर्म भी देखेंरू पवित्र ग्रंथ)।

NOTES

यजुर्वेद के ग्रंथों में अनुष्ठानों में उपयोग किए जाने वाले छंद को काले (मंत्र) कहा जाता है। यह गद्य खंड शामिल प्रकृति में व्याख्यात्मक रूप हैं और जिनमें किंवदंतियां, संस्कारों की पौराणिक व्याख्याएं और इन संस्कारों से जुड़ी वस्तुओं और देवताओं, और व्युत्पत्ति के साथ अन्य मामलो का समावेश भी है। शब्दों की व्युत्पत्तियों का विवरणकृयह समझाने के लिए कि कुछ चीजों के विशेष नाम क्यों होते हैं। इन ग्रंथों को सामूहिक रूप से ब्राह्मण के रूप में जाना जाता है। प्रत्येक वेद से एक या एक से अधिक ब्राह्मण जुड़े हुए हैं। इसके अलावा, अधिक दार्शनिक वैदिक रचनाएँ, उपनिषद (सत्र) और अरण्यक (जंगल की पुस्तकें) हैं।

वेदों के साथ सहायक कार्य भी जुड़े हुए हैं जिन्हें छह वेदांग (ष्वेद के अंगष्) कहा जाता है। इनमें वे पाठ हैं जिन्हें आम तौर पर कल्प (प्रक्रियाएं) कहा जाता है, जो बदले में कई मानक घटकों से बने होते हैं। उदाहरण के लिए, श्रौत–सूत्र (ष्रहस्योद्घाटन सूत्रष्) नामक घटकों का मुख्य उद्देश्य अनुष्ठान प्रदर्शन के बारे में निर्देश प्रदान करना है। खगोल विज्ञान (ज्योतिष) पर कार्य अनुष्ठान प्रदर्शन के लिए उचित समय निर्धारित करने में सहायता करते हैं। मेट्रिक्स (चंदोविसिटि), जिसका सबसे पहला कार्य पिंगल को बताया गया है, मेट्रिकल पैटर्न का वर्णन करता है, जिसका ज्ञान वैदिक मंत्रों की उचित समझ के लिए आवश्यक है।

➢ वैदिक संस्कृआत

वैदिक संस्कृत हिंद–आर्य भाषा के रूप में 600 ईसा पूर्व से लेकर 2000 ईसा पूर्व तक बोली जाने वाली भाषा थी। यह संस्कृत की पूर्वज भाषा मानी जाती है और आदिम हिंदी–ईरानी भाषा के बहुत ही निकट थी। वैदिक संस्कृत और अवस्ताई भाषा (प्राचीनतम ज्ञात ईरानी भाषा) एक–दूसरे के बहुत निकट हैं। वैदिक संस्कृत हिंद–यूरोपीय भाषा–परिवार की हिंद–ईरानी भाषा शाखा की सबसे प्राचीन प्रामाणिक भाषा है।

वैदिक संस्कृत भाषा में रचित व्यापक प्राचीन साहित्य आधुनिक युग तक पाया जाता है। यह साहित्यह प्रोटो–इंडो–यूरोपीय और प्रोटो–इंडो–ईरानी इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए जानकारी का एक प्रमुख स्रोत रहा है। पूर्व–ऐतिहासिक युग में काफी पहले, संस्कृ त एक पूर्वी ईरानी भाषा, एवेस्टन भाषा से अलग हो गई थी। पृथक्करण की सटीक सदी अज्ञात है, लेकिन संस्कृत और अवस्थन का यह अलगाव 1800 ईसा पूर्व से पहले निश्चित रूप से हुआ था। एवेस्टन भाषा प्राचीन फारस में विकसित हुई, जोरोस्ट्रियनिज्म की भाषा थी, लेकिन सासैनियन काल में एक मृतभाषा थी। प्राचीन भारत में स्वतंत्र रूप से विकसित वैदिक संस्कृत, पाणिनि के व्याकरण और भाषायी ग्रंथ के बाद शास्त्रीय संस्कृत में विकसित हुई और बाद में कई संबंधित भारतीय उपमहाद्वीप भाषाओं में, जिनमें बौद्ध, हिंदू और जैन धर्म के प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य पाए जाते हैं।

हिंदुओं के प्राचीन वेद धर्मग्रंथ वैदिक संस्कृत में लिखे गए हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में श्रौत जैसे सखघ्त नियमित ध्वनियों वाले मंत्रोच्चारण की हजारों वर्षों पुरानी परंपरा के कारण वैदिक संस्कृत के शब्द और उच्चारण इस क्षेत्र में लिखाई आरंभ होने से बहुत पहले

NOTES

से सुरक्षित हैं। वेदों के अध्ययन से देखा गया है कि वैदिक संस्कृत भी सैंकड़ों वर्षों के दीर्घ काल में बदलती गई। ऋग्वेद की वैदिक संस्कृत, जिसे ऋग्वैदिक संस्कृत कहा जाता है, जो कि सबसे प्राचीन रूप है। पाणिनि के नियमीकरण के बाद की शास्त्रीय संस्कृत और वैदिक संस्कृत में पर्याप्त अंतर पाया जाता है। इसलिए वेदों को मूल रूप में पढ़ने के लिए संस्कृत ही सीखना पार्याप्त नहीं बल्कि वैदिक संस्कृत का भी अच्छाक ज्ञान होना आवश्यहक है। अवस्ताई फारसी सीखने वाले विद्वानों को भी वैदिक संस्कृत सीखनी पड़ती है क्योंकि अवस्तई ग्रंथ बहुत कम मात्रा में बचे हैं और वैदिक सीखने से उस भाषा का भी अधिक विस्तृत बोध मिल जाता है।

- ## लौकिक संस्कृत

लौकिक संस्कृत को प्रायः संस्कृत या क्लासिकल संस्कृत भी कहते हैं। वैदिक भाषा के तीन स्तर (उत्तरी मध्यदेशीय तथा पूर्वी) के समान ऐतिहासिक और भौगोलिक रूपों के समांतर बोलचाल के भी तीन स्तर रहे होंगे। लौकिक संस्कृत का आधार इन तीनों में से उत्तरी रूप ही माना जाता है। यह आगे चलकर उन दो से भी प्रभावित होती रही होगी साहित्य में प्रयुक्त भाषा के रूप में इसका प्रारंभ आठवीं सदी ईसा पूर्व से होता है साहित्यिक या क्लासिकल संस्कृत की आधार भाषा का बोलचाल की भाषा में प्रयोग लगभग पांचवी शताब्दी तक होता रहा, उसके बाद अन्य बोलियों ने जन्म लिया। फलतः संस्कृत में होने वाले भाषा परिवर्तनों को रोकने के लिए पाँचवी सदी ईसा पूर्व में पाणिनि ने व्याकरण का निर्माण किया । संभवतः इसी से इसका नाम संस्कृत पड़ा।

पाश्चात्य विद्वानों ने इसे बोलचाल की भाषा के रूप में स्वीकार किया है जबकि डॉ. भंडारकर, डॉ. गुणे प्रभृत्ति विद्वानों ने पाणिनि के बहुशः सूत्रों के आधार पर इसे बोलचाल की भाषा सिद्ध किया है। साहित्य में संस्कृत का प्रयोग रामायण महाभारत से लेकर शाहजहां तक के समय तक हुआ और कुछ अंश में आज भी शब्द और साहित्य की दृ ष्टि से यह नितांत समृद्ध है। भाषा के अर्थ में संस्कार की गई शिष्ट या अप्रकृत शब्द का प्रथम प्रयोग वाल्मीकि रामायण में मिलता है। इसीलिए संस्कृत का सबसे प्राचीन एवं आदिकाव्य वाल्मीकिरामायण है जिसका काल 500 ईसा पूर्व माना जाता है।

महाभारत, पुराण, काव्य, नाटक आदि ग्रन्थ 500 ई. पूर्व से आजतक अविच्छिन्न रूप से अपना गौरव स्थापित किए हुए हैं। यास्क, कात्यायन, पतंजलि आदि के लेखों से सिद्ध है कि ईसा पूर्व तक संस्कृत लोकव्यवहार की भाषा थी।

संस्कृत साहित्य आर्य जाति का प्राण है। संस्कृत में ही समस्त प्राचीन ज्ञान, विज्ञान, कला, पुराण, काव्य, नाटक आदि प्राप्त होते हैं। संस्कृत ने न केवल भारतीय भाषाओं को अनुप्राणित किया है अपितु विश्व भाषाओं– मुख्यतया भारोपीय भाषाओं को भी प्रभावित एवं विकसित किया हैं।

वैदिक काल में भाषा के तीन भौगोलिक रूप– उत्तरी, मध्यदेशी एवं पूर्वी का उल्लेख मिलता है। लौकिक संस्कृत का मूल आधार उत्तरी बोली थी क्योंकि वही प्रामाणिक मानी जाती थी। पाणिनि ने अन्यों के भी कुछ रूप लिए हैं और उन्हें वैकल्पिक कहा है। इस प्रकार मध्यदेशी तथा पूर्वी का भी संस्कृत पर कुछ प्रभाव दीखता है। लौकिक या क्लासिकल संस्कृत साहित्यिक भाषा है। पाणिनीय संस्कृत तत्कालीन पण्डित समाज की

बोलचाल की भाषा पर आधारित है।

NOTES

➢ लौकिक संस्कृत की ध्वनियां

- **स्विर**

मूल स्वर – अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ए ओ – 11

संयुक्त स्वर – ऐ (अइ), औ (अउ) – 02

- **व्यंजन**

स्पर्श – क् ख् ग् घ् ङ् (कण्ठ्य)
च् छ् ज् झ् (तालव्य)
ट् ठ् ड् ढ् ण् (मूर्धन्य)
त् थ् द् ध् न् (दन्त्य)
प् फ् ब् भ् म् (ओष्ठ्य) –25

अन्तः स्थ –य् र् ल् व् –04

अघोष संघर्षी– श्, ष्, स् –03

घोष ऊष्म ह् –01

अधोष ऊष्म – ः (विसर्ग) –01

शुद्ध अनुनासिक– (अनुस्वार) –01

कुल – 48

➢ लौकिक संस्कृत की विशेषताएं

वैदिक संस्कृत का ही विकसित रूप लौकिक संस्कृत है। वैदिक संस्कृत में जो विविधता और अनेकरूपता पाई जाती थी वह लौकिक संस्कृत में न्यून हो गई। पाणिनि के व्याकरण का प्रभाव बहुत बढ़ गया। फलस्वरूप पाणिनि व्याकरण से असिद्ध रूपों का प्रचलन कम हो गया। शब्दरूपादि में संक्षेप और परिष्कार आ गया। अपवाद नियमों की संख्या कम हो गई। लौकिक संस्कृत की विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. शब्दरूपों और धातुरूपों में वैकल्पिक रूपों की न्यूनता हो गई।
2. संधि–नियमों की अनिवार्यता हो गई।
3. लोट् लकार का अभाव हो गया।
4. भाषा में उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि स्वरों का प्रयोग समाप्त हो गया।
5. कृत प्रत्ययों आदि में अनेक प्रत्ययों के स्थान पर एक प्रत्यय होने लगा। तुमर्थक 15 प्रत्ययों के स्थान पर केवल 'तुम' प्रत्यय का प्रयोग होने लगा।
6. शब्दकोष में पर्याप्त अन्तर हो गया। प्राचीन ईम, सीम् जैसे निपात लुप्त हो गये। वेदों में अत्यन्त प्रचलित अवस्यु, विचर्षणि, वीति, ऋक्वन, उक्थ्य जैसे शब्द समाप्त हो गए। इसी प्रकार के अन्य शब्द हैं– दर्शत (दर्शनीय), दृशीक (सुन्दर), मूर (मूढ़), अमूर (विद्वान), अक्तु (रात्रि), अमीवा (रोग), रपस (चोट), ऋदूदर (कृपालु) जिनका प्रयोग नहीं होता।
7. वैदिक शब्दों के अर्थ में भी लौकिक संस्कृत में अन्तर हो गया, जैसे– यत् (वैदिक उड़ना, लौकिक संस्कृत–गिरना) सह्‌ (वैदिक जीतना, लौकिक संस्कृत–सहना), न त्वै.– वैदिक नहीं, तुल्य, लौकिक नहीं,

NOTES

असुर (वैदिक शक्तिशाली) लौकिक संस्कृत–दैत्य), अराति वैदिक कृपण, लौकिक संस्कृत शत्रु), वध (वैदिक घातक शस्त्र, लौकिक संस्कृत–हत्या), क्षिति (वैदिक–गृह, लौकिक संस्कृत–पृथ्वी)।

8. स्वरों में लृ का प्रयोग समाप्त प्राय हो गया। व्यंजनों में G.G.g– नहीं रहे। जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का प्रयोग भी समाप्त हो गया।
9. संगीतात्मक स्वर के स्थान पर बलाघातात्मक स्वर का प्रयोग होने लगा।
10. उपसर्गों का स्वतंत्र प्रयोग नहीं रहा।

➢ **वैदिक तथा लोकिक संस्कृात में साम्य–वैषम्या**

यद्यपि वैदिक और लौकिक संस्कृत की भौगोलिक व ऐतिहासिक सीमा का इदमित्थं निर्धारण दुष्कर है तथा कालसीमा के अनुसार यह कहना भी कठिन है कि इस समय से इस समय तक वैदिक संस्कृत एवं अमुककाल से अमुककाल तक लौकिक संस्कृत का वर्चस्व रहा तथापि भाषावैज्ञानिक परिवेश में अध्ययन सौकर्य हेतु चारों वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, आरण्यक एवं उपनिषद् वैदिक संस्कृत की परिधि में और प्रातिशाख्य, निरुक्तादि वेदाङ्ग, इतिहास–पुराण, काव्य प्रभृति वाङ्मय लौकिक संस्कृत के क्षेत्र में माने जाते हैं। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के विकासक्रम पर दृष्टिपात करने पर निश्चयपूर्वक यह कहा जा सकता हैं कि समय की इस लम्बी शंखला में भाषा में पर्याप्त परिवर्तन हुये जो कि किसी भी भाषा के लिये नितान्त स्वाभाविक है। भाषा के विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन या विकास का प्रारम्भ ऋग्वेद के काल से ही लक्षित होता है। कालान्तर में लौकिक संस्कृत के व्यापक प्रसार से दोनों के मध्य यह भेदक–प्रवृत्ति कई क्षेत्रों में बढ़ती गई। वैदिक एवं लौकिक संस्कृत के अन्तर को हम इस प्रकार विभाजित कर संतुलित अध्ययन कर सकते हैं।

1. व्याकरणगत भेद 2. शब्दकोष में भेद 3. शब्दार्थों में परिवर्तन 4. ध्वन्यात्मक वैषम्य 5. छंद एवं अलंकारों में भिन्नता 6. विषय सामग्री में भेद 7. शैलीगत भेद

1. **व्याकरणगत भेद**

वेदों के अर्थ प्रत्यायनार्थ विभिन्न प्रातिशाख्यों, शिक्षाग्रन्थों, निरुक्त एवं कई व्याकरण सम्प्रदायों में बहुविध प्रयास किये गये। संस्कृत के इन दोनों रूपों के व्याकरण ग्रंथों का उल्लेख मिलता है, किन्तु पाणिनि के काल तक इनके विविध व्याकरणिक रूपों में भारी अन्तर आ चुका था। फलतः एक प्रकार से महर्षि पाणिनि ने दोनों का व्याकरण प्रस्तुत कर इनके तुलनात्मक अध्ययन का स्वरूप उपस्थित किया । पाणिनि के पूर्ववत्ती यास्काचार्य ने भी इनके व्याकरण सम्बन्धी भेदों का उल्लेख कतिपय स्थलों में किया है। संस्कृत के उपर्युक्त रूपों में प्रथमतः भेद सन्धियों के निरूपण में है।

क. संधि योजना

वेदों के स्वाध्याय तथा विनियोग के अवसर पर वैदिक मंत्रों का संहितापाठ आवश्यक है। इसीलिए वेदों की संहिताओं का विशेष महत्त्व है। प्रातिशाख्यकार और महर्षि यास्क पदों को संहिता की प्रकृति मानते हैं और पदों के आधार पर ही संहिता विषयक विकारों का व्याख्यान किया जाता है। वेदों में सन्धि का उतना महत्त्व नहीं जान पड़ता जितना कि लौकिक संस्कृत में। लौकिक संस्कृत में सन्धि विधान अपेक्षाकृत अधिक जटिल स्पष्ट तथा आवश्यक हो गया है जबकि वेद में इनके पालन में शिथिलता पाई जाती है।

परिणामतः सन्धिनियमों के कई अपवाद भी मिलते हैं। दूसरी बात यह है कि लौकिक और वैदिक सन्धियों के स्वरूप में मूलतःअधिक भेद न होते भी इनके नामों में एकदम अन्तर आ गया है। वैदिक सन्धियों में प्रमुखतः प्रश्लिष्ट, क्षेत्र, अभिनिहित, प्रकृतिभाव, छान्दस्दीर्घ (सामवश), उद्ग्राह आदि स्वरसन्धि तथा नति, मूर्धन्यभाव प्रभृति व्यञ्जन सन्धियों के अभिधान लौकिक सन्धियों के सवर्ण दीर्घ, गुण, वृद्धि, यण, अयादि, पूर्वरूप आदि अच्सन्धि, श्चुत्व, ष्टुत्व, अनुस्वार, अनुनासिक तथा विसर्गसन्धि के अभिधानों से सर्वथा भिन्न हैं।

ख. शब्द, रूप

इसके अतिरिक्त दोनों के शब्दरूपों में भी कई स्थलों पर भिन्न रूप होते हैं। वैदिक संस्कृत की अपेक्षा लौकिक संस्कृत में सुबन्त रूपों की विविधता विभिन्न वैकल्पिक रूपों और कुछ प्रत्ययों के अप्रयोग के परिणाम स्वरूप न्यूनता की ओर ही अग्रसर हुई है।

1. अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों का प्रथमा बहुवचन रूप असस् और अस् प्रत्ययों के योग से वेद में निष्पन्न होता है परन्तु लौकिक संस्कृत में केवल अस् प्रत्यय से ही रूप बनते हैं।

वैदिक संस्कृत	लौकिक संस्कृत
देवाः, देवासः	देवाः
ब्राह्मणाः,ब्राह्मणासः	ब्राह्मणाः
रुद्रा,रुद्रासः	रुद्रा

2. वैदिक शब्दों में अकारान्त शब्दों का प्रथमा, द्वितीया द्विवचन रूपों में औ तथा आ प्रत्यय लगाकर शब्द बनाये जाते हैं जबकि लौकिक संस्कृत में केवल औ विभक्ति के ही रूप प्राप्त होते हैं।

वैदिक संस्कृत	लौकिक संस्कृत
प्रियौ,	प्रिया प्रियौ
गावा,	गावौ गावौ
अश्विना,	अश्विनौ अश्विनौ

3. अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों के तृतीया बहुवचन रूपों में वैदिक भाषा में भिस, एवं ऐसे् दोनों प्रत्ययों के रूप उपलब्ध होते हैं किन्तु लौकिक भाषा में केवल अन्तिम रूप ही मिलते हैं।

वैदिक संस्कृत	लौकिक संस्कृत
देवेभिः,	देवैः देवैः
पूर्वेभिः,	पूर्वैः पूर्वैः

4. संख्यावाची शब्दरूपों में भी पर्याप्त अन्तर पाया जाता है।

वैदिक संस्कृत	लौकिक संस्कृत
पञ्चमी एक.	एकस्मात्, एकात् ,एकस्मात्
सप्त, एक. नपु.	एकस्मिन्, एके एकस्मिन्

NOTES

5. सर्वनाम शब्दों के भी कतिपय स्थलों में दोनों के रूपों में स्पष्ट विभेद हो गया है।।

च. एक. मह्यम् मह्य मह्यम्

च. बहु. अस्मभ्यम् अस्मे अस्मभ्यम्

ष. बहु. अस्माकम्, अस्माक अस्माकम्

स. बहु. अस्मासु, अस्मे अस्मासु

युष्मद् शब्द

द्वि. बहुव. युष्मान् युष्माः युष्मान्

तृ. द्वि. युवाभ्याम् युवाभ्याम् युवाभ्याम्

शेष अन्तर अस्मद् शब्द की भाँति होते हैं।

इसी प्रकार लौकिक संस्कृतभाषा में नामिक शब्दरूपों की विविधता में भी कुछ वैदिक प्रत्ययों के अप्रयोग के कारण ह्रास हुआ। इससे लौकिकसंस्कृत के कुछ वर्ग ही अन्तर्हित हो गये। यथा वेद में 'यु' प्रत्यय मात्र कृदन्तीय रूपों का ही निष्पादक न था अपितु नामिक शब्दों से सम्बद्ध तद्धितरूपों का भी साधक था। यज्यु = पवित्र, देवयु = देवभक्त, वाजयु= विजय का इच्छुक। कालान्तर में इस प्रत्यय का प्रयोग अत्यन्त कम हो गया फलतः इसके योग से और भी स्वतंत्र शब्दों के रूप न बन सके। इस वर्ग के कतिपय अवशिष्ट शब्द आज भी प्राप्त होते हैं पर इनकी संख्या बहुत कम है।

यथा – मन्यु=क्रोध, दस्यु = चोर, डाकू।

नामिक शब्दों के प्रकरण में अन्यान्य प्रत्ययों की ऐसी प्रवृत्ति के विविध उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं। लौकिक और वैदिक संस्कृत में शब्द प्रक्रिया में समता की दृ ष्टि से तीन लिङ्ग, वचन, कारक, आदि प्रत्यय आदि के क्षेत्र में एकरूपता है।

ग. धातुरूप

वैदिक साहित्य धातुओं के प्रयोग व प्रत्यय की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। क्रियारूपों की इस विविधता का सङ्केत पाश्चात्त्य विद्वानों ने ग्रीक आदि भाषाओं से तुलना करते हुये किया है। अन्य भाषाओं के अतिरिक्त लौकिक संस्कृत के क्रियारूपों की अपेक्षा वेद में इनकी संख्या अधिक है। धातुओं का ज्ञान सर्वप्रथम वेद में ही उपलब्ध होता है जो कि कालान्तर में अत्यधिक विस्तार को प्राप्त हुआ। वैदिक और लौकिक संस्कृत के क्रियारूपों में परस्पर अधिक साम्य होने पर भी भिन्नता कम नहीं है। पाणिनीय धातुपाठ के अनुसार संस्कृत में लगभग दो हजार धातुओं की गणना हुई है किन्तु सभी के यथावत् रूप प्राप्त नहीं होते।

आधुनिक अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ है कि लगभग आठ सौ धातुओं के ही रूप आजकल मिलते हैं। चार सौ धातुओं का प्रयोग तो लाैकिक और वैदिक दोनों ही भाषाओं में समान हैं किंतु लगभग डेढ़ सौ धातुओं के प्रयोग केवल वैदिक संस्कृत में तथा ढाई सौ धातुओं के रूप केवल लौकिक संस्कृत में ही दृष्टिगोचर होता है।

1. वेद में आत्मनेपद, लकार, उपसर्ग, विकरण आदि का प्रयोग लौकिक भाषा की अपेक्षा कई अंशों में भिन्न तथा अधिक व्यापक है। दोनों को धातु रूपों में मुख्यतः

NOTES

वैदिक संस्कृत   लौकिक संस्कृत

मिनीमसि   मिनीमः

इमसि,   इमः इमः

स्मसि,   स्मः स्मः

2. वैदिक संस्कृत में लोट् लकार मध्यमपुरुष बहुवचन में त, तन, थन तथा तात्प्रत्ययों का प्रयोग मिलता है परन्तु लौकिक संस्कृत में ऐसे रूपों मेंक्रमशः हास ही देखा गया है। जैसे– शृणोत, सुनोतन, (शृणोतन), यतिष्ठन्, कृणुतात्।
3. लकारों की संख्या वेद में एकादश है। (लेट्‌घ लिङ्ग के दोनों भेदों को लेकर) परवर्ती शास्त्रीय संस्कृत में लेट् लकार का सर्वथा अभाव हो   गया। वेद में लेट् लकार संभावना तथा आज्ञा के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। यथा भवाति, पताति, तारिषत्।

    भवाति, भवात् भवातः भवान्

    भवासि, भवाः भवाथः भवाथ

    भवानि, भवा भवाव भवाम

4. संस्कृत के उपर्युक्त दोनों रूपों में पदभेद समान है अर्थात् आत्मनेपद और परस्मैपद (उभयपद भी) दोनों में हैं तथापि कई स्थलों पर लोक में जहाँ आत्मनेपद या जहाँ परस्मैपद रूप बनते हैं, वेद में इसके विपरीत ही पदों का सन्निवेश है।

5 वैदिक रीडर नामक ग्रन्थ में मैक्डॉनल ने कुछ और भी भेदक रूपों की ओर संकेत किया हैं।

अ. जब वाक्य में दो अथवा अधिक कर्त्ता हों तो आवश्यक नहीं कि क्रिया द्विवचन अथवा बहुवचन में ही हो। क्रिया उन कर्ताओं में से किसी एक के अनुरूप हो सकती है।

आ. यदि कर्ताओं के वचन भिन्न–भिन्न हों तो क्रिया का वचन उनमें से किसी भी कर्ता के वचन के अनुरूप हो सकता है।

घ. उपसर्गों का प्रयोग उपसगों के प्रयोग के क्षेत्र में भी वैदिक और लौकिक संस्कृत में विशेष अन्तर है। वेदों में इनका प्रयोग धातुओं से भिन्न है जबकि लौकिक संस्कृ त में क्रियारूपों के पूर्व ही इनका प्रयोग हुआ है। ये उपसर्ग वेद में क्रियारूपों के बाद तथा कई शब्दों के व्यवधान होने पर भी वाक्य में कहीं भी प्रयोग में आये हैं परन्तु लोक में इनके क्रियारूपों के अव्यवहित पूर्व में ही प्रयोग का पालन किया गया है तथा उन्हें आपस में समस्त कर दिया जाता है। इस क्षेत्र में वैदिक और लौकिक संस्कृत में वही भेद है जो होमर की ग्रीक भाषा व परवर्ती (ब्सेंपबंस) ग्रीकभाषा में है।

ड. कृदंत एवं तद्धित प्रत्य्य अन्य विभेदों की ही भाँति वेद और परिनिष्ठित संस्कृत में

NOTES

कतिपय कृदन्तीय व तद्धितीय प्रत्ययों के प्रयोग में अधिकांशतः एकरूपता होते हुये भी कुछ भिन्नतायें भी हैं। लौकिक प्रयोगों में लिये के अर्थ में तुमुन् प्रत्यय या चतुर्थी कारक विभक्ति का प्रयोग विशेषतः ग्राह्य है। कर्तुम् पातुम्, हसितुम् इत्यादि किन्तु इसी अर्थ में वैदिक भाषा में 8—10 प्रत्ययों का विधान है। यथा— से, असे, असेन्, क्से, कसेन्, अध्ये, अध्यैन्, कथ्यै, कध्यैन्, शध्यै, शध्यैन् इत्यादि। इसी प्रकार क्त्वार्थक प्रत्ययों के प्रयोग में भिन्नता है। कुछ वैदिक शब्दों में ल्यप् प्रत्यय के अन्त्य अकार को दीर्घ पाया जाता है, किन्तु लौकिक रूपों में यह प्रवृत्ति नहीं है। यथा आवृत्या निषद्या आदि। त्वा और ल्यप् प्रत्यय के अतिरिक्त वैदिक भाषा में कई अन्य प्रत्यय भी पाये जाते हैं जिनका लौकिकसंस्कृत में अभाव है। त्वाय, त्वीन, त्वी आदि। गत्वाय, दृष्ट्वाय कृत्वी, जनित्वी, पीत्वीनम् आदि। वेद में तुलनावाचक, भाववाचक, परिमाणवाचक, ह्रस्वत्ववाचक तथा अपत्यवाचक तद्धित प्रत्ययो का प्रयोग है। ब्राह्मणग्रन्थों तथा काव्यसूत्रों की तुलना में संहिता भाग में ये प्रत्यय अल्पतर हैं। तद्धित प्रत्ययों का ज्यादा प्रयोग लौकिक संस्कृत में होने लगा। ताति प्रत्यय का प्रायेण प्रयोग वैदिक वाङ्मय में हुआ है। लोक में ऐसे प्रयोग कम पाये जाते हैं। देवताति, सर्वताति, अरिष्टताति।

च. समास प्राचीनतम साहित्य में बड़े—बड़े समासों का प्रयोग प्रायशः नगण्य ही है किन्तु उत्तरवर्ती लौकिक साहित्य में विशेषकर काव्यों में लम्बे समासों की परंपरा उत्तरोत्तर बढ़ती गई। वेद में समासो की संख्या चार हैं। तत्पुरुष, कर्मधारय बहुब्रीहि और द्वन्द्व। द्विगु और अव्ययी भाव समास पाणिनीय व्यवस्था के उपरान्त अधिक प्रचलित हुये। यद्यपि अव्ययीभाव आदि के भी कुछ दृष्टान्त वेदों में उपलब्ध होते हैं पर इन्हें व्यवस्थित रूप देने का श्रेय महर्षि पाणिनि को ही है। इनके अलावा द्विगु समास के भी कतिपय निदर्शन वेदों में प्राप्य हैं। अहरहः दमेदमें, अङ्गादङ्गात्।

वैदिकभाषा में दो या तीन पदों से अधिक का समास मिलना कठिन है जबकि लौकिक संस्कृत में कई पृष्ठों का एक समस्त पद सहज ही उपलब्ध हो जाता है जो साहित्यिक सौन्दर्य वृद्धि का अङ्ग माना गया।

1. शब्दकोष में भेद

शास्त्रीय संस्कृतभाषा में ऐसे अनेक शब्दों का अभाव या अप्रयोग हो गया है जो कि अतिप्राचीन काल में अत्यन्त प्रयोग में आते थे। भाषा वैज्ञानिक अन्वेषणों के परिणामस्वरूप प्रो. टी. बरो ने अपनी पुस्तक 'द संस्कृत लैंग्वेज' में ऐसे अनेक शब्दों का उल्लेख किया है जो कि उनके अनुसार प्राचीन भारत यूरोपीय के हैं तथा वेद में बाहुल्येन उनका प्रयोग हुआ है पर परिनिष्ठित संस्कृत में वे नहीं उपलब्ध होते जैसे—

अत्क = वस्त्र अवेस्ता में अदक

अपस् = कार्य लैटिन में आपुस (व्चने)

अर्वन्त = घोड़ा अवे— अडर्वन्त् = तेज

आघ्र = नीच, निम्न " — आद्र

आपि = मित्र, दोस्त " — एपिआस् =उदार

भृष्टि = भाला " — वरश्ति (Bristle English)

तोक = प्रसव "

तोक्मन् = अंकुर "तओख्मन् = बीज

क्रविष् =कच्चामांस ग्रीक में –क्रअस

इसी प्रकार ईम, विचर्षणी, अवस्तु, उर्णिया, रिक्वन्, उक्थ, ऊति आदि शब्द लौकिक संस्कृत में सर्व था लुप्त हो गये हैं। कुछ ऐसे भी वैदिक शब्द हैं जो कि लौकिक संस्कृत में आकर भिन्न अर्थों के द्योतक बन गये हैं। इसी क्रम में यह भी ज्ञातव्य है कि कुछ वर्ण जो कि वैदिक संस्कृत में व्यवहृत होते थे लौकिक संस्कृत में आने पर, उनमें भिन्नता आ गई। वेद में 'र' वर्ण का आधिक्य है जो कि कई शब्दों में लौकिक संस्कृत में 'ल' वर्ण के रूप में परिवर्तित हो गया है। जैसे– मरुच, रम, रोम, रोहित, प्रभृति शब्द लोक में म्लुच् लभ, लोभ, लोहित आदि के रूप में हो गये हैं। वैदिक गर्भ लौकिक संस्कृत में गृह हो गया। यथा हस्तग्राम का हस्तगृह।

3. ध्वन्यात्मक वैषम्य

भाषीय परिवर्तनों में ध्वन्यात्मक विभेद का स्थान नितान्त महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस दृष्टि से लौकिक और वैदिक संस्कृत की ध्वन्यात्मक विषमताओं का अनुशीलन सबसे उपयोगी तथ्य है। श्रुति परंपरा से कण्ठस्थ कर वैदिक मंत्रों को सुरक्षित रखना तथा विशिष्ट स्वरों से संवलित रखकर उनका उच्चारण करना वैदिक काल की श्लाघ्य परंपरा रही है जो कि वेदों के अध्ययन–अध्यापन में आज भी उसी रूप में अक्षुण्ण है। लौकिक संस्कृत में इस प्रकार की परंपरा का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता। वैदिक संस्कृत की प्रमुख विशेषता स्वरभक्ति के रूप में है। यही कारण है कि वेद में दो प्रकार के रूप प्राप्त होते हैं।

1. स्वरभक्ति सहित 2. स्वरभक्ति रहित। यथा आदि।

ध्वन्यात्मक दृष्टि से कुछ वैभाषिक विशेषताओं को सन्धिप्रक्रिया में स्पष्ट किया जा चुका है। जैसे ड, ढ, के स्थान पर वेदों में छ, छह एवं र के स्थान पर लृ ध्वनि का प्रयोग उनमें अन्यतम है।

4. छंद एवं अलंकारों में भिन्नता

छंद और अलंकार के क्षेत्र में भी वैदिक और लौकिक संस्कृत में पर्याप्त भेद आया है जो कि वैदिक भाषा की अपेक्षा लौकिक भाषा में उत्तरोत्तर विकसित, प्रौढ़ तथा लोकप्रिय हुआ है। वेदों की छंद योजना, मौलिक स्वरूप, संख्या और अभिधान तीनों ही दृष्टिकोणों से लौकिक संस्कृत की तुलना में भिन्न है। वैदिक छंद प्रायः वार्णिक (वर्णों की विशिष्ट संख्या), क्रम से उपनिबद्ध किये गये हैं जबकि लौकिक संस्कृत में ये मात्रिक स्वरूप में विकसित प्रतीत होते हैं। अधिकतर वैदिक मंत्रों की रचना में अधोलिखित सात छंदों का प्रयोग हुआ है। 1. गायत्री, 2. उष्णिक, 3. अनुष्टुप, 4. बृहती, 5. पंक्ति, 6. त्रिष्टुप, 7. जगती। लौकिक छंदों में मुख्यतः अनुष्टुप् मालिनी, इन्द्रवज्रा पेन्द्रवज्रा, उपजाति, स्रग्धरा, शार्दूलविक्रीडित, वंशस्थ आदि के नाम आते हैं। अधिकतर वैदिक मंत्रों के छंदों में आबद्ध होने से वेद का एक नाम छंद स् भी है। वैदिक छंदों में आबद्ध भाग को मंत्र या ऋचा तथा लौकिक छंदों में निबद्धांश को श्लोक कहा जाता है। छंदों की ही भाँति अलंकारों के प्रयोग में भी लौकिक संस्कृत का स्थान महिमामय है। वैदिक संस्कृत में पाँच या छः अलंकारों का वर्णन पाया जाता है जबकि बाद में लौकिक में इनकी संख्या दो सौ के आस पास पहुँच गई। वेदों में

NOTES

उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा का प्राधान्य है। लौकिक भाषा में ये अलंकार दो विभागों में बँट गये थे। 1. शब्दालङ्कार, 2. अर्थालङ्कार। काव्यों में अलंकारों का प्रयोग अत्यन्त उदारता के साथ हुआ है।

6. विषय सामग्री में भेद

प्राचीन भारतीय मान्यता के अनुसार वेद समस्त ज्ञान की शाखाओं की विपुल राशि हैं, वहीं से सभी ज्ञान के विविध विभाग हुए हैं। इनमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के प्रतिपादन होने से इन्हें श्रेय और प्रेय शास्त्र का मूल माना जाता है। वेदों में जहाँ एक ओर विविध यज्ञों का विधान, देवताओं की स्तुतियाँ आचारसंहिता, तथा दार्शनिक विचार भरे पड़े हैं वहीं दूसरी ओर वैज्ञानिक तथ्य, विभिन्न तंत्र – मन्त्रों की आभिचारिक साधना एवं अन्य लोकोपयोगी विषयों का विस्तृत निरूपण प्राप्त होते हैं। इन्हें देखते हुए भी वैदिक साहित्य को धर्म प्रधान साहित्य मानना सङ्गत होगा– परन्तु लौकिक संस्कृत साहित्य का प्रसार सभी दिशाओं में विशाल स्तर पर हुआ है। इसे मुख्यतया लोकवृत्त प्रधान कहा जा सकता है। वैदिक युग में यज्ञयागादि का प्रायोगिक वैशिष्ट्य था जिसमें प्रकृति के प्रतिनिधिभूत देवों की उपासना होती थी परन्तु लौकिक साहित्य में उनकी दार्शनिकता या उपासना की पद्धति में भिन्नता आने लगी। भाषा की दृष्टि से वैदिक साहित्य में कमनीय और प्रसाद शैली में गद्यों का विपुल रूप हमारे समक्ष आता है जबकि परवर्ती युग में पद्यों का साम्राज्य छा गया। वैदिक देवताओं में भी परिवर्तन हुए। इन्द्र, मरुत्, वरुण आदि की उपासना गौण होती गई और ब्रह्मा, विष्णु, महेश का महत्त्व बढ़ा। अर्थ और काम के क्षेत्र में लौकिक साहित्य अधिक अग्रसर रहा यद्यपि दार्शनिक साहित्य का भी विशाल वाङ्मय हमें इसमें उपलब्ध होता है। लौकिक संस्कृत साहित्य में मुख्य विषय हैं– चिकित्सा– शास्त्र, विज्ञान, काव्य, नाटक, पुराणों की कथा, सङ्गीत, कला, दर्शन, काम, वेदाङ्ग इत्यादि।

7. शैलीगत भेद

वैदिक और लौकिक संस्कृत में पार्थक्य बहुत अंशों में दोनों की शैली भेद से है। वैदिक वाङ्मय में रूपक या प्रतीक रूप से अनेक अमूर्त भावनाओं का प्रस्तुतीकरण है परन्तु लौकिक साहित्य में अतिशयोक्ति की ओर अधिक झुकाव है।

पुराणवाङ्मय इसके सुन्दर दृष्टान्त हैं। वैदिक साहित्य में मुख्यतः प्रभुसम्मित उपदेश का आश्रय लिया गया है जबकि लौकिक साहित्य में सुहृद् या कान्तासम्मित उपदेशशैली का ही प्रभाव व्याप्त है। सत्यं वद, धर्म चर, स्वाध्यायान्मा प्रमदः इत्यादि वैदिक वाक्य आज्ञापरक हैं। अवान्तर युग मे कथा, कहानी या साहित्य (काव्य, नाटक) द्वारा ये बातें बतलाई गईं। अधिकांश वैदिक साहित्य के आलोचना से ज्ञात होता है कि इनमें विविध यागानुष्ठानों की विधि आदि तथा देवस्तुतियों को ही केन्द्र बिन्दु माना गया है परन्तु लौकिक संस्कृत के समय में विषय परिवर्तन के साथ ही निरूपण शैली में बहुत अन्तर आ गया। इन उपर्युक्त समताओं और विषमताओं के अतिरिक्त वैदिक मंत्रों की और भी अनेकशः विशेषतायें हैं जो कि उसे अत्यधिक समृद्ध करती हैं।

वैदिक संस्कृत के अनन्तर लौकिक संस्कृत का विकास हुआ। लौकिक संस्कृत के अन्तर्गत वाल्मीकि रामायण, महाभारत, पुराण इत्यादि आते हैं। इसमें गद्य, पद्य, नाटक का समावेश होता है। लौकिक संस्कृत साहित्य अत्यन्त व्यापक है। इसमें कालिदास, भास,

NOTES

अश्वघोष, भारवि, माघ, श्रीहर्ष इत्यादि की रचनाएँ प्रसिद्ध हैं। आज भी लौकिक संस्कृत में विभिन्न विधाओं में रचनाएँ हो रही हैं। वैदिक संस्कृत से लौकिक संस्कृत में कुछ परिवर्तन देखे जाते हैं। वैदिक के कुछ प्रयोग लौकिक में समाप्त हो गए। लौकिक संस्कृत में 48 ध्वनियाँ हैं। लौकिक संस्कृत में पाणिनीय व्याकरण का प्रभाव अधिक हो गया तथा बलाघातात्मक स्वर का प्रयोग होने लगा। लौकिक संस्कृत में संधि नियमों की अनिवार्यता हो गई।

➢ **मध्यकालीन आर्यभाषाएं–पालि–प्राकृत–शौरसेनी–अपभ्रंश–मागधी–अर्धमागधी**

पालि

यह प्राकृत का प्रारम्भिक रूप है जिसका समय 500 ई0 पूर्व के प्रथम शताब्दी के प्रारंभ तक माना गया है। इसकी उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वानों का कहना है कि संस्कृत की उत्पत्ति प्राकृत से हुई है। एक अन्य मत के अनुसार संस्कृ त के समानान्तर, लोकभाषा से इसका उद्‌भवहुआ हैं इसमें प्रथम मन्तव्य अधिक उपयुक्त लगता है।

- **पाली–व्युत्पत्ति**

इसकी व्युत्पति के विषय में विभिन्न विद्वानों द्वारा अपने ढंग से विचार प्रस्तुत किए गए हैं –

1. भिक्षु सिद्धार्थ के अनुसार पाठ झ पालि।
2. भिक्षु जगदीश काश्यप के अनुसार परियाय (बुद्धउपदेश) झपलियाय झ पालि
3. आचार्य विधु शेखर के अनुसार पंक्ति झ पंति झ पंति झ पल्लि झ पालि।
4. डॉ. मेक्स वेलसन के अनुसार पाटिल (पटना) झ(पटना) झ पाडलि झ पालि।

पाली की वशेषताएँ

1. इसमें से ऋ, लृ, ऐ, औ, श, ष, तथा विसर्ग आदि वैदिक ध्वनियाँ लुप्त हो गई हैं।
2. पालि में प्रायः संस्कृत की ए ध्वनि ऐ और ओ ध्वनि औ हो गई हैय यथा–कैलाष झ केलाश, गौतम झ गोतम।
3. इसमें विसर्ग सन्धि नहीं है।
4. पाली में तीनों लिंग हैं।
5. द्विवचन की व्यवस्था नहीं है।
6. इसमें बलाघात का प्रयोग होता है।
7. पाली में परंपरा गत तद्‌भव शब्दों की बहुलता है।

- **प्राकृत**

मध्यकालीन आर्यभाषा ही प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं की द्वितीय अवस्था है। इसका काल 500 ई. पूर्व से 1000 ई. तक माना जाता है। इसे प्राकृतकाल भी कहते हैं। इसके तीन स्तर हैं– प्रथम प्राकृत, द्वितीय प्राकृत एवं तृतीय प्राकृत।

1. प्रथम प्राकृत

इसका काल 500 ई. पूर्व से ईसवी सन् के आरंभ तक माना जाता है। इसके अन्तर्गत पालि और अशोक के अभिलेख आते हैं। प्राकृत भाषा की उत्पत्ति को लेकर विद्वान्

NOTES

एकमत नहीं हैं। इस संबंध में तीन मत उपस्थित किए गए हैं–

1. संस्कृत से प्राकृत की उत्पत्ति हुई है। जैसा कि हेमचन्द्र ने कहा है– अर्थात् संस्कृत मूल है और उससे जो उत्पन्न हुई, उसे प्राकृत कहते हैं। इस मत के अनुसार संस्कृत में रूप परिवर्तन होने से प्राकृत की उत्पत्ति हुई।
2. दूसरा मत यह है कि प्राकृत का ही संस्कार कर संस्कृत का निर्माण हुआ। इसकी पुष्टि स्वयं 'संस्कृत' शब्द से होती है। जिसका संस्कार हुआ हो, वह संस्कृत है। इस मत के समर्थक कहते हैं– प्रकृत्या स्वभावेन सिद्धं प्राकृतम्। अर्थात् जो स्वभावसिद्ध हो, वह प्राकृत है। कहने का तात्पर्य है कि स्वाभाविक, सहज या साधारण भाषा प्राकृत है। उदाहरणस्वरूप–तुलसीदास ने इन्हें कहा है। यहाँ 'प्राकृत' शब्द का प्रयोग उन्होंने साधारण के अर्थ में ही किया है।
3. तीसरा मत यह है कि न तो संस्कृत से प्राकृत उत्पन्न हुई और न प्राकृत से संस्कृत दोनों का पृथक्–पृथक् स्वतंत्र रूप में विकास हुआ। संस्कृत के समानांतर जो जनभाषाएँ थीं, उन्हीं का विकसित रूप प्राकृतें हैं।

1. सिंहदेवमणि के विचार से प्रकृत संस्कृत से प्राकृत का आगमन हुआ–
2. वासुदेव का कहना है कि संस्कृत ही प्राकृत की जननी है।
3. मार्कण्डेय के विचार से प्रकृत का मूल संस्कृत है, इससे जिस भाषा का जन्म हुआ है, उसे प्राकृत कहा जाता है।
4. सिंहदेवमणि के विचार से प्रकृत संस्कृत से प्राकृत का आगमन हुआ–प्रकृते संस्कातात् आगतम वा प्राकृतम।
5. वासुदेव का कहना है कि संस्कृतत ही प्राकृत की जननी है– प्राकृतत्ससय सर्वमेव संस्कृ त योनिः।
6. मार्कण्ड्रेय के विचार से प्राकृत का मूल संस्कृ त है, इससे जिस भाषा का जन्मप हुआ, उसे प्राकृत कहा जाता है– प्रकृतिरू संस्कृततम् तत्र भवं प्राकृतमुच्य ते।
7. लक्ष्मीधर प्राकृत को प्रकृत संस्कृत की विकृति मानते हैं– प्रकृते,
संस्कृ तावास्तुह विकृति प्राकृतीमता।
8. कुछ विद्वान प्राकृत को अकृत्रिम या नैसर्गिक भाषा मानते हैं। इनके अनुसार प्राकृत है और संस्कृत कृत्रिम या सुसंस्कृत अर्थात् प्राकृत का संस्कार ही संस्कृत है। संस्कृत का अर्थ ही है कि संस्कार किया हुआ। कहा भी गया है– प्रकृत्यास स्व भावेन सिद्धम प्राकृतम अर्थात सहज या साधारण भाषा प्राकृत है।
9. कुछ भाषाविदों का कहना है कि न तो संस्कृत से प्राकृत निष्पन्न हुई है और न प्राकृत से संस्कृत वैदिक भाषाकाल तथा संस्कृत काल में जो बोलियाँ साधारण जनता द्वारा प्रयुक्त होती थीं, उन्हीं से प्राकृतों का विकास हुआ।

ऊपर लिखे गये मतों में से अन्तिम विचार (सातवाँ मत) भाषावैज्ञानिक दृष्टि से हुआ है जो अधिक न्याय संगत प्रतीत होता है। प्रथम प्राकृत के रूप में पालि का स्वरूप प्राप्त होता है। पालि शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में हम पहले जान चुके हैं।

2. द्वितीय प्राकृत

NOTES

मध्यकालीन प्राकृत को ही द्वितीय प्राकृत कहते हैं। इसे साहित्यिक प्राकृत भी कहते हैं। प्राकृत भाषा के विषय में सर्वप्रथम भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में निर्देश किया है। सात मुख्य और सात गौण प्राकृतों का भी उल्लेख नाट्यशास्त्र में प्राप्त होता है।

3. तृतीय प्राकृत

तृतीय प्राकृत के अन्तर्गत अपभ्रंश आते हैं। अपभ्रंश में अनेक रचनाएँ प्राप्त होती हैं। अपभ्रंश की प्रमुख विशेषताओं के विषय में हम पहले जान चुके हैं। 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 'महाभाष्य' में मिलता है। भामह, दण्डी आदि ने भी इसका उल्लेख किया है। प्राकृत भाषाओं का ज्ञान मुख्यतः संस्कृत नाटकों एवं जैन साहित्य में प्राप्त होता है।

➢ अवहट्ट– मध्यकालीन आर्यभाषा की अंतिम अवस्था

अवहट्ट शब्द संस्कृत शब्द 'अपभ्रष्ट' का तद्भव रूप है। इस संबंध में एक समस्या यह है कि अपभ्रंश और अवहट्ट दोनों शब्द समानार्थी हैं क्योंकि दोनों ही 'भ्रष्ट भाषा' को व्यक्त करते हैं। इसलिए स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठता है कि क्या अवहट्ट अपभ्रंश से अलग एक स्वतंत्र भाषा है? यह समस्या इसलिए और भी जटिल हो जाती है क्योंकि उस काल के जितने भी कवियों और विद्वानों ने तत्कालीन भाषाओं के नाम गिनाए हैं, उन्होंने या तो अपभ्रंश का नाम लिया है या अवहट्ट का किसी ने भी इन दोनों का नाम एक साथ नहीं लिखा। इससे यह संभावना प्रतीत होने लगी कि ये दोनों नाम एक ही भाषा के हैं, जिनमें से कहीं किसी एक का प्रयोग होता है और कहीं दूसरे का।

आधुनिक भाषावैज्ञानिकों के अनुसंधानों से अब यह साबित हो चुका है कि अवहट्ट केवल एक भाषिक शैली नहीं बल्कि एक स्वतंत्र भाषा है। इस भाषा का काल लगभग नवीं से 11 वीं शताब्दी के बीच स्वीकार किया गया है, यद्यपि साहित्यिक प्रयोग की दृष्टि से यह भाषा चौदहवीं शताब्दी तक दिखाई देती है। संदेशरासक तथा कीर्तिलता इस भाषा से संबंधित दो प्रमुख रचनाएँ हैं। इनके अतिरिक्त 'वर्ण रत्नाकर' और 'प्राकृत पैंगलम' के कुछ अंश, 'बाहुबलि रास' आदि भी इसके स्त्रोतों के रूप में स्वीकार किए जाने वाले ग्रंथ हैं। कीर्तिलता में तो विद्यापति ने स्पष्टतः संस्कृत की तुलना में अवहट्ट को वरीयता देने की बात कही है–

सक्कय बाणी बुहजण भावइ।
पाउअं रस को मम्म नपावइ।
देसिल बअणा सभ जण मिट्ठा।
तं तै सण जंपऔ अवहट्ठा।।

अवहटट की विशेषताएं

1. अवहट्ट में प्रयुक्त होने वाले स्वर निम्नलिखित हैं –

ह्रस्व स्ववर – अ, इ, उ, ए, ऑं

दीर्घ स्ववर – आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ औ

स्पष्ट है कि अपभ्रंश के सभी स्वरों के अतिरिक्त अवहट्ट में दो अतिरिक्त स्वर मिलते हैं – 'ऐ' और 'औ'। संस्कृत में ये दोनों स्वर संध्यक्षर के रूप में थे, तथा इनका उच्चारण 'अइ' तथा 'अउ' के रूप में होता था। अवहट्ट में ये पहली बार सरल स्वर बनकर उभरे,

NOTES

जैसे – बैल, चौड़ा।

2. संस्कृत के शब्दों में 'का प्रयोग बना हुआ था किंतु तद्भव शब्दों मे' के स्थान पर 'अ', 'इ', 'ए' और 'उ' का प्रयोग तेजी से बढ़ने लगा था। यह प्रवृत्ति शुरु तो अपभ्रंश में ही हो गई थी, अवहट्ट में आकर और बढ़ने लगी। उदाहरण के लिए–

पृच्छ–पुच्छ हृदय–हिय

3. अनुनासिकता के संबंध में अपभ्रंश में तीन प्रवृत्तियाँ दिखती थीं। अवहट्ट में उनमें से एक प्रवृत्ति 'अकारण अनुनासिकता' बनी हुई है। उदाहरण के लिए –

   द्यूत–जूँआ निद्रा–निंद ग्रीवा–गींव

4. अवहट्ट की ध्वनि संरचना में एक खास प्रक्रिया दिखती है जिसे 'क्षतिपूरक दीर्घीकरण' कहते हैं। संयुक्त व्यंजनों को सरल करने के लिए अपभ्रंश में दोनों व्यंजनों में से एक के द्वित्वीकरण की जो प्रक्रिया शुरू हुई थी, उसी का अगला चरण 'क्षतिपूरक दीर्घीकरण' है। द्वित्वीकरण की प्रक्रिया में संयुक्त व्यंजनों की जो क्षति हुई, उसकी पूर्ति के रूप में।

➢ अपभ्रंश, अवहट्ठ और पुरानी हिंदी का संबंध

अपभ्रंश, आधुनिक भाषाओं के उदय से पहले उत्तर भारत में बोलचाल और साहित्य रचना की सबसे जीवंत और प्रमुख भाषा (समय लगभग छठी से 12वीं शताब्दी)। भाषावैज्ञानिक दृष्टि से अपभ्रंश भारतीय आर्यभाषा के मध्यकाल की अंतिम अवस्था है जो प्राकृत और आधुनिक भाषाओं के बीच की स्थिति है।

अपभ्रंश के कवियों ने अपनी भाषा को केवल भासा, देसी भासा अथवा गामेल्ल भासा (ग्रामीण भाषा) कहा है, परंतु संस्कृत के व्याकरणों और अलंकारग्रंथों में उस भाषा के लिए प्रायः अपभ्रंश तथा कहीं–कहीं अपभ्रष्ट संज्ञा का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार अपभ्रंश नाम संस्कृत के आचार्यों का दिया हुआ है, जो आपाततः तिरस्कारसूचक प्रतीत होता है। महाभाष्यकार पतंजलि ने जिस प्रकार अपभ्रंश शब्द का प्रयोग किया है उससे पता चलता है कि संस्कृत या साधु शब्द के लोकप्रचलित विविध रूप अपभ्रंश या अपशब्द कहलाते थे। इस प्रकार प्रतिमान से च्युत, स्खलित, भ्रष्ट अथवा विकृत शब्दों को अपभ्रंश की संज्ञा दी गई और आगे चलकर यह संज्ञा पूरी भाषा के लिए स्वीकृत हो गई। दंडी (सातवीं शती) के कथन से इस तथ्य की पुष्टि होती है। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि शास्त्र अर्थात् व्याकरण शास्त्र में संस्कृत से इतर शब्दों को अपभ्रंश कहा जाता है इस प्रकार पालि–प्राकृत–अपभ्रंश सभी के शब्द अपभ्रंश संज्ञा के अंतर्गत आ जाते हैं, फिर भी पालि प्राकृत को अपभ्रंश नाम नहीं दिया गया।

अपभ्रंश शब्द की व्युत्पत्ति पतंजलि आदि विद्वानों ने प्राकृत और अपभ्रंश नामों का प्रयोग समान अर्थ में किया है। परन्तु भरतमुनि का नाट्यशास्त्र प्रथम ऐसी रचना है जिसमें अपभ्रंश का वास्तविक संदर्भ मिलता है (आधुनिक अर्थ में)। वहाँ आभीरों की बोली को, जिसमें –उ का प्रयोग बहुतायत में मिलता है, अपभ्रंश कहा गया है (उस स्थान पर अपभ्रंश के समकक्ष शब्द विभ्रष्ट का प्रयोग है।

दंडी ने इस बात को स्पष्ट करते हुए आगे कहा है कि काव्य में आभीर आदि बोलियों को अपभ्रंश नाम से स्मरण किया जाता है इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता

है कि अपभ्रंश नाम उसी भाषा के लिए रूढ़ हुआ जिसके शब्द संस्कृतेतर थे और साथ ही जिसका व्याकरण भी मुख्यतः आभीरादि लोक बोलियों पर आधारित था। इसी अर्थ में अपभ्रंश पालि–प्राकृत आदि से विशेष भिन्न थी।

अपभ्रंश के संबंध में प्राचीन अलंकारग्रंथों में दो प्रकार के परस्पर विरोधी मत मिलते हैं। एक ओरकाव्यालंकार (रुद्रट) के टीकाकार नमिसाधु (1069ई.) अपभ्रंश को प्राकृत कहते हैं तो दूसरी ओर भामह (छठी शती), दंडी (सातवीं शती) आदि आचार्य अपभ्रंश का उल्लेख प्राकृत से भिन्न स्वतंत्र काव्यभाषा के रूप में करते हैं। इन विरोधी मतों का समाधान करते हुए याकोगी (भविस्सयत्त कहा की जर्मन भूमिका, अंग्रेजी अनुवाद, बड़ौदा ओरिएंटल इंस्टीटयूट जर्नल, जून 1955) ने कहा है कि शब्दसमूह की दृष्टि से अपभ्रंश प्राकृत के निकट है और व्याकरण की दृष्टि से प्राकृत से भिन्न भाषा है।

इस प्रकार अपभ्रंश के शब्दकोश का अधिकांश, यहाँ तक कि नब्बे प्रतिशत, प्राकृत से गृहित है और व्याकरणिक गठन प्राकृतिक रूपों से अधिक विकसित तथा आधुनिक भाषाओं के निकट है। प्राचीन व्याकरणों के अपभ्रंश संबंधी विचारों के क्रमबद्ध अध्ययन से पता चलता है कि छह सौ वर्षों में अपभ्रंश का क्रमशः विकास हुआ। भरत (तीसरी शर्त) ने इसे शाबर, आभीर, गुर्जर आदि की भाषा बताया है। चंड (छठी शती) ने प्राकृतलक्षणम में इसे विभाषा कहा है और उसी के आसपास बलभी के राज ध्रुवसेन द्वितीय ने एक ताम्रपट्ट में अपने पिता का गुणगान करते हुए उनहें संस्कृत और प्राकृत के साथ ही अपभ्रंश प्रबंधरचना में निपुण बताया है। अपभ्रंश के काव्यसमर्थ भाषा होने की पुष्टि भामह और दंडी जैसे आचार्यों द्वारा आगे चलकर सातवीं शती में हो गई। काव्यमीमांसाकार राजशेखर (दसवीं शती) ने अपभ्रंश कवियों को राजसभा में सम्मानपूर्ण स्थान देकर अपभ्रंश के राजसम्मान की ओर संकेत किया तो टीकाकार पुरुषोत्तम (11वीं शती) ने इसे शिष्टवर्ग की भाषा बतलाया। इसी समय आचार्य हेमचंद्र ने अपभ्रंश का विस्तृत और सोदाहरण व्याकरण लिखकर अपभ्रंश भाषा के गौरवपूर्ण पद की प्रतिष्ठा कर दी। इस प्रकार जो भाषा तीसरी शती में आभीर आदि जातियों की लोकबोली थी वह छठी शती से साहित्यिक भाषा बन गई और 11 शती तक जाते–जाते शिष्टवर्ग की भाषा तथा राजभाषा हो गई।

- **भौगोलिक विस्तार**

अपभ्रंश के क्रमशः भौगोलिक विस्तारसूचक उल्लेख भी प्राचीन ग्रंथों में मिलते हैं। भरत के समय (तीसरी शती) तक यह पश्चिमोत्तर भारत की बोली थी, परंतु राजशेखर के समय (दसवीं शती) तक पंजाब, राजस्थान और गुजरात अर्थात् समूचे पश्चिमी भारत की भाषा हो गई। साथ ही स्वयंभू, पुष्पदंत, धनपाल, कनकामर, सरहपा, कन्हपा आदि की अपभ्रंश रचनाओं से प्रमाणित होता है कि उस समय यह समूचे उत्तर भारत की साहित्यिक भाषा हो गई थी।

वैयाकरणों ने अपभ्रंश के भेदों की भी चर्चा की है। मार्कंडेय (१७वीं शती) के अनुसार इसके नागर, उपनागर और ब्राचड तीन भेद थे और नमिसाधु (११वीं शती) के अनुसार उपनागर, आभीर और ग्राम्य। इन नामों से किसी प्रकार के क्षेत्रीय भेद का पता नहीं चलता। विद्वानों ने आभीरों को व्रात्य कहा है, इस प्रकार ब्राचड का संबंध व्रात्य से माना

NOTES

जा सकता है। ऐसी स्थिति में आभीरी और ब्राचड एक ही बोली के दो नाम हुए। क्रमदीश्वर (१३वीं शती) ने नागर अपभ्रंश और शसक छंद का संबंध स्थापित किया है। शसक छंदों की रचना प्रायः पश्चिमी प्रदेशों में ही हुई है। इस प्रकार अपभ्रंश के सभी भेदोपभेद पश्चिमी भारत से ही संबद्ध दिखाई पड़ते हैं। वस्तुतः साहित्यिक अपभ्रंश अपने परिनिष्ठित रूप में पश्चिमी भारत की ही भाषा थी, परंतु अन्य प्रदेशों में प्रसार के साथ–साथ उसमें स्वभावतः क्षेत्रीय विशेषताएँ भी जुड़ गईं। प्राप्त रचनाओं के आधार पर विद्वानों ने पूर्वी और दक्षिणी दो अन्य क्षेत्रीय अपभ्रंशों के प्रचलन का अनुमान लगाया है।

➢ अपभ्रंश की विशेषताएँ

1. अपभ्रंश भाषा का ढाँचा लगभग वही है जिसका विवरण हेमचंद्र के सिद्धहेमशबदानुशासनम् के आठवें अध्याय के चतुर्थ पाद में मिलता है।
2. ध्वनिपरिर्वान की जिन प्रवृत्तियो के द्वारा संस्कृत शब्दों के तद्भव रूप प्राकृत में प्रचलित थे, वही प्रवृतियाँ अधिकांशतः अपभ्रंश शब्दसमूह में भी दिखाई पड़ती है, जैसे अनादि और असंयुक्त क, ग, च, ज, त, द, प, य और व का लोप तथा इनके स्थान पर उद्वृत स्वर अ अथवा य श्रुति का प्रयोग। इसी प्रकार प्राकृत की तरह (क्त, क्व, द्व) आदि संयुक्त व्यंजनों के स्थान पर अपभ्रंश में भी त्त, क्क, द्द आदि द्वित्तव्यंजन होते थे। परंतु अपभ्रंश में क्रमशः समीतवर्ती उद्वृत स्वरों को मिलाकर एक स्वर करने और द्वित्तव्यंजन को सरल करके एक व्यंजन सुरक्षित रखने की प्रवृत्ति बढ़ती गई।
3. अपभ्रंश में प्राकृत से कुछ और विशिष्ट ध्वनिपरिवर्तन हुए। अपभ्रंश कारक रचना में विभक्तियाँ प्राकृत की अपेक्षा अधिक घिसी हुई मिलती हैं, जैसे तृतीया एकवचन में एण की जगह एं और षष्ठी एकवचन में स्स के स्थान पर ह।
4. अपभ्रंश निर्विभक्तिक संज्ञा रूपों से भी कारकरचना की गई। सहुं, केहिं, तेहिं, देसि, तणेण, केरअ, मज्झि आदि परसर्ग भी प्रयुक्त हुए।
5. कृदंतज क्रियाओं के प्रयोग की प्रवृत्ति बढ़ी और संयुक्त क्रियाओं के निर्माण का आरंभ हुआ। संक्षेप में अपभ्रंश ने नए सुबंतों और तिङंतों की सृष्टि की।

➢ अपभ्रंश साहित्य

अपभ्रंश साहित्य की प्राप्त रचनाओं का अधिकांश जैन काव्य है अर्थात् रचनाकार जैन थे और प्रबंध तथा मुक्तक सभी काव्यों की वस्तु जैन दर्शन तथा पुराणों से प्रेरित है। सबसे प्राचीन और श्रेष्ठ कवि स्वयंभू (नवीं शती) हैं जिन्होंने राम की कथा को लेकर पउम–चरिउ तथा महाभारत की रचना की है। दूसरे महाकवि पुष्पदंत (दसवीं शती) हैं जिन्होंने जैन परंपरा के त्रिषष्ठि शलाकापुरुषों का चरित महापुराण नामक विशाल काव्य में चित्रित किया है। इसमें राम और कृष्ण की भी कथा सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त पुष्पदंत ने णायकुमारचरिउ और जसहरचरिउ जैसे छोटे–छोटे दो चरितकाव्यों की भी रचना की है। तीसरे लोकप्रिय कवि धनपाल (दसवीं शती) हैं जिनकी भविस्सयत्त कहा श्रुतपंचमी के अवसर पर कही जानेवाली लोकप्रचलित प्राचीन कथा है। कनकामर मुनि (११वीं शती) का करकंडुचरिउ भी उल्लेखनीय चरितकाव्य है।

अपभ्रंश का अपना दुलारा छंद दोहा है। जिस प्रकार प्राकृत को गाथा के कारण

NOTES

गाहाबंध कहा जाता है, उसी प्रकार अपभ्रंश को दोहाबंध। फुटकल दोहों में अनेक ललित अपभ्रंश रचनाएँ हुई हैं, जो इंदु (आठवीं शती) का परमात्मप्रकाश और योगसार, रामसिंह (दसवीं शती) का पाहुड दोहा, देवसेन (दसवीं शती) का सावयधम्म दोहा आदि जैन मुनियों की ज्ञानोपदेशपरक रचनाएँ अधिकाशंतः दोहा में हैं। प्रबंधचिंतामणि तथा हेमचंद्ररचित व्याकरण के अपभ्रंश दोहों से पता चलता है कि शृंगार और शौर्य के ऐहिक मुक्तक भी काफी संख्या में लिखे गए हैं। कुछ रासक काव्य भी लिखे गए हैं जिनमें कुछ तो उपदेश रसायन रास की तरह नितांत धार्मिक हैं, परंतु अद्दहमाण (13वीं शती) के संदेशरासक की तरह शृंगार के सरस रोमांस काव्य भी लिखे गए हैं।

जैनों के अतिरिक्त बौद्ध सिद्धों ने भी अपभ्रंश में रचना की है जिनमें सरहपा, कन्हपा आदि के दोहाकोश महत्त्वपूर्ण हैं। अपभ्रंश गद्य के भी नमूने मिलते हैं। गद्य के टुकड़े उद्योतन सूरि (सातवीं शती) की कुवलयमाल कहा में यत्रतत्र बिखरे हुए हैं।

नवीन खोजों से जो सामग्री सामने आ रही है, उससे पता चलता है कि अपभ्रंश का साहित्य अत्यंत समृद्ध है। डेढ़ सौ के आसपास अपभ्रंश ग्रंथ प्राप्त हो चुके हैं जिनमें से लगभग पचास प्रकाशित हैं।

इकाई – 5 पुरानी हिन्दी अवहट्ट हिन्दी तथा विभिन्न भाषाओं का विकास

➢ आधुनिक आर्य भाषाएं–वर्गीकरण

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विकास अपभ्रंश के विभिनन रूपों से हुआ माना जाता है। इस संदर्भ में अपभ्रंश के सात रूप उल्लेखनीय हैं।

1. शौरसेनी : पश्चिमी हिंदी, गुजराती, राजस्थानी
2. महाराष्टी : मराठी
3. मागधी : बिहारी, बंगला, उड़ीया, असमी
4. अर्ध मागधी : पूर्वी हिंदी
5. पैशाची : लहंदा, पंजाबी
6. ब्राचड़ : सिन्धी
7. खस : पहाड़ी

➢ शौरसेनी

शौरसैनी उस प्राकृत भाषा का नाम है जो प्राचीन काल में मध्यप्रदेश में प्रचलित थी और जिसका केंद्र शूरसेन सैनी अर्थात् मथुरा और उसके आसपास का प्रदेश था। सामान्यत : उन समस्त लोकभाषाओं का नाम प्राकृत था जो मध्यकाल (ई. पू. 600 से ई. सन् 1000 तक) में समस्त उत्तर भारत में प्रचलित हुईं। मूलतरू प्रदेशभेद से ही वर्णोच्चारण, व्याकरण तथा शैली की दृष्टि से प्राकृत के अनेक भेद थे, जिनमें से प्रधान थे– पूर्व देश की मागधी एवं अर्ध मागधी प्राकृत, पश्चिमोत्तर प्रदेश की पैशाची प्राकृत तथा मध्यप्रदेश की शौरसेनी प्राकृत। मौर्य सम्राट् अशोक से लेकर अलभ्य प्राचीनतम लेखों तथा साहित्य में इन्हीं प्राकृतों और विशेषतरू शौरसेनी का ही प्रयोग पाया जाता है। भरत नाट्यशास्त्र में विधान है कि नाटक में शौरसेनी प्राकृत भाषा का प्रयोग किया जाए अथवा प्रयोक्ताओं के इच्छानुसार अन्य देशभाषाओं का भी (शौरसेनं समाश्रत्य भाषा कार्या तु नाटके, अथवा छंदतरू कार्या देशभाषाप्रयोक्तृभि – नाट्यशास्त्र १८,३४)। प्राचीनतम नाटक अश्वघोषकृत हैं (प्रथम शताब्दी ई.) उनके जो खंडावशेष उपलब्ध हुए हैं उनमें मुख्यतरू शौरसेनी तथा कुछ

NOTES

अंशों में मागधी और अर्धमागधी का प्रयोग पाया जाता है।इसका प्रयोग तीसरी शताब्दी से मिलने लगता है। प्राकृतों का संस्कृत नाटकों में अश्वघोष के नाटकों एवं शूद्रक के मृच्छकटिकम् में अधिक व्यवहार हुआ है। पिशल एवं कीथ आदि विद्वानों के मतानुसार मृच्छकटिकम् की रचना नाट्यशास्त्र में विविध प्राकृतों के प्रयोग के नियमों के उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए हुई। इस नाटक के टीकाकार के अनुसार नाटक में चार प्रकार के प्राकृतों का प्रयोग किया जाता हैः 1. शौरसेनी 2. अवंतिका 3. प्राच्या 4. मागधी।

इस नाटक में 11 पात्रों ने शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग किया है। इन पात्रों में सूत्रधार, नटी, नायिका, ब्राह्मणी स्त्री, श्रेष्ठी तथा इनके परिचारक एवं परिचारिकाएँ हैं। नाटक के 2 अप्रधान पात्रों ने अवंतिका का प्रयोग किया है। प्राच्या का प्रयोग केवल एक पात्र 'विदुषक' ने किया है। नाटक के 6 पात्रों ने मागधी का प्रयोग किया है। इन पात्रों में कुंज, चेटक और ब्राह्मण–पुत्र शामिल हैं। शकारि, चांडाली एवं ढक्की जैसे गौण प्राकृत रूपों का प्रयोग एक–दो पात्रों के द्वारा ही हुआ है। नाटक में शौरसेनी तथा इसके बाद मागधी प्राकृत का ही अधिक प्रयोग हुआ है।

जैन साहित्य की दृष्टि से शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग दिगम्बर आम्नाय के आचार्य गुणधर एवं आचार्य धरसेन के ग्रंथों में हुआ है। ये ग्रंथ गद्य में हैं। आचार्य धरसेन का समय सन् 87 ईसवीं के लगभग मान्य है। आचार्य गुणधर का समय आचार्य धरसेन के पूर्व माना जाता है। आचार्य गुणधर की रचना कसाय पाहुड सुत्त तथा आचार्य धरसेन एवं उनके शिष्यों आचार्य पुष्पदंत तथा आचार्य भूतबलि द्वारा रचित षटखंडागम है जिनमें प्रथम शताब्दी के लगभग की शौरसेनी प्राकृत का प्रयोग हुआ है।

➢ शौरसेनी की विशेषताएँ

1. शौरसेनी में दो स्वरों के मध्य संस्कृत के अघोष – त् एवं – थ् सघोष हो जाते हैं अर्थात् त् झ द् और थ् झ ध् हो जाते हैं। भवति झ होदि ।
2. क्ष झ क्ख । चक्षु झ चक्खुध् इक्षु झ इक्खुध् कुक्षि झ कुक्खि ।
3. 'य' प्रत्यय का 'ईअ' हो जाता है। यथा संस्कृत 'गम्यते' का रूप 'गमीअदि' हो जाता है।

➢ अपभ्रंश

इसका शाब्दिक अर्थ है– विकृत या भ्रष्ट। इसका प्राचीनतम रूप भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में मिलता है। कालिदास के विक्रमोर्वशीय नाटक के चतुर्थ अंक में अपभ्रंश के कुछ पद मिलते हैं। अपभ्रंश में अनेक महत्वपूर्ण रचनाएँ हुई हैंय यथा– विद्यापति कृत कीर्तिलता, अद्दहमाण कृत संदेश–रासक आदि। इसका समय 500 ई. से 1000 ई. तक माना जाता है, किन्तु इसमें कुछ एक रचनाएँ 14वीं और 15वीं शताब्दी तक होती रही हैं।

➢ अपभ्रंश की विशेषताएँ

1. ऋ ध्वनि लेखन में थी, उच्चारण में लुप्त हो चुकी थी।
2. श, ष के स्थान पर प्रायः स का प्रयोग होता है।
3. इसमें उ ध्वनि की बहुलता हैय यथा– जगुझएक्कुझ कारणु आदि।
4. म के स्थान पर वँ ध्वनि होती हैय यथा– कमल झ कँवल।

5. क्ष का क्ख हो जाता हैय यथा– पक्षी झ पक्खी।
6. य ध्वनि ज हो जाती हैय यथा दृ यमुनाझ जमुना, युगल झ जुगल।
7. नपुंसक लिंग और द्विवचन लुप्त हो चुके हैं।
8. इसमें तद्‌भव शब्दों की बहुलता मिलती है।

➢ मागधी

मगही का विकास श्मागधीश शब्द से हुआ है। ध्वनि परिवर्तन के कारण मागधी झ मागही झ मगही। आद्य अक्षर में स्वर संकोच होने के कारण मा झ म के रुप में विकसित हुआ है। यहां यह प्रश्न उपस्थित होता है कि मगही भाषा का विकास मागधी (पालि) अथवा नाटकों में प्रयुक्त मागधी प्राकृत से हुआ अथवा मगध जनपद में बोली जाने वाली किसी अन्य भाषा से। जहां तक नाटकों में प्रयुक्त होने वाली मागधी प्राकृत का सम्बन्ध है उससे मगही का विकास नहीं माना जा सकता है क्योंकि मागधी में र का ल और स का श हो जाता है। जबकि मगही में र और ल तथा स आदि ध्वनियों का स्वतन्त्र अस्तित्त्व है। मगही में श का प्रयोग ही नहीं होता है। मागधी में ज का य हो जाता है, किन्तु मगही में यह ज के रुप में ही मिलता है, यथा – जन्म झ जनम, जल झ जल। मागधी में अन्वर्वती च्छ का श्च हो जाता है जबकि मगही में छ का छ ही रहता है, यथा – गच्छ झ गाछ, पुच्छ झ पूंछ, गुच्छक झ गुच्छा। मागधी में क्ष का श्क हो जाता है जबकि मगही में क्ष का ख हो जाता है, यथा – पक्ष झ पक्ख झ पख, पंख, क्षेत्र झ खेत्त झ खेत। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है मागधी प्राकृत से मगही का विकास नहीं माना जा सकता है। पालि जिसे मागधी कहते हैं, उसमें मगही के अनेक शब्द मिलते हैं, यथा – निस्सेनी झ निसेनी, गच्छ झ गाछ, रुक्ख झ रुख, जंखणे झ जखने, तंखणे झ तखने, कंखणे झ कखने, कुहि, कहं झ कहां, जहि, जहीं झ जहां आदि।

किन्तु पालि और मगही की तुलनात्मक विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि पालि (मागधी) से भी मगही विकसित नहीं हुई है। सुनीति कुमार चटर्जी ने पश्चिमी मागधी अपभ्रंश से बिहारी बोलियों को विकसित माना है। दोहों की भाषा और मगही भाषा की तुलना से यह तथ्य सुनिश्चित होता है कि मगही सिद्धों की भाषा से विकसित हुई है। सर्वनाम में सरहपाद की भाषा में जहां को, जे का प्रयोग होता है, वही मगही के, जे का प्रयोग प्रचलित है। चार, चउदह, दस (दह) आदि संख्यावाचक शब्दों का प्रयोग मगही के समान है। सामयिक परिवर्तन के कारण प्रयोग मगही तथा सिद्धों की मगही में सामयिक परिवर्तन दृष्टिगत होता है किन्तु दोनों की प्रवृत्ति एवं प्रकृति में एकरुपता है। 'मागधी' मगध के आस–पास की मूल भाषा है। सामान्यतरू कुछ लोग मागधी का सम्बन्ध महाराष्ट्र से मानते हैं। मागधी और लास्सन महाराष्ट्री को एक मानते थे। इसकी अपनी कोई स्वतंत्र रचना नहीं है।निम्न श्रेणी के पात्र जो संस्कृत नाटकों में होते हैं वो इसका प्रयोग करते हैं। अश्वघोष को इसका प्राचीनतम रूप मानते हैं।

➢ मागधी की विशेषताएं

मागधी की कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. इसमें स्, ष् के स्थान पर मिलता है (सप्यझशत, पुरुषझपुलिश)।

NOTES

2. इसमें 'र' का सर्वत्र श्लश हो जाता है (राजाझलाजा)।
3. प्रथमा एकवचन में संस्कृत–अरू के स्थान पर यहाँ–ए मिलता है (देवरूझदेवे, सरूझशे)।

➢ अर्धमागधी

नाम से ही स्पष्ट है कि इस भाषा का क्षेत्र शौरसेनी और मागधी के बीच में रहा इसलिए इसे अर्धमागधी कहा गया। इसका प्रचलन प्राचीन कोसल के आसपास रहा। अर्धमागधी साहित्य में श्वेतांबर जैनियों के पैंतालीस आगम ग्रंथ शामिल हैं। जिनमें से बारह अंगग्रंथों की रचना महावीर के गणधरों द्वारा की गई और शेष आगम–ग्रंथों की रचना श्रुतज्ञानी और दशपुरी स्थविरों द्वारा की गई। महावीर के निर्वाण के 980 वर्ष बाद उनका उपदेश वल्लभी में देवर्धिगनी के नेतृत्व में लिखा गया था। अर्धमागधी प्राचीन काल में मगध की भाषा थी। मागधी और शौरसेनी प्राकृतों का वह मिश्रित रूप, जो कौशल में प्रचलित था। महावीर और बुद्ध के समय में यही कौशल की लोक–भाषा थी, अतः इसी में उनके धर्मोपदेश भी हुए थे। लोकभाषा होने के कारण यह आसानी से स्त्री, बालक, वृद्ध और अनपढ़ लोगों की समझ में आ सकती थी। आगे चलकर महावीर के शिष्यों ने अर्धमागधी में महावीर के उपदेशों का संग्रह किया जो आगम नाम से प्रसिद्ध हुए। समय–समय पर जैन आगमों की तीन वाचनाएँ हुईं। अंतिम वाचना महावीरनिर्वाण के 1,000 वर्ष बाद, ईसवी सन्ध की छठी शताब्दी के आरंभ में, देवर्धिगणि क्षमाक्षमण के अधिनायकत्व में वलभी (वला, काठियावाड़) में हुई जब जैन आगम वर्तमान रूप में लिपिबद्ध किए गए। इसी बीच जैन आगमों में भाषा और विषय की दृष्टि से अनेक परिवर्तन हुए, जो स्वाभाविक था। इन परिवर्तनों के होने पर भी आचारांग, सूत्रकृतांग, उत्तराध्ययन, दशैवकालिक आदि जैन आगम पर्याप्त प्राचीन और महत्वपूर्ण हैं। ये आगम श्वेतांबर जैन परंपरा द्वारा ही मान्य हैं, दिगंबर जैनों के अनुसार ये लुप्त हो गए हैं। मौर्य सम्राट अशोक के पूर्वी शिलालेख भी इसी भाषा में अंकित हुए थे। आजकल की पूर्वी हिंदी अर्थात् अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी आदि बोलियाँ इसी से निकली है। अर्धमागधी शब्द का कई तरह से अर्थ किया जाता है–

1. जो भाषा मगध के आधे भाग में बोली जाती हो, जिसमें मागधी भाषा के कुछ लक्षण पाए जाते हों, जैसे पुल्लिंग में प्रथमा के एकवचन में एकारांत रूप का होना (जैसे धम्मे)।
2. हेमचंद्र आचार्य ने अर्धमागधी को आर्ष प्राकृत कहा है।
3. अर्द्ध मागधी की स्थिति मागधी और शौरसेनी प्राकृतों के बीच है। इसलिए उसमें दोनों की विशेषताएँ पायी जाती हैं।
4. इस भाषा का महत्व जैन साहित्य के कारण अधिक है।
5. आगमों के उत्तरकालीन जैन साहित्य की भाषा को अर्धमागधी न कहकर प्राकृत कहा गया है। इससे यही सिद्ध होता है कि उस समय मगध के बाहर भी जैन धर्म का प्रचार हो गया था।

➢ अर्धमागधी की विशेषताएं

1. भाषाविज्ञान की परिभाषा में अर्धमागधी मध्य भारतीय आर्य परिवार की भाषा है, इस

परिवार की भाषाएँ प्राकृत कही जाती हैं।

2. अर्ध मागधी में 'र' एवं 'ल' दोनों का प्रयोग होता है। इसमें दन्त्य का मूर्धन्य हो जाता है– स्थित झ ठिप।
3. इस भाषा में ष, श, स् में से केवल स् का प्रयोग होता है तथा अनेक स्थानों पर स्पर्श व्यंजनों का लोप होने पर 'य' श्रुति का आगम हो जाता है। सागर झ सायर कृत झ कयं । इस नियम का अपवाद है कि 'ग' व्यंजन का सामान्यतः लोप नहीं होता।
4. अर्ध–मागधी में कर्ता कारक एक वचन के रूपों की सिद्धि मागधी के समान एकारान्त तथा शौरसेनी के समान ओकारान्त दोनों प्रकार से होती है।
5. मध्य भारतीय आर्य परिवार की भाषा होने के कारण अर्धमागधी संस्कृत और आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

NOTES

➢ हिंदी का भौगोलिक विस्तार

भाषा भूगोल, मानव भूगोल की एक प्रमुख शाखा है। इसमें भाषा के प्रयोग, भाषाओं और बोलियों के भौगोलिक विस्तार, उनके विकास, और उनके राजनीतिक निहितार्थों का अध्ययन किया जाता है। भाषा भूगोल में भाषाओं के भौगोलिक क्षेत्र विस्तार, उनके विकास या ह्रास के इतिहास का अध्ययन किया जाता है। साथ ही, भाषाओं के विशिष्ट अभिलक्षणों के अंतरों, विभिन्नताओं, और असमानताओं का भी विवरण प्रस्तुत किया जाता है। भारत में मूल रूप से बिहार, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली आदि को हिंदी क्षेत्र कहा जाता है। इसके अतिरिक्त भारत के लगभग सभी प्रदेशों में हिंदी का प्रचलन दिन प्रति दिन बढ़ता ही जा रहा है। विदेशों में नेपाल, वर्मा, लंका, मॉरिशस, सूरीनाम, दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका, खाड़ी देशों में भी हिंदी का पर्याप्तद रूप से प्रचलन है। हिंदी खड़ीबोली से विकसित है, लेकिन अलग–अलग क्षेत्रों में इसकी बोली में थोड़ी–बहत भिन्नता है। प्रस्तुहत इकाई में हिंदी भाषा तथा उसकी बोलियों के भौगोलिक क्षेत्र का विवेचन किया जा रहा है।

➢ हिंदी की उपभाषाएं

सामान्यदत : भारत में हिंदी की कुल 17 बोलियां या उपभाषाएं हैं, जिनमें अवधी, ब्रजभाषा, कन्नौजी, बुंदेली, बघेली, हड़ौती, भोजपुरी, हरयाणवी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, नागपुरी, मैथिली, खोरठा, पंचपरगनिया, कुमाउँनी, मगही आदि प्रमुख हैं। इनमें से कुछ में अत्यंत उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना हुई है। ऐसी बोलियों में ब्रजभाषा और अवधी प्रमुख हैं। ये बोलियाँ हिंदी की विविधता हैं और उसकी शक्ति भी। वे हिंदी की जड़ों को गहरा बनाती हैं। हिंदी की बोलियाँ और उन बोलियों की उपबोलियाँ हैं, जो अपने में एक बड़ी परंपरा, इतिहास, सभ्यता को समेटे हुए हैं।

प्रयोग एवं प्रलचन की दृष्टि से हिंदी की बोलियों को अध्ययन की सुविधा हेतु पाँच भागों में बाँटा गया है– (1) पूर्वी, (2) पश्चिमी, (3) राजस्थानी, (4) बिहारी और (5) पहाड़ी हिंदी।

1. पूर्वी हिंदी

माड्यूल – 3 हिन्दी भाषा के विभिन्न रूप

इकाई– 6 हिन्दी भाषा के विभिन्न रूप एक परिचय

पूर्वी हिंदी की तीन शाखाएँ हैं– 1. अवधी, 2. बघेली और 3. छत्तीसगढ़ी। अवधी अर्धमागधी प्राकृत की परंपरा में है। यह अवध में बोली जाती है। इसके दो भेद हैं– पूर्वी अवधी और पश्चिमी अवधी। अवधी को बैसवाड़ी भी कहा जाता है। तुलसी कृत रामचरितमानस में पश्चिमी अवधी मिलती हैं। जायसी के पदमावत की रचना पूर्वी अवधी में हुई है।

➢ पूर्वी–हिंदी

पूर्वी हिंदी का विकास अर्धमागधी अपभ्रंश से हुआ है। पश्चिमी हिंदी क्षेत्र के पूर्व में होने से इसी पूर्वी हिंदी का नाम दिया गया है। इसकी कुछ विशेषताएँ पश्चिमी हिंदी से मिलती हैं, जो कुछ बिहारी वर्ग की भाषाओं से। इसे तीन बोलियों–अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ में विभक्त करते हैं।

(क) अवधी

यह पूर्वी हिंदी की प्रमुख बोली है। अवध (अयोधा) क्षेत्र की भाषा होने के कारण इसे अवधी कहते हैं। प्राचीन काल में अवध को ''कोशल'' भी कहा जाता था, इसलिए इसे कोसली भी कहते हैं। विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण इसे तीन उपवर्गों में विभक्त करते हैं। इसके क्षेत्र इस प्रकार हैं–

1. पूर्वी अवधी

   फैजाबाद, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, मिर्जापुर गोंडा।

2. केंद्रीय अवधी

   रायबरेली, बाराबंकी।

3. पश्चिमी अवधि

लखनऊ, सीतापुर, उन्नाव, फतेहपुर, खीरी लखीमपुर। अवधी में साहित्य तथा लोक–साहित्य की परम समृद्ध परम्परा है। ठेठ तथा साहित्यिक अवधी में उन्नत साहित्य की रचना हुई है। मुल्लादाउद, कुतुबन, मलिक मुहम्मद जायसी, तुलसीदास आदि अवधी के प्रमुख कवि हैं।

अवधी को बैसवाड़ी भी कहते हैं। तुलसी के रामचरितमानस में अधिकांशतरू पश्चिमी अवधी मिलती हैं और जायसी के पदमावत में पूर्वी अवधी।

चंदायन (1370)– मुल्ला दाऊद, हरिचरित (1400 ई. के बाद) दृलालदास, मधुमालती (1545–) मंझन, जानकी मंगल, पार्वती मंगल (पश्चिमी अवधी)– तुलसी, रामचरितमानस (1576) (बैसवाड़ी अवधी) – तुलसीदास, अवध विलास–लालदास, सियाराम रसमंजरी– जानकी चरण, पुहुपावती (1669 ई.)– दुखहरन दास, पुहुपावती (1725)– हुसैन अली, युसूफ जुलेखा– (1790) शेख निसार, नूरजहाँ (1905)– ख्वाजा अहमद, माया प्रेम रस (1915)– शेख रहीम, प्रेम दर्पण (1917)– कवि नसीर,रामध्यान मंजरी– अग्रदास आदि अवधी की प्रसिद्ध रचनाएं हैं।

अवधी की विशेषताएँ

- अवधी बोली में 'ऐ' का उच्चारण 'अइ' और 'औ' का उच्चारण 'अउ' रूप में होता है, जैसे, 'ऐसा' की जगह 'अइसा', 'औरत' की जगह 'अउरत'।
- अवधी में अल्पप्राण की जगह महाप्राण ध्वनियों का प्रयोग होता है, जैसे– पेड़ की

जगह फेड़, पुनः की जगह फुन।

- अवधी में 'ए', 'ओ' के ह्रस्व और दीर्घ दोनों रूप तथा स, श, ष के स्थान पर 'स' का प्रयोग।
- अवधी बोली में संज्ञा के तीन रूप मिलता है, जैसे— घोर (घोड़ा), घोरवा, घरउनाय कुत्ता, कुतवा, कुतउना।

NOTES

(ख) बघेली

बघेली बघेलखंड में प्रचलित है। यह अवधी का ही एक दक्षिणी रूप है। बघेली या बाघेली, अवधी की एक बोली है जो भारत के बघेलखंड क्षेत्र में बोली जाती है। यह मध्य प्रदेश के रीवा, सतना, सीधी, शहडोल, उमरिया, अनूपपुर, सिंगरौली (वैढ़न), मऊगंज एवं मैहर जिलों मेंय उत्तर प्रदेश के चित्रकूट—कर्वी (मानिकपुर क्षेत्र), प्रयागराज (शंकरगढ़ क्षेत्र) जिलों में तथा छत्तीसगढ़ के बिलासपुर, गौरेल्ला—पेनड्रा—मरवाही, कोरिया, मनेंद्रगढ़—चिरमिरी— भरतपुर आदि जिलों में बोली जाती है। इसे 'बघेलखण्डी', 'रिमही' और 'रिवई', 'विन्ध्य प्रदेश की भाषा' भी कहा जाता है।

(ग) छत्तीसगढ़ी

छत्तीसगढ़ी भाषा का विकास प्राचीन आर्यभाषा अर्थात् संस्कृत से हुआ है, जो विकासक्रम में 'अपभ्रंश' से होते हुए 'अर्धमागधी' तक पहुँची। इसी अर्धमागधी से छत्तीसगढ़ी भाषा का विकास हुआ है। यह छत्तीसगढ़ के दो करोड़ से ज्योदा लोगों की संपर्क भाषा है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ी को प्रदेश की राजभाषा घोषित किया गया है और इसके विकास एवं निरंतरता को बनाए रखने के लिये एक राजभाषा आयोग का गठन किया गया है। छत्तीसगढ़ी की उत्पत्ति का विकासक्रम को देखे तो प्राचीन भारतीय आर्यभाषा—वैदिक संस्कृत 1500 ई.पू. से 1000 ई.पू., लौकिक संस्कृत 1000 ई.पू. से 500 ई.पू.द्ध मध्यकालीन आर्य भाषा य प्रथम प्राकृत पालि 500 ई.पू. से 1 ली ईतक, द्वितीय प्राकृत 1 ली ई. से 500 ई. तक, तृतीय प्राकृत अपभ्रंश 500 ई. से 1000 ई. एवं अवहट्ट 900 ई. से 1100 ई. तकद् है। छत्तीसगढ़ी पलामू (झारखण्ड) की सीमा से लेकर दक्षिण में बस्तर तक और पश्चिम में बघेलखंड की सीमा से उड़ीसा की सीमा तक फैले हुए भूभाग की बोली है। 20वीं सदी के आरंभ में जब छत्तीसगढ़ी साहित्य में आधुनिक काल की शुरुआत होती है और छत्तीसगढ़ी एक स्वतंत्र भाषा बनने लगती है तब से इसमें साहित्यब मिलता है। इसके पूर्व लोक साहित्य की समृद्ध परंपरा रही है।

2. पश्चिमी हिंदी

पश्चिमी हिंदी का विकास शौरसैनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके अंतर्गत पाँच बोलियाँ हैंदृखड़ी बोली, हरियाणवी, ब्रज, कन्नौजी और बुंदेली। खड़ी बोली अपने मूल रूप में मेरठ, रामपुर, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, बागपत के आसपास बोली जाती है। इसी के आधार पर आधुनिक हिंदी और उर्दू का रूप खड़ा हुआ। बांगरू को जाटू या हरियाणवी भी कहते हैं। यह पंजाब के दक्षिण पूर्व में बोली जाती है। कुछ विद्वानों के अनुसार बांगरू खड़ी बोली का ही एक रूप है जिसमें पंजाबी और राजस्थानी का मिश्रण है। ब्रजभाषा मथुरा के आसपास ब्रजमंडल में बोली जाती है। हिंदी साहित्य के मध्ययुग में ब्रजभाषा में उच्च कोटि का काव्य निर्मित हुआ। इसलिए इसे बोली न कहकर आदरपूर्वक

NOTES

भाषा कहा गया। मध्यकाल में यह बोली संपूर्ण हिंदी प्रदेश की साहित्यिक भाषा के रूप में मान्य हो गई थी। पर साहित्यिक ब्रजभाषा में ब्रज के ठेठ शब्दों के साथ अन्य प्रांतों के शब्दों और प्रयोगों का भी ग्रहण है। कन्नौजी गंगा के मध्य दोआब की बोली है। इसके एक ओर ब्रजमंडल है और दूसरी ओर अवधी का क्षेत्र। यह ब्रजभाषा से इतनी मिलती जुलती है कि इसमें रचा गया जो थोड़ा बहुत साहित्य है वह ब्रजभाषा का ही माना जाता है। बुंदेली बुंदेलखंड की उपभाषा है। बुंदेलखंड में ब्रजभाषा के अच्छे कवि हुए हैं जिनकी काव्यभाषा पर बुंदेली का प्रभाव है।

पश्चिमी हिंदी का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके अंतर्गत पाँच बोलियाँ हैं– खड़ी बोली, हरियाणवी, ब्रजभाषा, कन्नौजी और बुंदेलीखड़ी बोली निम्नलिखित स्थानों के ग्रामीण क्षेत्रों में बोली जाती है।

हरियाणा –

कुरुक्षेत्र, अंबाला, यमुनानगर, पंचकुला, फरीदाबाद का उत्तरी हिस्सा, करनाल, सोनीपत और पानीपत के पूर्वी हिस्से

उत्तर प्रदेश –

गंगा–यमुना दोआब के जिले –

सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, शामली, बागपत, मेरठ, गाजियाबाद, हापुड़, बुलंदशहर तथा गौतम बुद्ध नगर

गंगा के पार (रोहिलखंड क्षेत्र)–

मुरादाबाद, रामपुर, संभल, बरेली, बदायूँ, अमरोहा तथा बिजनौर

उत्तराखंड –

गंगा–यमुना दोआब के जिलों – हरिद्वार,देहरादून

गंगा के पार –

नैनीताल, उधम सिंह नगर मेरठ, गाजियाबाद, बुलंदशहर, हापुड़, बागपत, बिजनौर, मुरादाबाद, संभल, अमरोहा, शामली, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून व नैनीताल के मैदानी भाग, हरिद्वार, उधम सिंह नगर, अम्बाला, कलसिया और पटियाला के पूर्वी भाग, खड़ी बोली क्षेत्र के पूर्व में ब्रजभाषा, दक्षिण–पूर्व में मेवाती, दक्षिण–पश्चिम में पश्चिमी राजस्थानी, पश्चिम में पूर्वी पंजाबी और उत्तर में पहाड़ी बोलियों का क्षेत्र है। मेरठ की खड़ी बोली आदर्श खडी बोली मानी जाती है जिससे आधुनिक हिंदी भाषा का जन्म हुआ, वही बांगरू और, जाट की ये हरियाणवी एक प्रकार से पंजाबी और राजस्थानी मिश्रित खड़ी बोली ही हैं जो दिल्ली, करनाल, रोहतक, हिसार और पटियाला, नाभा, झींद के ग्रामीण क्षेत्रों में बोली जाती है। खड़ी बोली, हिंदी का एक रूप है। यह परिनिष्ठित पश्चिमी हिंदी है और इसमें ब्रजभाषा या अवधी जैसी कोई छाप नहीं होती। खड़ी बोली को कौरवी बोली या दिल्ली बोली भी कहा जाता है। यह दिल्ली और उसके आस–पास के क्षेत्रों में बोली जाती है। खड़ी बोली में द्वित्व व्यंजन का काफी प्रयोग होता है, जैसे– बेट्टी, गाड़ी, रोट्टी, जात्ता वगैरह। खड़ी बोली में मानक हिंदी के न और भ की जगह क्रमशः ण और ब का इस्तेमाल होता है, जैसे– खाना, जाना, कबी, सबी वगैरह। खड़ी बोली की क्रिया रचना में

NOTES

मानक हिंदी से काफी मिलता–जुलता है। खड़ी बोली की उत्पत्ति दिल्ली और गंगा–यमुना दोआब के आस–पास के इलाके में हुई थी। मुगल काल में जब राजनीतिक सत्ता दिल्ली पर केंद्रित हो गई, तब खड़ी बोली में फारसी के कई शब्द शामिल हो गए। खड़ी बोली को मानक हिंदी के रूप में अपनाया गया था। खड़ी बोली शब्द का सबसे पहले इस्तेमाल लल्लूलाल और सदल मिश्र ने किया था। खड़ी बोली में रचना करने वाला पहला व्यक्ति अमीर खुसरो था।

ब्रजभाषा में सूरदास और नन्ददास की कृष्णभक्ति से सराबोर उत्कृष्ट काव्य रचनाएँ हैं। खड़ीबोली विशेषकर दिल्ली, मेरठ, गाजियाबाद, बिजनौर और सहारनपुर तथा इसके आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती है।

➢ **पश्चिमी हिंदी**

इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसमें निम्लिाब खित बोलियां मिलती हैं।

(1) **बाँग :**

बाँग : नाम एक क्षेत्र विशेष, जो ऊँची भूमि से संबंधित हो उसे 'बाँगरू' कहते हैं, के आधार पर हुआ है। इसे जाटँ, देसाड़ी और हरियाणवी नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। आजकल इसे प्रायः हरियाणवी ही कहते हैं। हरियाणा में इसी बोली का प्रयोग होता है। हरियाणा का उद्भव भी हिंदी की इसी बोली हरियाणवी के आधार पर हुआ है। हरियाणा का सीमा–निर्धारण भी इसी बोली हरियाणवी के आधार पर हुआ है। इस बोली के उद्भव के विषय में माना जाता है कि खड़ी–बोली पर पंजाबी तथा राजस्थान के प्रभाव के आधार पर यह रूप सामने आया है। इस बोली के लोक–साहित्य का समृद्ध भण्डार है। इस बोली की लिपि देवनागरी है। बाँगरू को निम्नलिखित मुख्य उप वर्गों में विभक्त कर सकते हैं –

1. **बाँग :**

यह केन्द्रीय बोली है। इसका केन्द्र रोहतक है। इस बोली का प्रयोग दिल्ली के निकट तक होता है। इसमें क्रिया 'है' का 'सै' के रूप में प्रयोग होता है। णकार बहुला बोली होने के कारण 'न' ध्वनि प्रायः 'ण' के रूप में प्रयुक्त होती है। श, ष, स का स्थान 'स' ध्वनि ने ले लिया है।

2. **मेवाती**

मेव–क्षेत्र विशेष के आधार पर इसका नाम मेवाती पड़ा है। इसका केन्द्र रेवाड़ी है। इस बोली का प्रयोग झज्जर, गुड़गाँव, बावल तथा नूह के कुछ भागों में होता है। इसे ब्रज, राजस्थानी और बाँगरू का मिश्रित रूप मान सकते हैं। इसमें 'ण' और 'ल' का बहुत प्रयोग मिलता है। एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए 'ए' के स्थान 'औ' का प्रयोग करते हैंय यथा–छोहरा : झ छोहरां।

3. **ब्रजभाषा**

ब्रज क्षेत्र इसके नामकरण का आधार है। पलवल इसका केन्द्र है। इस बोली में ड और ल ध्वनि प्रायः 'र' हो जाती है। ल झ र काला झ कारा, ड झ र कीड़ी झ कीरी , यह

NOTES

बोली ओकारान्त बहुला है– खाया झ खायो, गया झ गयो।

ब्रजभाषा एक क्षेत्रीय ग्रामीण भाषा है जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड में बोली जाती है। इसके अलावा यह भाषा हरियाणा, राजस्थान और मध्यप्रदेश के कुछ जनपदों में भी बोली जाती है। अन्य भारतीय भाषाओं की तरह ये भी संस्कृत से जन्मी है। इस भाषा में प्रचुर मात्रा में साहित्य उपलब्ध है। भारतीय भक्ति काल में यह भाषा प्रमुख रही।

विक्रम की 13 वीं शताब्दी से लेकर 20वीं शताब्दी तक ब्रजभाषा भारत के मध्यदेश की मुख्य साहित्यिक भाषा एवं साथ ही साथ समस्त भारत की साहित्यिक भाषा थी। विभिन्न स्थानीय भाषाई समन्वय के साथ समस्त भारत में विस्तृत रूप से प्रयुक्त होने वाली हिंदी का पूर्व रूप यह 'ब्रजभाषा' अपने विशुद्ध रूप में आज भी मथुरा, आगरा, अलीगढ़, भरतपुर, करौली और धौलपुर जिलों में बोली जाती है जिसे हम केंद्रीय ब्रजभाषा भी कह सकते हैं। 19वीं शताब्दी में हिंदी हिन्दुस्तानी के आने के पहले ब्रजभाषा और अवधी ही उत्तर–मध्य भारत की दो प्रमुख साहित्यिक भाषाएँ थीं। ब्रजभाषा में ही अनेक भक्त कवियों ने अपनी रचनाएं की हैं जिनमें प्रमुख हैं सूरदास, रहीम, रसखान, केशव, घनानंद, बिहारी, इत्यादि। केंद्रीय ब्रजभाषा क्षेत्र के उत्तर पश्चिम की ओर बुलंदशहर जिले की उत्तरी पट्टी से इसमें खड़ी बोली की लटक आने लगती है। उत्तरी–पूर्वी जिलों अर्थात् बदायूँ और एटा जिलों में इसपर कन्नौजी का प्रभाव प्रारंभ हो जाता है। डॉ. धीरेंद्र वर्मा, 'कन्नौजी' को ब्रजभाषा का ही एक रूप मानते हैं। दक्षिण की ओर ग्वालियर में पहुँचकर इसमें बुंदेली की झलक आने लगती है। पश्चिम की ओर गुड़गाँव तथा भरतपुर का क्षेत्र राजस्थानी से प्रभावित है। ब्रज भाषा आज के समय में प्राथमिक तौर पर एक ग्रामीण भाषा है, जो कि मथुरा–भरतपुर केन्द्रित ब्रज क्षेत्र में बोली जाती है। यह मध्य दोआब के इन जिलों की प्रधान भाषा हैरू भरतपुर, करौली, मथुरा, आगरा, फिरोजाबाद, मैनपुरी, एटा, हाथरस, बुलंदशहर, गौतम बुद्ध नगर, अलीगढ़, पलवल तथा कासगंज।

गंगा के पार इसका प्रचार बदायूँ, बरेली होते हुए नैनीताल की तराई, उत्तराखंड के उधम सिंह नगर जिले तक चला गया है। उत्तर प्रदेश के अलावा इस भाषा का प्रचार राजस्थान के इन जिलों में भी हैरू भरतपुर, धौलपुर, हिण्डौन सिटी और करौली जिले के कुछ भाग (हिण्डौन सिटी)। जिसके पश्चिम से यह राजस्थानी की उप–भाषाओं में जाकर मिल जाती है।

हरियाणा में यह दिल्ली के दक्षिणी इलाकों में बोली जाती है– फरीदाबाद जिला और गुड़गाँव और मेवात जिलों के पूर्वी भाग।

ब्रजभाषा की बोलियाँ

ब्रजभाषा एक साहित्यिक एवं स्वतंत्र भाषा है और इसकी अपनी कई बोलियाँ हैं। ब्रजभाषा क्षेत्र की भाषागत विभिन्नता को दृष्टि में रखते हुए हम उसका विभाजन निम्नांकित रूप में कर सकते हैं :

(1) केंद्रीय ब्रज अर्थात् आदर्श ब्रजभाषा – अलीगढ़, मथुरा तथा पश्चिमी आगरे की ब्रजभाषा को ष्आदर्श ब्रजभाषाष नाम दिया जा सकता है।

(2) बुन्देली प्रभावित ब्रजभाषा – ग्वालियर के उत्तर पश्चिम में बोली जानेवाली भाषा को

NOTES

यह नाम प्रदान किया जा सकता है।

(3) राजस्थान की जयपुरी से प्रभावित ब्रजभाषा – यह भरतपुर तथा उसके दक्षिणी भाग में बोली जाती है।

(4) सिकरवाड़ी ब्रजभाषा – ब्रजभाषा का यह रूप ग्वालियर के उत्तर पूर्व के अंचल में प्रचलित है जहाँ सिकरवाड़ राजपूतों की बस्तियाँ पाई जाती हैं।

(5) जादोबाटी ब्रजभाषा – करौली के क्षेत्र तथा चंबल नदी के मैदान में बोली जानेवाली ब्रजभाषा को 'जादौबारी' नाम से पुकारा गया है। यहाँ जादौ (यादव) राजपूतों की बस्तियाँ हैं।

(6) कन्नौजी से प्रभावित ब्रजभाषा – जिला एटा तथा तहसील अनूपशहर एवं अतरौली की भाषा कन्नौजी से प्रभावित है।

ब्रजभाषी क्षेत्र की जनपदीय ब्रजभाषा का रूप पश्चिम से पूर्व की ओर कैसा होता चला गया है, इसके लिए निम्नांकित उदाहरण द्रष्टव्य हैं –

जिला गुडगाँव में– ''तमासो देखने कू गए। आपस् मैं झग्रो हो रह्यौ हो। तब गानो बंद हो गयो।''

जिला बुलंदशहर में– ''लौंडा गॉम् कू आयौ और बहू सू बोल्यौ कै मैं नौक्री कू जांगौ।''

जिला अलीगढ़ में– ''छोरा गाँम् कूँ आयौ औरु बऊ ते बोलौ (बोल्यौ) कै मैं नौक्री कूँ जांगो।''

जिला एटा में– ''छोरा गॉम् कूँ आओ और बऊ ते बोलो कै मैं नौक्री कूँ जाउँगो।''

इसी प्रकार उत्तर से दक्षिण की ओर का परिवर्तन द्रष्टव्य है–

जिला अलीगढ़ में– ''गु छोरा मेरे घ ते चलौ गयौ।''

जिला मथुरा में – ''बु छोरा मेरे घ तैं चल्यौ गयौ।''

जिला भरतपुर में– ''ओ छोरा तू कहा कररौय।''

जिला आगरा में– ''मुक्तौ रुपइया अप्नी बइयरि कूँ भेजि दयौ।''

ग्वालियर (पश्चिमी भाग) में– ''बानैं एक् बोकरा पाल लओ। तब बौ आनंद सै रैबे लगो।''

जनपदीय जीवन के प्रभाव से ब्रजभाषा के कई रूप हमें दृष्टिगोचर होते हैं। किंतु थोड़े से अंतर के साथ उनमें एकरूपता की स्पष्ट झलक हमें देखने को मिलती है।

ब्रजभाषा की अपनी रूपगत प्रकृति औकारान्त है अर्थात् इसकी एकवचनीय पुंलिंग संज्ञाएँ तथा विशेषण प्रायरू औकारान्त होते हैंय जैसे खुरपौ, यामरौ, माँझौ आदि संज्ञा शब्द औकारांत हैं। इसी प्रकार कारौ, गोरौ, साँवरौ आदि विशेषण पद औकारांत है। क्रिया का सामान्य भूतकालिक एकवचन पुंलिंग रूप भी ब्रजभाषा में प्रमुखरूपेण औकारान्त ही रहता है। यह बात अलग है कि उसके कुछ क्षेत्रों में श्रुति का आगम भी पाया जाता है। जिला अलीगढ़ की तहसील कोल की बोली में सामान्य भूतकालीन रूप श्रुति से रहित मिलता है, लेकिन जिला मथुरा तथा दक्षिणी बुलंदशहर की तहसीलों में श्रुति अवश्य पाई जाती है। जैसे –

''कारौ छोरा बोलौ'' – (कोल, जिला अलीगढ़)

NOTES

''कारौ छोरा बोल्यौ'' – (माट जिला मथुरा)

''कारौ छोरा बोल्यौ'' – (डीग जिला भरतपुर)

''कारौ लौंडा बोल्यौ'' – (बरन, जिला बुलंदशहर)।

कन्नौजी

कन्नौजी की अपनी प्रकृति ओकारान्त है। संज्ञा, विशेषण तथा क्रिया के रूपों में ब्रजभाषा जहाँ औकारान्तता लेकर चलती है वहाँ कन्नौजी ओकारांतता का अनुसरण करती है। जिला अलीगढ़ की जलपदीय ब्रजभाषा में यदि हम कहें कि– ''कारौ छोरा बोलौ'' (= काला लड़का बोला) तो इसे ही कन्नौजी में कहेंगे कि– ''कारो लरिका बोलो। भविष्यत्कालीन क्रिया कन्नौजी में तिङंतरूपिणी होती है, लेकिन ब्रजभाषा में वह कृदंतरूपिणी पाई जाती है। यदि हम ''लड़का जाएगा'' और ''लड़की जाएगी'' वाक्यों को कन्नौजी तथा ब्रजभाषा में रूपांतरित करके बोलें तो निम्नांकित रूप प्रदान करेंगे –

कन्नौजी में – (1) लरिका जइहै। (2) बिटिया जइहै।

ब्रजभाषा में – (1) छोरा जाइगौ। (2) छोरी जाइगी।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि ब्रजभाषा के सामान्य भविष्यत् काल रूप में क्रिया कर्ता के लिंग के अनुसार परिवर्तित होती है, जब कि कन्नौजी में एक रूप रहती है।

इसके अतिरिक्त कन्नौजी में अवधी की भाँति विवृति (Hiatus) की प्रवृत्ति भी पाई जाती है जिसका ब्रजभाषा में अभाव है। कन्नौजी के संज्ञा, सर्वनाम आदि वाक्यपदों में संधिराहित्य प्रायरू मिलता है, किंतु ब्रजभाषा में वे पद संधिगत अवस्था में मिलते हैं। उदाहरण :

(1) कन्नौजी – ''बउ गओ'' (= वह गया)।

(2) ब्रजभाषा – ''बो गयौ'' (= वह गया)।

उपर्युक्त वाक्यों के सर्वनाम पद 'बउ' तथा 'बो' में संधिराहित्य तथा संधि की अवस्थाएँ दोनों भाषाओं की प्रकृतियों को स्पष्ट करती हैं।

4. अहीरवाटी

रेवाड़ी और मेहन्द्रगढ़ का मध्य क्षेत्र इसका केन्द्र स्थल है। नारनौल से कोसली तक और दिल्ली से आस–पास तक इस बोली का प्रयोग होता है। इसे मेवाती, राजस्थानी बाँगरू और बागड़ी का मिश्रित रूप मान सकते हैं। इसमें अकारान्त संज्ञा प्रायः ओकारान्त के रूप में मिलती हैय यथा– था झ था।

5. बागड़ी

बागड़ी संस्कृति से जुड़ी इस बोली का क्षेत्र भिवानी, हिसार, सिरसा के अतिरिक्त महेन्द्रगढ़ के कुछ भाग तक फैला है। इसकी लोप क्रिया बाँगरू के समान हैय यथा अहीर झ हीर, उठाना झ ठाना, अनाज झ नाज बहुवचन बनाने क` लिए 'आँ' प्रत्यय का प्रयोग होता हैय जैसे– बात झ बाताँ।

6. कौरवी

उत्तर प्रदेश के मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर के अतिरिक्त हरियाणा के सोनीपत, पानीपत और करनाल तक इसका क्षेत्र फैला है। इसमें खड़ी बोली की प्रवृत्ति मिलती है

NOTES

यथा– है, ना (पाना, खाना)।

व्यंजनों में द्वित्वीकरण प्रवृत्ति हैय यथा–लोप–प्रक्रिया रोचक है– अनार झनार, उतार झ तार।

7. अम्बावली

इसका प्रयोग क्षेत्र अम्बाला, यमुनानगर तथा कुरूक्षेत्र तक विस्तृत है। अम्बावली और कौरवी में बहुत कुछ साम्य है। वैसे इस पर पंजाबी, पहाड़ी तथा बाँगरू इसमें महाप्राण ध्वनि बलाघात से अल्पप्राण हो जाती है यथा– हाथ झ हात, साथ झसात आदि लोप प्रक्रिया के समान है।

8. खड़ी–बोली

इस बोली का प्रयोग दिल्ली और पश्चिमी उत्तर–प्रदेश के कुछ जिलों में होता है। इसके दो रूप हैं एक साहित्यिक हिंदी, दूसरा उसी क्षेत्र की लोक–बोली। 'खड़ी–बोली' के नाम के संबंध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कुछ विद्वानों का कहना है कि इसके खड़ेपन (खरेपन) अर्थात् शुद्धता के कारण इसे 'खड़ी–बोली' कहते हैं, तो कुछ विद्वानों का कहना है कि खड़ी पाई (आ की मात्रा 'ा') के बहुल प्रयोग (आना, जाना, खाना आदि) के कारण इसे खड़ी–बोली की संज्ञा दी जाती है। इसका क्षेत्र दिल्ली, मेरठ, मुजफ्जरनगर, सहारनपुर, देहरादून, बिजनौर, मुरादाबाद तथा रामपुर के अतिरिक्त इनके समीपस्थ जनपदों के आंशिक भागों तक फैला हुआ है। खड़ी–बोली में साहित्य की कई शैलियाँ हैं जैसे–उर्दू प्रभावित, तत्सम शब्दावली बहुला परिनिष्ठित शैली, तदभव शब्दाजवली युक्तई, अंग्रेजी मिश्रित शैली। भारत की राजभाषा, राष्ट्र–भाषा में भी इसी रूप को अपनाया गया है। वर्तमान समय में हिंदी की साहित्यिक रचना मुख्यतः इसी में हो रही है। अंग्रेजी मिश्रित शैली का प्रयोग भूमंडलीकरण के बाद बढ़ा है। इसमें जहां एक ओर अंग्रेजी शब्दोंइ को हिंदी भाषा के मध्य प्रयुक्तभ कर दिया जाता है वहीं अनुवाद आदि में शब्दाहभाव में अंग्रेजी शब्द का लिप्यीतरण भी कर दिया जाता है। इसके हिंग्लिभस के नाम से भी जाना जाता है। इसे एसएमएस की भाषा भी कहा जाता है।

➢ खड़ी बोली की विशेषताएं

खड़ी बोली हिंदी भाषा की एक प्रमुख बोली है जो उत्तर भारत में बोली जाती है। यह बोली आधुनिक हिंदी साहित्य और औपचारिक हिंदी भाषा का आधार है।

खड़ी बोली आकारांत प्रधान है। इसमें ज्यादातर आकारांत शब्दों का इस्तेमाल होता है।

- खड़ी बोली में मूर्धन्य 'ल' का इस्तेमाल होता है।
- खड़ी बोली में द्वित्व व्यंजनों का प्रयोग प्रचुरता से होता है।
- खड़ी बोली में मानक हिंदी के न, भ के स्थान पर क्रमणः ण, ब का प्रयोग होता है।
- खड़ी बोली में संस्कृत के शब्दों का अधिक प्रयोग होता है।
- खड़ी बोली की क्रिया रचना में मानक हिंदी से काफी समानता है।
- खड़ी बोली की सबसे बड़ी विशेषता है इसकी संप्रेषणीयता।
- खड़ी बोली का ढांचा सरल और व्यावहारिक है.

➢ राजस्थानी हिंदी

राजस्थान प्रदेश में प्रयुक्त बोलियों के समूह को राजस्थानी हिंदी कहते हैं। इसके अंतर्गत चार प्रमुख बोलियाँ आती हैं– मेवाती, जयपुरी, मारवाड़ी और मालवी।

(क) मेवाती

मेव जाति के क्षेत्र मेवाती के नाम पर यह बोली कहलाई है। यह अलवर के अतिरिक्त हरियाणा के गुड़गाँव जनपद के कुछ अंश में बोली जाती है। ब्रज–क्षेत्र से लगे होने के कारण इस पर ब्रजभाषा का प्रभाव है। इसमें समृद्ध लोक–साहित्य मिलता है।

(ख) जयपुरी

यह राजस्थान के पूर्वी भाग जयपुर, कोटा तथा बूंदी आदि क्षेत्रों में बोली जाती है। इस क्षेत्र में ढँढाण कहने के आधार पर इसे ढुँढणी की भी संज्ञा दी जाती है। इसमें लोक–साहित्य मिलता है। इसमें दादू पंथियों का पर्याप्त साहित्य मिलता है।

(ग) मारवाड़ी

यह पश्चिमी राजस्थान के जोधपुर, अजमेर, जैसलमेर तथा बीकानेर आदि जनपदों में बोली जाती है। पुरानी मारवाड़ी को डिंगल कहते हैं। इसमें साहित्य तथा लोक–साहित्य दोनों ही रचा गया है। इसके प्रसिद्ध कवि हैं – नरपति नाल्ह और पृथ्वीराज। मध्यकाल में मीराबाई ने इसी भाषा में रचना की थी।

(घ) मालवी

राजस्थान के दक्षिणी पूर्व में स्थित मालवा क्षेत्र के नाम पर इसे मालवी कहते हैं। इन्दौर, उज्जैन तथा रतलाम आदि जनपद इसके क्षेत्र में आते हैं। इसमें सीमित साहित्य तथा पर्याप्त लोक–साहित्य मिलता है। चन्द्र–सखी इसकी प्रसिद्ध कवयित्री है।

➢ बिहारी हिंदी

इनमें प्रमुख हैं– मगही, भोजपुरी और मैथिली। मैथिली के आदि कवि 'विद्यापति' की प्रसिद्ध 'पदावली' मैथिली में ही है। अंगिका और बज्जिका बोलियाँ इसी हिंदी के अंतर्गत आती हैं। इसका विकास मागधी से हुआ है। बिहार तथा झारखंड प्रदेशों में प्रयुक्त बोलियों के समूह को बिहारी हिंदी कहते हैं। यह हिंदी भाषा का ही रूप है। इसके अन्तर्गत भोजपुरी, मैथिली, मगही तीन प्रमुख बोलियाँ आती हैं।

(क) भोजपुरी

जनपदीय क्षेत्र भोजपुर इसका मुख्य केन्द्र होने के कारण इसका यह नाम पड़ा है। यह बिहार तथा उत्तर–प्रदेश के सीमावर्ती जिलों भोजपुर, राँची, सारन, चम्पार, मिर्जापुर, जौनपुर, बलिया, गोरखपुर, बस्ती आदि में बोली जाती हैं। इसमें सीमित साहित्य, किन्तु समृद्ध लोक साहित्य मिलता है।

(ख) मैथिली

जनपदीय क्षेत्र की भाषा होने के आधार पर इसे मैथिली नाम दिया गया है। इसके क्षेत्र में दरभंगा, सहर और मुजफ्फरपुर तथा भागलपुर जनपद आते हैं। इसमें पर्याप्त साहित्य मिलता है। यह सम्पन्नर भाषा मानी जाती है क्योंतकि इस भाषा का लोक–साहित्य भी अपने सरस रूप के लिए प्रसिद्ध है। मैथिली कोकिल विद्यापति ने इसी भाषा में अपनी

अधिकांश कृतियों का सृजन किया है। मैथिली संस्कृत के करीब होने के कारण हिंदी से मिलती जुलती लगती है। परन्तु, मैथिली हिंदी से अधिक बांग्ला के निकट है। मैथिली गंगा के उत्तर में दरभंगा के आसपास प्रचलित है। इसकी साहित्यिक परंपरा पुरानी है। विद्यापति के पद प्रसिद्ध ही हैं। मध्ययुग में लिखे मैथिली नाटक भी मिलते हैं। आधुनिक काल में भी मैथिली का साहित्य रचा जा रहा है। मैथिली भाषा भारत और नेपाल के संविधान में राजभाषा के रूप में भी दर्ज है। नेपाल में दूसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा मैथिली है।

NOTES

(ग) मगही

''मागधी'' से विकसित होकर मगही शब्द बना है। 'मागध' क्षेत्र की भाषा होने के आधार पर इसे मागधी या मगाही नाम दिया गया है। गया जनपद के अतिरिक्त पटना, भागलपुर, हजारीबाग तथा मुंगेर आदि जनपदांशों में भी यही बोली जाती है।

- **पहाड़ी**

इसका विकास 'खस' अपभ्रंश से हुआ है। इसका क्षेत्र हिमालय के निकटवर्ती भाग नेपाल से लेकर शिमला तक फैला है। कई बोलियों वाली इस भाषा को तीन उपवर्गों में विभक्त करते हैं –

(क) पश्चिमी पहाड़ी

NOTES

इसमें शिमला के आस–पास चम्बाली, कुल्लई आदि बोलियाँ आती हैं।

(ख) मध्य पहाड़ी

इसमें कुमायूं तथा गढ़वाल का भाग आता है। नैनीताल तथा अल्मोड़ा में बोली जाने वाली कुमायूनी तथा गढ़वाल, मंसूरी में बोली जाने वाली गढ़वाली बोलियाँ मुख्य हैं।

(ख) पूर्वी पहाड़ी

काठमांडू तथा नेपाल की घाटी में यह भाषा बोली जाती है। पहाड़ी बोलियों का समृद्ध लोक–साहित्य है। इसकी लिपि मुख्यतः देवनागरी है।

■■

तृतीय इकाई

हिंदी भाषा के विभिन्नम रूप, बोलचाल की भाषा, रचनात्मिक भाषा, राष्ट्राभाषा

➢ हिंदी भाषा के विविध रूप

हिंदी विश्व की एक प्रमुख भाषा है और भारत की एक राजभाषा है। केंद्रीय स्तर पर भारत में सह–आधिकारिक भाषा अंग्रेजी है। हिंदी के मानकीकृत रूप को मानक हिंदी कहा जाता है। मानक हिंदी में संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग अधिक है और अरबी–फारसी शब्द कम हैं। हिंदी संवैधानिक रूप से भारत की राजभाषा और भारत की सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं बल्कि राजभाषा है क्योंकि भारत के संविधान में राष्ट्रभाषा का कहीं उल्लेख या चर्चा नहीं है।विभिन्नत सर्वेक्षणों एवं स्रोतों के आधार पर हिंदी विश्व की तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा माना जाती है। विश्व आर्थिक मंच की गणना के अनुसार यह विश्व की दस शक्तिशाली भाषाओं में से एक है। भारत की जनगणना 2011 में भारत की 57.1प्रतिशत जनसंख्या हिंदी जानती है, जिसमें से 43.63 प्रतिशत भारतीयों की हिंदी मूल भाषा या मातृभाषा है। इसके अतिरिक्त भारत, पाकिस्तान और फिजी, मॉरिशस, गयाना, सूरीनाम, नेपाल और संयुक्त अरब अमीरात आदि अन्य देशों में 14 करोड़ 10 लाख लोगों द्वारा बोली जाती है। एक विशाल संख्या में लोग हिंदी और उर्दू दोनों को ही समझते हैं। भारत में हिंदी, विभिन्न भारतीय राज्यों की 22 आधिकारिक भाषाओं में से 14 भाषाओं और क्षेत्र की बोलियों का उपयोग करने वाले लगभग 1 अरब लोगों में से अधिकांश की दूसरी भाषा है। हिंदी भारत में सम्पर्क भाषा का कार्य करती है और कुछ हद तक पूरे भारत में सामान्यतः एक सरल रूप में समझी जाने वाली भाषा है। हिंदी और इसकी बोलियाँ सम्पूर्ण भारत के विविध राज्यों में बोली जाती हैं। भारत और अन्य देशों में भी लोग हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। भी हिंदी या इसकी मान्य बोलियों का उपयोग करने वाले लोगों की बड़ी संख्या मौजूद है।

➢ बोलचाल की भाषा

बोलचाल की भाषा उन सभी लोगों की बोलचाल की भाषा का वह मिश्रित रूप है

NOTES

जिनकी भाषा में पारस्परिक भेद को अनुभव नहीं किया जाता है। विश्व में जब किसी जन–समूह का महत्त्व किसी भी कारण से बढ़ जाता है तो उसकी बोलचाल की बोली 'भाषा' कही जाने लगती है, अन्यथा वह 'बोली' ही रहती है। 'भाषा' की अपेक्षा 'बोली' का क्षेत्र, उसके बोलने वालों की संख्या और उसका महत्त्व कम होता है। एक भाषा की कई बोलियाँ होती हैं क्योंकि भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है। जब कई व्यक्ति–बोलियों में पारस्परिक सम्पर्क होता है, तब बालेचाल की भाषा का प्रसार होता है। आपस में मिलती–जुलती बोली या उपभाषाओं में हुई आपसी व्यवहार से बोलचाल की भाषा को विस्तार मिलता है। इसे 'सामान्य भाषा' के नाम से भी जाना जाता है। यह भाषा बड़े पैमाने पर विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होती है।

बोलचाल की भाषा की विशेषताएं

- इसमें व्याकरण के नियम सरल होते हैं।
- इसमें शब्दावली अनौपचारिक होती है।
- इसमें संक्षिप्त रूपों का प्रयोग किया जाता है।
- वाक्यांश मुहावरेदार एवं लोकोक्तियों के परिपूर्ण होते हैं।
- इसमें आलंकारिक भाषा, संकुचन, पूरक शब्द, विस्मयादिबोधक और अन्य अनौपचारिकता जैसे कि कठबोली का इस्तेमाल होता है।

बोलचाल की भाषा का प्रयोग

- दोस्ती, पारिवारिक, अंतरंग और अन्य अनौपचारिक संदर्भों में लोगों के बीच बातचीत में होता है।
- आम तौर पर अनौपचारिक ईमेल और टेक्स्ट संदेशों में किया जाता है।
- बोलचाल की भाषा, औपचारिक और व्यावसायिक संचार के विपरीत होती है।
- बोलचाल की भाषा की शब्दावली तेजी से बदलती रहती है।
- बोलचाल की भाषा को अधूरे तार्किक और वाक्यविन्यास क्रम के साथ इसके उपयोग से भी पहचाना जा सकता है।

➢ बोलचाल की भाषा के रूप में हिंदी

सामान्यतः भाषा के अन्तर्गत भाषा के कई रूप उभर कर आते हैं। डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, ये रूप प्रमुखतः चार आधारों पर आधारित हैं– इतिहास, भूगोल, प्रयोग और निर्माता। इनमें प्रयोग क्षेत्र सबसे विस्तृत है। जब कई व्यक्ति–बोलियों में पारम्पारिक सम्पर्क होता है, तब बोलचाल की भाषा का प्रसार होता है। दूसरे शब्दों में, आपस में मिलती–जुलती बोली या उपभाषाओं में हुए व्यवहार से बोलचाल की भाषा का विस्तार देखने में आता है। इसे 'सामान्य भाषा' के नाम से जाना जाता है। परंतु भाषा सतत परिवर्तनशील होती है, समकालीन, प्रयोगशील तथा भाषा का आधुनिकतम रूप है।

साधारणतः हिंदी की तीन शैलियों की चर्चा की जाती है। हिंदी , उर्दू और हिन्दुस्तानी। शिक्षित हिंदी भाषी अक्सर औपचारिक स्तर पर (भाषण, कक्षा में अध्ययन, रेडियो वार्ता, लेख आदि में) हिंदी या उर्दू शैली का प्रयोग करते हैं। अनौपचारिक स्तर पर (बाजार में, दोस्तों में गपशप करते समय) प्रायः हिंदुस्ताआनी का प्रयोग करते हैं। जिसमें हिंदुस्तानी के दो रूप पाये जाते हैं। एक रूप वह है जिसमें अंग्रेजी के प्रचलित शब्द

NOTES

हैं और दूसरे में अगृहीत अंग्रेंजी शब्द का प्रचलन है। इसे बहुत से विद्वानों द्वारा हिंलिस का नाम भी दिया गया है। इसी का एक आधुनिकतम रूप कहा जा सकता है वह है एसएमएस की भाषा । इसमें लिपि अंग्रेजी होती है और रूप हिंदी का। वैसे अब मोबाइल तकनीक में होते नए विकास से हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में एसएमएस की सुबिधा मुहैया हो चुकी है। बोलचाल की हिंदी में ये सारी शैलियाँ मौजूद रहती हैं। अर्थात् इसमें सरल बहुप्रचलित शब्दों का प्रयोग होता है। चाहे वह तत्सम प्रधान हिंदी हो या परिचित उर्दू अथवा अंग्रेजी–मिश्रित हिन्दुस्तानी, व्याकरण तो हिंदी का ही रहता है। बोलचाल की भाषा बड़े पैमाने पर विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होती है। भक्तों द्वारा, साधु–संतों द्वारा, व्यापारियों के जरिए, तीर्थस्थानों में, मेला–महोत्सव में,रेल के डिब्बों में, सेना द्वारा, शिक्षितों में, मजदूर और मालिक के बीच, किसान और जमींदार के बीच बोलचाल की भाषा बड़ी तेजी से फैलने लगती है। यह प्रेम की, भाई–चारे की, इस मिट्टी की तथा हमारी संस्कृति की भाषा है। चूंकि भारतीय संस्कृति सामासिक संस्कृति के रूप में समूचे विश्व में शुमार होती है, इसमें भाषाई अनेकरूपता का दृष्टिगत होना स्वाभाविक है। हमारी संस्कृति की भाँति हमारी भाषा हिंदी भी अनेकता को अपने में समाहित कर राष्ट्रीय एकता की पहचान कराती है। बहुभाषी राष्ट्र की विविधता, सांस्कृतिक विशालता एवं भौगोलिक वैभिन्न्य के कारण सृष्ट बहुविध शब्दों में से कई मधुर क्षेत्रीय शब्द हमारी बोलचाल की भाषा में समाये हुए हैं। इससे सहजता, बोधगम्यता के साथ–साथ एक अपनापन भी अनायास आ जाता है।

संसार की प्रत्येक बोलचाल की भाषा आगे चलकर मानक भाषा बन जाती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है इसकी सहजता और सरलता। मौखिक प्रयोग के कारण कहीं कहीं शुद्धता भले ही न हो, पर बोधगम्यता और सम्प्रेषणीयता में यह सबसे आगे है। जो भाषा जितनी सम्प्रेषणीय है, वह उतनी ही समर्थ है। सम्प्रेषणीयता के अभाव में भाषा की उपयोगिता नहीं रह जायगी।

भाषा और प्रयोगकर्ता दूसरे के लिए अभिप्रेत है। वक्ता के बिना भाषा का अस्तित्वव नहीं रह जाएगा और भाषा के बिना वक्तार या स्रोता का जीवन निरर्थक हो जाएगा। सम्प्रेषण के लिए ही मनुष्य अपने आसपास से लेकर सारे संसार से जुड़ता है। अपने को अच्छी तरह अभिव्यक्त करने हेतु वह अन्यन्त प्रभावशाली ढंग से भाषा का प्रयोग करता है। सतत परिवर्तनशील होने के कारण भाषा में भिन्नता पायी जाती है। भाषा पर क्षेत्रीय प्रभाव को भी झुठलाया नहीं जा सकता। लेकिन यह भी सत्य है कि भाषा की इन विविधताओं के बावजूद उसका एक मानक रूप होता है। फिर भी 'भाषा बहता नीर' कभी स्थिर कैसे रह सकता है। जन–जन तक फैलकर सबसे घुलमिल कर उसका एक मौखिक रूप सदा बरकरार रहता है, जो सरल, सहज, बोधगम्य और मधुर भी है।

रचनात्महक भाषा

सामान्य : रूप में जिस भाषा में रचनाएं लिखी जाती हैं, उसे रचनात्मक भाषा कहते हैं। इसे साहित्यिक भाषा भी कहा जाता है। रचनात्मक भाषा, पूरी तरह से परिनिष्कृ त या मानक रूप में होती है। जैसे– हिंदी, अंग्रेजी, बंगाली, मराठी इत्याादि।

रचनात्मक लेखन– प्रमुख बिंदु

रचनात्मक होने से सीधा तात्पमर्य यह है कि व्यसक्ति स्व यं को व्यक्त करने और

NOTES

अपने आस–पास की दुनिया की जांच करने के लिए समस्तस क्षेत्र रचनाकार के लिए खुला हुआ है। रचनात्म कता को अग्रलिखित बिंदु से समझा जा सकता है–

- रचनाशीलता लक्ष्य–निर्देशित सोच है जो असामान्य, नवीन और उपयोगी होती है।
- रचनात्मक लेखन, किसी भी तरह का लेखन है जो व्यावसायिक या तकनीकी साहित्य के मानदंडों से बाहर होता है।
- यह कलात्मक लेखन के नाम से भी जाना जाता है।
- इसमें कथा और चरित्र विकास हो सकता है।
- इसमें काव्यात्मक उपकरणों का पता लगाया जा सकता है।
- यह भाषा की शक्ति के जरिए आख्यान, चरित्र, और दुनिया गढ़ने की कला है।
- यह ऐसी कहानियां बुनने की क्षमता है जो पाठकों को अलग–अलग दुनिया में ले जाती हैं।
- यह भावनाओं को जागृत करते हुए और विचारों मंथन के लिए अभिप्रेरित करता है।
- रचनात्मक लेखन के कई रूप हैं, जिनमें से प्रत्येक का अपना अनूठा आकर्षण है।

हिंदी एक रचनात्मक भाषा है, जिसमें साहित्् विभिन्नू विधाओं में साहित्ये सृजन हो चुका है और जारी भी है। गद्य विधाओं में लघुकथा, कहानी, उपन्या्स, जीवनी, आलोचना, नाटक,एकांकी, रेखाचित्र, संस्मररण, यात्रावृतांत इत्याेदि तथा पद्य विधाओं में कविता, खंड काव्यप, प्रबंध काव्यी, गीति काव्य , महाकाव्य, आदि सभी प्रकार की रचनाएं हिंदी भाषा में प्राप्त होती हैं। इसके अतिरिक्ता हिंदी भारतीय राजव्यधवस्थाम की राजकाज की भाषा भी है। राजभाषा के रूप में बहुआयामी सृजनात्महक भाषा के रूप में भी हिंदी पूर्ण रूप से सक्षम भाषा है।

मानक भाषा हिंदी

मानक भाषा को कई नामों से पुकारते हैं। इसे कुछ लोग श्परिनिष्ठित भाषा कहते हैं और कई लोग श्साधु भाषा । इसे श्नागर भाषाश भी कहा जाता है अंग्रेजी में इसे श्स्टेंतडर्ड लैग्वे जश कहते हैं। मानक का अर्थ होता है एक निश्चित पैमाने के अनुसार गठित। मानक भाषा का अर्थ होगा, ऐसी भाषा जो एक निश्चित पैमाने के अनुसार लिखी या बोली जाती है। मानक भाषा व्याकरण के अनुसार ही लिखी और बोली जाती है अर्थात् मानक भाषा का पैमाना उसका व्याकरण है। हम जब किसी अपरिचित व्यक्ति से मिलते हैं तो उससे मानक भाषा में ही बातचीत करते हैं, जब हम कक्षा में किसी प्रश्न का उत्तर देते हैं तो हम मानक भाषा का ही प्रयोग करते हैं। हम पत्र–व्यवहार में मानक भाषा ही लिखते हैं। समाचार पत्रों में जो भाषा लिखी जाती है, वह भी मानक ही होती है। आकाशवाणी और दूरदर्शन के समाचार मानक भाषा में ही प्रसारित किए जाते हैंहमारे प्रशासन के सारे कामकाज मानक भाषा में ही सम्पन्न होते हैं। कहने का आशय यह है कि मानक भाषा हमारे बृहत्तर समाज को सांस्कृतिक स्तर पर आपस में जोड़ती है और हम उसी के माध्यम से एक–दूसरे तक पहुंचते हैं। मानक भाषा हमारी बात दूसरों तक ठीक उसी रूप में पहुँचाती है जो हमारा आशय होता है।

अतः मानक भाषा सर्वमान्य भाषा होती है, वह व्याकरण सम्मत होती है और उसमें

NOTES

निश्चत अर्थ सम्प्रेषित करने की क्षमता होती है। गठन और सम्प्रेषण की एकरूपता उसका सबसे बड़ा लक्षण है। यह भाषा सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतीक बन जाती हैधीरे–धीरे इस मानक भाषा की शब्दावली, उसका व्याकरण, उसके उच्चारण का स्वरूप निश्चित और स्थिर हो जाता है और इसका प्रसार और विस्तार पूरे भाषा क्षेत्र में हो जाता है। इस प्रकार मानक भाषा की परिभाषा निम्नलिखित शब्दों में दी जा सकती है–

''मानक भाषा किसी भाषा के उस रूप को कहते हैं जो उस भाषा के पूरे क्षेत्र में शुद्ध माना जाता है तथा जिसे उस देश प्रदेश का शिक्षित और शिष्ट समाज अपनी भाषा का आदर्श रूप मानता है और प्रायरू सभी औपचारिक स्थितियों में, लेखन में, प्रशासन, शिक्षण माध्यम तथा साहित्या सृजन के प्रमुख माध्यचम के रूप में यथासाध्य उसी का प्रयोग करता है।''

राष्ट्रंभाषा

राष्ट्रंभाषा से तात्पतर्य ऐसी भाषा से है जो समस्तस राष्ट्र में प्रयोग में लाई जाती है। अन्ये शब्दों में कहें तो राष्ट्र भाषा आम जन की भाषा होती है। इसे जनभाषा भी कहा जाता है। राष्ट्रैभाषा समस्त राष्ट्र में जनसामान्यत के मध्या विचार विनिमय का माध्य म होती है। राष्ट्री य एकता के लिए राष्ट्रमभाषा की नितांत आवश्य कता होता है। राष्ट्राभाषा अंतरराष्ट्रीय स्तुपर पर संवाद एवं संपर्क की भाषा भी होती है। राष्ट्रज की जनता जब स्थाानीय एवं तात्काकलिक हितों व पूर्वाग्रहों सेऊपर उठकर अपने राष्ट्रा की कई भाषाओं में से किसी एक भाषा को राष्ट्री य अस्मिता का एक आवश्य क उपादान बना लेती है वही राष्ट्रंभाषा कहलाती है।

भारत में कोई एक राष्ट्रोभाषा नहीं है। भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा तथा अंग्रेजी को सहराजभाषा का दर्जा दिया गया है। परंतु संपूर्ण देश में हिंदी किसी न किसी रूप में बोली, समझी और जनसंपर्क माध्याम के रूप में प्रयोग में जाती है इसलि ए हिंदी को राजभाषा माना जा सकता है। वैसे संविधान की अष्टीम सूची में कुल 22 आधिकारिक भाषाएं हैं। ये भाषाएं हैं– कशमिरी, सिंबंधी, पंजाबी, हिंदी, बंगाली, आसामी, उडिघ्या, गुजराती, मराठी, कन्नड़, तेलुगु, तमिल, मलयालम, उर्दू, संस्कृत, नेपाली, मणिपुरी, कोंकणी,बोडो, डोगरी, मैथिली और संथाली। इनमें से केंद्र सरकार या राज्यै सरकार स्था नानुसार किसी भी भाषा को आधिकारिक भाषा के रूप में चयनित कर सकती हैं। भारत की केंद्र सरकार द्वारा अपने आधिकारिक कार्यों के किलए देवनागरी भाषा में लिखित हिंदी एवं रोमन में लिखित अंग्रेजी को आधिकारिक भाषा के रूप में चुना हुआ है। इसके अतिरिक्त अलग अलग राज्यों द्वारा स्थाोनीय भाषा के अनुसार अलग अलग आधिकारिक भाषाओं को चुना हुआ है।

राष्ट्र भाषा हिंदी से संबंधित प्रमुख बिंदु

1. राष्ट्रभाषा एक केवल संचार का माध्यम नहीं है बल्कि यह एक सांस्कृतिक, व्यावहारिक व आत्म–सम्मानजनक शब्द है।
2. राष्ट्रभाषा समाज के विविध रूपों के बीच आपसी सांस्कृतिक स्तर पर देश को जोड़ने का काम करती है।
3. राष्ट्रभाषा के माध्यम से नए देश व निर्माण भावना सशक्त स्थापित करना।

राष्ट्रभाषा का प्रचार किसी के द्वारा नहीं किया जाता है। राष्ट्रभाषा सारे देश की संपर्क भाषा होती है। इसका व्यापक प्रचार होता है।

राष्ट्रभाषा हमेशा भावात्मक ही हो सकती है क्योंकि इसके साथ जनता का भावात्मक लगाव होता है।

राष्ट्रभाषा का महत्व ज्यादा होता है और इसे जनता के मन में बैठाया जा सकता है।

1885 ई. में कांग्रेस की स्थापना हुई। इसे देश के सांस्कृतिक और जनतांत्रिक भाव को प्रकट किया। जैसे– देश राष्ट्रहवाद, जाति संघर्ष और श्रमिक संघ।

1917 ई. के लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कहा, ष्व्यक्ति से राष्ट्र निर्माण नहीं हो सकता है और जिसका विचार है कि हिंदी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है।ष इससे भारतीय संस्कृति की झलक मिलती है।

9. महात्मा गांधी राष्ट्र के लिए राष्ट्रभाषा को नितांत आवश्यक मानते थे। उनका कहना था, ''राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।'' गांधीजी हिंदी के प्रश्न को स्वतंत्रता का प्रश्न मानते थे। ''हिंदी का प्रश्न स्वतंत्रता का प्रश्न है।'' उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में सामने रखकर भाषा समस्या का समाधान व निर्णय किया।
10. 1917 ई. में आयोजित गुजरात शिक्षा परिषद के अधिवेशन में अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए गांधीजी ने कहा, ''राष्ट्रभाषा के लिए 5 लक्षण या शर्तें होनी चाहिए।'' जो निम्न हैंरू

1. सार्वदेशिक (राजकीय अधिकारियों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए)।
2. सरलता – जिससे सभी लोग आसानी से उस भाषा को बोलते हों।
3. आर्थिक – जिससे सभी भारतीयों के आपसी भाषिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार हो सकते हों।
4. राष्ट्रीय – जिससे सम्पूर्ण देश का संचालन हो सके।
5. सम्मानजनक – जिसमें अपनी गरिमा होनी चाहिए।

11. वर्ष 1919 ई. के हिंदी साहित्य सम्मेलन के इंदौर अधिवेशन में सभापति पद से भाषण देते हुए गांधीजी ने राष्ट्रभाषा विषय पर जोर दिया। ''मेरा मत है कि हिंदी ही हिंदुस्तान की राष्ट्रभाषा हो सकती है और होनी चाहिए।''
12. इसी अधिवेशन में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि प्रांतीय भाषाओं के प्रोत्साहन के प्रयास होने के साथ ही उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत के परस्पर संपर्क के लिए हिंदी का प्रयोग आवश्यक है। इसके बाद हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दे दी गई।
13. हिंदी के प्रचार के लिए प्रयत्न के रूप में गांधीजी ने अपने सबसे छोटे पुत्र देवदास गांधी को दक्षिण में मद्रास भेजा। गांधीजी की प्रेरणा से देवदास (1927 ई.) एवं वर्धा में राष्ट्रदभाषा प्रचार सभाएं स्थोपित की गई।
14. वर्ष 1925 ई. में कांग्रेस के काकीनाड़ा अधिवेशन में गांधीजी की प्रेरणा से यह प्रस्ताव पारित हुआ कि कांग्रेस की महासमिति का और कार्यकारी समिति की कार्यवाही का माध्यम हिंदी रहेगा। इससे हिंदी आंदोलन को बड़ा बल मिला।

15. वर्ष 1927 ई. में गांधीजी ने लिखा, ''वास्तव में अंग्रेजी ने गोलमाल पैदा कर दिया है जो आम जनता को हमारा काम जल्दी आगे बढ़ने नहीं देता है। हिंदी सीखने से इंकार करते हैं। जवाब हिंदी–दक्षिण हिंदी में भी तीन महीने के अंदर सीखी जा सकती है।''
16. वर्ष 1931 ई. में गांधीजी ने पुनः लिखा, ''यदि स्वराज प्राप्ति के लिए कोई भाषा आवश्यक है और वह केवल उनके लिए है तो संपर्क भाषा अवश्य हो सकती है। यदि वह करोड़ों लोगों तक, करोड़ों निरक्षरों तक, उपससपवदे तक पहुँच सकती है तो संपर्क भाषा केवल हिंदी हो सकती है। संपर्क भाषा के रूप में हिंदी की सेवा आवश्यक है।''
17. वर्ष 1936 ई. में गांधीजी ने कहा, ''यदि हिंदी राष्ट्रभाषा न मानी गई तो तो कोई दूसरी भाषा तो हिंदी ही बन सकती है क्योंकि जो स्थान हिंदी का है वह कोई दूसरी भाषा ले नहीं सकती।''
18. वर्ष 1937 ई. में देश के कुछ राज्यों की कांग्रेस मंत्रालयों में हिंदी की पढ़ाई को प्रोत्साहित करने का संकल्प लिया गया। जैसे–जैसे स्वतंत्रता संग्राम तीव्र हुआ वैसे–वैसे हिंदी आंदोलन जोर पकड़ता गया।
19. 20वीं सदी के चौथे दशक तक हिंदी आंदोलन ने राष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण कर लिया था। वर्ष 1942 से 1945 के समय ऐसा था जब देश में स्वतंत्रता के लहर सबसे मजबूत मोर्चे पर थी। उस समय हिंदी में लिखे गए नारे शायद किसी और भाषा में नहीं थे।

राष्ट्रभाषा के प्रचार के साथ राष्ट्रभाषा के विरोध के स्वर भी उठे पर उन्होंने के प्रयास को विफल नहीं कर सके।

राष्ट्रभाषा से संबंधित धार्मिक सामाजिक संस्थाएं

नाम	मुख्यारलय	स्थायपना	संस्थारपक
ब्रह्म समाज	कलकत्तास	1818	राजाराम मोहन राय
प्रार्थना समाज	बंबई	1867	आत्म्रंग पांडुरंग
आर्य समाज	बंबई	1875	दयानंद सरस्वमती
थियोसोफिल सोसाइटी	अड़यार, मद्रास	1895	कर्नल एचएस ऑलकआ एवं मैडम बलावत्स की
सनातन धर्म सभी (भारत धर्म महामंडल 1902 में नाम परिवर्तित)	वाराणसी	1895	पं.दीनदयाल शर्मा
रामकृष्ण. मिशन	बेलुर	1897	विवेकानंद

साहित्यिक संस्थाएं

नागरी प्रचारिणी सभा	काशी	1893	सं.श्यासमसुंदर दास, रामनारायण
		मिश्र, शिवकुमार सिंह	
हिंदी साहित्य् सम्मेसलन	प्रयाग	1910	मदन मोहन मालवीय
गुजरात विद्यापीठ	अहमदाबाद	1920	
बिहार विद्यापीठ	पटना	1921	
हिंदुस्ता्नी एकेडमी	इलाहाबाद	1927	
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा (पूर्व नाम हिंदी साहितिय सम्मोलन)	मद्रास	1927	
हिंदी विद्यापीठ	देवघर	1929	
राष्ट्रिभाषा प्रचार समिति	वर्धा	1936	
महाराष्ट्रय राष्ट्रसभाषा सभा	पुणे	1937	
बंबई हिंदी विद्यापीठ	बंबई	1938	
असम राष्ट्रवभाषा प्रचार समिति	गुवाहटी	1938	
बिहार राष्ट्रदभाषा परिषद	पटना	1951	
अखिल भारतीय हिंदी संस्थाा संघ	नई दिल्ली	1964	
नागरी लिपि परिषद	नई दिल्ली	1975	

NOTES

स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान जो छोटे बड़े नेता राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में हिंदी को अपनाने के मुद्दे पर सहमत थे, उनमें से अधिकांश गैर–हिंदी भाषी नेता स्वतंत्रता मिलने के बाद हिंदी को राष्ट्रेभाषा बनाने के नाम पर विरोध करने लगे।

यहाँ तक कि संविधान सभा में केवल हिंदी पर विचार नहीं हुआ – राष्ट्रभाषा और राजभाषा के नाम पर जो बहस चली 11 सितम्बर 1949 ई. से 14 सितम्बर, 1949 ई. तक हुई, उसमें हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत एवं हिन्दुस्तानी के दावे पर विचार किया गया।

किन्तु संघर्ष की स्थिति सिर्फ हिंदी एवं अंग्रेजी के समर्थकों के बीच ही देखने को मिली। हिंदी समर्थकों की भी दो गुट थे –

प्रथम – देवनागरी लिपि वाली हिंदी के समर्थक थे।

द्वितीय– (महात्मा गांधी, जे. एल. नेहरू, अबुल कलाम आजाद आदि)

दूसरा गुट दो लिपियों वाली हिन्दुस्तानी के पक्ष में था। उनका मानना था कि भारत एक विविधतापूर्ण भाषा, जिसे देश के बहुत थोड़े–से अंश (अधिकतर 1 या 2:) ही पढ़–लिख और समझ सकते थे, देश की राजभाषा नहीं बन सकती थी।

लेकिन व्यवहारिक अंग्रेजी को छोड़ने में भी द्वंद्व था। लगभग 150 वर्षों से अंग्रेजी प्रशासन और उच्च शिक्षा की भाषा रही थी। हिंदी देश की 46: जनता की भाषा थी। राजभाषा बनने के लिए हिंदी के पक्ष मजबूत थे, प्रतिरोधक भाषाओं की भी सर्वथा उपेक्षा नहीं की जा सकती थी।

संविधान निर्माताओं ने इस समस्या को हल करने के लिए राजभाषा की समस्या का

NOTES

हल करने की कोशिश की। संविधान सभा ने लम्बी बहस के बाद विपक्ष की अस्वीकृति के बावजूद हिंदी के पक्ष में अपना फैसला दिया और फैसलाकारी विरोध एवं हिंदी समर्थकों के बीच मुंशी–आयंगर फॉर्मूला के बीच समझौते के परिणामस्वरूप सामने आया, जिसकी प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार थीं –

1. हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं बल्कि राजभाषा होगी।
2. संविधान लागू होने के दिन से 15 वर्ष की अवधि तक अंग्रेजी बनी रहेगी।
3. अनुच्छेद 351 में हिंदी के विकास की नीति को स्पष्ट कर दिया गया।
4. संविधान में भाषा विशेष उपबंध अनु. 120, अनु. 210 एवं भाषा विशेष एक पूर्ण–भाग 17 (राजभाषा) के अनु. 343 से 351 तक एवं 8वीं अनुसूची में दिए गए हैं। संविधान के ये भाषा विशेष उपबंध हिंदी, अंग्रेजी एवं प्रादेशिक भाषाओं के परस्पर विरोधी दावों के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करते हैं।

NOTES

एक भाषा कई देशों की राष्ट्रभाषा भी हो सकती है जैसे अमेरिका, इंग्लैंड तथा कनाडा इत्यादि कई देशों की राष्ट्रभाषा है। संविधान में हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा न दिए जाने के लिए उसकी व्यापकता को देखते हुए उसे राजभाषा कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में हिंदी राष्ट्रभाषा की गरिमा को प्राप्त नहीं है, बल्कि उसकी भूमिका राष्ट्रभाषा की नहीं बल्कि सरकारी प्रयोजन की भाषा है। महात्मा गांधी जी के अनुसार, किसी देश की राष्ट्रभाषा वही हो सकती है, जो उसकी आमजनता के लिए सहज और सुगम होय जिसको बोलने वाले बहुसंख्यक हों और जिसे देश के विभिन्न भागों में समझा जा सके। उनके अनुसार भारत जैसे बहुभाषी देश में हिंदी ही राष्ट्रभाषा के निर्धारण की भूमिका में मुख्य भाषा हो सकती है। इसलिए यह प्रश्न निरर्थक है कि राष्ट्रभाषा, राजभाषा, सम्बंधी समाज नीति में क्या वास्तविक पहलू का है, आवश्यकता हिंदी को अधिक व्यवहार में लाने की है।

■■

माड्यूल – 4

हिंदी का शब्दए भंडार एवं शब्द कोश
इकाई – 8 शब्द सम्पदा का महत्व

➢ शब्द और भाषा का संबंध

हिंदी शब्द भंडार का मतलब है, हिंदी भाषा में इस्तेमाल होने वाले शब्दों का समूह. वहीं, शब्दकोश एक किताब है जिसमें शब्दों की वर्तनी, अर्थ, परिभाषा, व्याकरण, व्युत्पत्ति, प्रयोग, और पदार्थ आदि का संग्रह होता है। दो या दो से अधिक वर्णों के मेल से शब्द का निर्माण होता है, और शब्दों के संयोजन से भाषा का निर्माण होता है। शब्दों को हम भाषा की प्राणवायु भी कह सकते हैं, क्योंकि शब्दों के बिना भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है। हिंदी साहित्य और हिंदी भाषा में उन शब्दों का संकलन, जिसमें पर्यायवाची, विलोम, एकार्थी, अनेकार्थी, समरूपी भिन्नार्थक और अनेक शब्दों के लिए एक शब्द सम्मिलित होते हैं, 'शब्द भंडार' कहलाता है।

भाषा में वाक्यों में शब्दों के प्रयोग के आधार पर शब्दों को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जाता है–

1. अर्थ की दृष्टि से शब्द भेद
2. प्रयोग की दृष्टि से शब्द भेद
3. उत्पत्ति की दृष्टि से शब्द भेद

1. अर्थ की दृष्टि से शब्द भेद

अर्थ के आधार पर शब्दों को दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है–

(i) **सार्थक शब्द** : वे शब्द जिनके प्रयोग से किसी निश्चित अर्थ की स्पष्टता हो, सार्थक शब्द कहलाते हैं। उदाहरणरू पलंग, संदूक, बोतल, किताब, ठंडा, ब्लैकबोर्ड,

NOTES

कुर्सी, मोबाइल, कंघी, मोमबत्ती, चाय आदि।

(ii) **निरर्थक शब्द** : जब दो या दो से अधिक वर्णों के मेल से बने शब्दों का कोई अर्थ न निकले, तो वे निरर्थक शब्द कहलाते हैं। उदाहरणरू सोलोइय, युफ्सियत, ओसभ, कोकी आदि।

सार्थक शब्द अर्थपूर्ण होते हैं, जबकि निरर्थक शब्दों का कोई स्पष्ट अर्थ नहीं होता।

2. **प्रयोग की दृष्टि से शब्द भेद** : प्रयोग के आधार पर शब्दों को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया गया है–

(i) **विकारी शब्द** : जब किसी शब्द के रूप में लिंग, वचन या कारक के आधार पर परिवर्तन होता है, तो उसे विकारी शब्द कहा जाता है।

1. **लिंग के आधार पर परिवर्तन** : लड़का काम कर रहा है दृ लड़की काम कर रही है।

   लड़का खाना खा रहा है – लड़की खाना खा रही है।

2. **वचन के आधार पर परिवर्तन**

   लड़का खेलता है – लड़के खेलते हैं।

   औरत घर का काम करती है – औरतें घर का काम करती हैं।

3. **कारक के आधार पर परिवर्तन**

   वह आदमी नौकरी करता है – उस आदमी को नौकरी करने दो।

   वह लड़की लिखती है – उस लड़की को लिखने दो।

विकारी शब्द के प्रकार

1. संज्ञा – जैसे राम, गंगा, दिल्ली
2. सर्वनाम – जैसे वह, तुम, मैं
3. विशेषण – जैसे सुंदर, बड़ा, लाल
4. क्रिया – जैसे करना, जाना, पढ़ना

(ii) **अविकारी शब्द** : वे शब्द जिनमें लिंग, वचन या कारक के आधार पर कोई परिवर्तन नहीं होता, अविकारी शब्द कहलाते हैं। उदाहरणरू परंतु, तथा, धीरे–धीरे, अधिक आदि।

अविकारी शब्द के प्रकार

1. क्रिया–विशेषण – जैसे : जल्दी, धीरे, वहाँ
2. सम्बंधबोधक – जैसे : के, पर, में
3. समुच्चयबोधक – जैसे : और, लेकिन, अथवा
4. विस्मयादिबोधक – जैसे : अरे! वाह! हाय!

3. **उत्पत्ति की दृष्टि से शब्द भेद** : उत्पत्ति के आधार पर शब्दों को चार वर्गों में विभाजित किया गया है–

(i) **तत्सम शब्द** : संस्कृत भाषा से सीधे हिंदी में लिए गए शब्द, जिनका रूप और अर्थ संस्कृत के समान ही होता है, तत्सम शब्द कहलाते हैं। उदाहरणरू सूर्य, ग्रह, चंद्रमा, अग्नि, जल आदि।

NOTES

(ii) तद्भव शब्द : संस्कृत के वे शब्द जो विकृत होकर हिंदी में प्रचलित हुए हैं, तद्भव शब्द कहलाते हैं। उदाहरण : सूर्य से सूरज, अग्नि से आग, ग्रह से घर आदि।

(iii) देशज शब्द : विभिन्न प्रांतीय बोलियों से हिंदी में लिए गए शब्द देशज शब्द कहलाते हैं। उदाहरण : चिड़िया, कटोरा, लोटा, जूता, खिचड़ी, तेंदुआ आदि।

(iv) विदेशी शब्द : विदेशी भाषाओं से लिए गए शब्द, जो हिंदी में प्रचलित हो गए हैं, विदेशी शब्द कहलाते हैं।

1. **अंग्रेजी से लिए गए शब्द** : हॉस्पिटल, डॉक्टर, पेन, पेंसिल, कार, स्कूल, कंप्यूटर, ट्रक, टेलीफोन, टिकट।
2. **अरबी से लिए गए शब्द** : असर, किस्मत, खयाल, मतलब, तारीख, कीमत, अमीर, औरत, इज्जत, इलाज, वकील।
3. **तुर्की से लिए गए शब्द** : तोप, काबू, तलाश, बेगम, बारूद, चाकू।
4. **चीनी से लिए गए शब्द** : चाय, पटाखा।

शब्द किसी भी भाषा की मूल इकाई होते हैं। शब्दों के सही प्रयोग से भाषा का सौंदर्य और प्रभाव बढ़ता है। हिंदी भाषा के शब्द भंडार में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों का समावेश इसकी समृद्धि को दर्शाता है। सार्थक और निरर्थक शब्दों के माध्यम से अर्थ की स्पष्टता बनी रहती है। विकारी और अविकारी शब्दों के प्रयोग से भाषा में लचीलापन और व्याकरणिक नियमों का पालन होता है। इस प्रकार, हिंदी भाषा का शब्द भंडार इसकी सांस्कृतिक विरासत और ऐतिहासिक विविधता को भी प्रकट करता है।

शब्दकोश

शब्दकोश एक किताब या ऑनलाइन संसाधन होता है, जिसमें किसी भाषा के शब्दों को व्यवस्थित रूप से सूचीबद्ध किया जाता है। इसमें शब्दों की परिभाषा, उच्चारण, व्युत्पत्ति, व्याकरण, प्रयोग, और समानार्थी शब्द होते हैं। शब्दकोश एकभाषीय, द्विभाषिक, या बहुभाषिक हो सकते हैं।

शब्दकोश देखने की विधि

नीचे लिखे बिंदुओं को ध्यान में रखना आवश्याक होता है–

1. जिस शब्द के बारे में जानकारी प्राप्त करनी है, उसके प्रारंभ का वर्ण देखा जाता है। उसके आधर पर ही शब्द ढूँढ़ा जाता है।
2. शब्दकोश में शब्दों को इस वर्ण–अनुक्रम में दिया जाता है–
   अ, आ, इ, ई, उ, उफ, ट्ट, ए, ऐ, ओ, औ के पश्चात् क से ह तक के सही वर्ण क्रम के अनुसार।
3. क्ष, त्र, ज्ञ को ह के बाद नहीं ढूँढ़ना चाहिए। क्ष, क् और ष का संयुक्त रूप है। अतः क से शुरू होने वाले शब्दों के समाप्त होने पर क्ष से प्रारंभ होने वाले शब्द देखना चाहिए।
4. त्र, त् और र का संयुक्त रूप है। अतः त्र से शुरू होने वाले शब्द त से शुरू होने वाले शब्दों के बाद ही ढूँढ़े जाने चाहिए। त्य से संबंधित शब्द जब समाप्त हो जाते हैं तब त्र से आरंभ होनेवाले शब्द देखे जा सकते हैं।

NOTES

5. ज्ञ, ज् और ञ का संयुक्त रूप है। अतः ज्ञ से शुरू होने वाले शब्दों को ज से शुरू होने वाले शब्दों के बाद ही ढूँढ़ना चाहिए। ज से संयुक्त होकर बनने वाला पहला वर्ण ज्ञ ही है। अतः जौहरी के बाद ही ज्ञ से बनने वाले शब्द देखे जा सकते हैं। ज्ञ के बाद ज्य से बनने वाले शब्द आते हैं।

सब से पहले शब्द संकलन भारत में बने। भारत की यह शानदार परम्परा वेदों जितनीकृकम से कम पाँच हजार वर्षकृपुरानी है। प्रजापति कश्यप का निघण्टु संसार का प्राचीनतम शब्द संकलन है। इस में 18 सौ वैदिक शब्दों को इकट्ठा किया गया है। निघण्टु पर महर्षि यास्क की व्याख्या निरुक्त संसार का पहला शब्दार्थ कोश (डिक्शनरी) एवं विश्वकोश (ऐनसाइक्लोपीडिया) है। इस महान शृंखला की सशक्त कड़ी है छठी या सातवीं सदी में लिखा अमर सिंह कृत नामलिंगानुशासन या त्रिकाण्ड जिसे सारा संसार श्अमरकोशश के नाम से जानता है। अमरकोश को विश्व का सर्वप्रथम समान्तर कोश (थेसेरस) कहा जा सकता है।

भारत के बाहर संसार में शब्द संकलन का एक प्राचीन प्रयास अक्कादियाई संस्कृति की शब्द सूची है। यह शायद ईसा पूर्व सातवीं सदी की रचना है। ईसा से तीसरी सदी पहले की चीनी भाषा का कोश है 'ईर्या'।

आधुनिक कोशों की नींव डाली इंग्लैंड में 1755 में सैमुएल जानसन ने। उन की डिक्शनरी सैमुएल जॉन्संस डिक्शनरी ऑफ इंग्लिश लैंग्वेज ने कोशकारिता को नए आयाम दिए। इस में परिभाषाएँ भी दी गई थीं। असली आधुनिक कोश आया इक्यावन वर्ष बाद 1806 में अमरीका में नोहा वैब्स्टर्स की नोहा वैब्स्टर्स ए कंपैंडियस डिक्शनरी आफ इंग्लिश लैंग्वेज प्रकाशित हुई। इस ने जो स्तर स्थापित किया वह पहले कभी नहीं हुआ था। साहित्यिक शब्दावली के साथ साथ कला और विज्ञान क्षेत्रों को स्थान दिया गया था। कोश को सफल होना ही था, हुआ। वैब्स्टर के बाद अंग्रेजी कोशों के संशोधन और नए कोशों के प्रकाशन का व्यवसाय तेजी से बढ़ने लगा।

शब्दकोश और उसकी अवधारणा पर बात करने और विचार करने से पूर्व शब्द की वर्तनी और परिभाषा पर विचार कर लिया जाना समीचीन होगा। यह शब्द मूलरूप से संस्कृ त भाषा से लिया गया है। संस्कृत के दो भेद हैं– वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत। वैदिक संस्कृत का प्राचीनतम ग्रन्थ है ऋग्वेद। उसमें कोश शब्द का प्रयोग तो हुआ है, पर वहाँ इसका अर्थ 'कोश' से बिलकुल पृथक है। लौकिक संस्कृत में 'कोष' और 'कोश' दोनों शब्दों का प्रयोग मिलता है। व्यु त्पसत्ति की दृष्टि से 'कोश'में 'कुश' धातु है जिसका अर्थ मिलना, जबकि 'कोष' धातु है जिसका अर्थ है खींचना या निकालना।

प्रयोग की दृष्टि से देखें तो संस्कृत साहित्य में दोनों का अन्यान्य अर्थों में, पर्यायवाची के रूप प्रयोग होता रहा हैय जैसे, म्यान भण्डार, शब्द भण्डार, शरीर, पुस्तकालय, मधुपात्र इत्यादि। आधुनिक विद्वान अँगरेजी के शब्द 'डिक्शनरी' के लिए 'कोश' का, और 'ट्रेजर' (खजाने) के लिए 'कोष' का प्रयोग करते हैं। 'कोश के लिए कोश विज्ञान और कोश कला दो शब्द प्रचलित हैं, विज्ञान द्ययोतक हैं'1– सिद्धान्त का और कला द्ययोतक है प्रयोग का'। 'कोश' की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि यह शब्दों का ऐसा संग्रह है जिसमें संग्रहीत शब्दों के सम्बन्ध में जानने योग्य कुछ बातें एकत्र की गई हों

NOTES

अर्थात् जिस संग्रह में शब्द के अर्थ, पर्याय, व्याख्या, उदाहरण आदि हों।2

हिंदी भाषा में 'कोश' शब्द संस्कृत भाषा से ही लिया गया है। संस्कृत भाषा में कोश शब्द दो प्रकार से लिखा जाता है– तालव्य 'श' (कोश) और मूर्द्धन्य 'ष' (कोष) से।3

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के मतानुसार इन दोनों रूपों के अर्थों में भी काफी अन्तर आ गया है।4 हिंदी भाषा के शब्द–कोशों में 'कोश' के मुख्यतः निम्नलिखित अर्थ दिये गये है – कोश– (पु.सं.1) अंडः अंडा, 2) अंड–कोश, 3) डिब्बाः गोलक, 4) फूल की कली। 5) आवरणः गिलाफ।6) वेदान्त के अनुसार अन्नमय पाँच सम्पुट जो मनुष्यों के शरीर के अन्दर होते हैं।7) संचित धन।8) वह ग्रंथ जिसमें किसी विशेष क्रम से बहुत से शब्द और उसके अलग–अलग अर्थ या पर्याय हों। अभिधान। (डिक्शनरी, लेक्सिकन), 9) रेशम का कोआरू कुसियारी।10) दे, कोषाणु।

अंग्रेजी भाषा में शब्द–कोश के अर्थ में 'डिक्शनरी' शब्द प्रयुक्त होता है। डिक्शनरी लैटिनभाषा के शब्द डिक्शनेरियस से बना है, जिसका अर्थ होता है– शब्दों का संग्रह। आंग्लभाषा में यह शब्द सबसे पहली बार जान गारलेंड ने अपने शब्द–कोश के लिए प्रयुक्त किया था, जिसमें उसने लैटिनभाषा के शब्दों को कंठस्थ करने के उद्देश्य से शब्दों का संग्रह किया था।6

➢ कोश का उद्गम और विकास

यह मान्यता है, कि भारत ज्ञान– विज्ञान के हर क्षेत्र में विश्व में अग्रणी रहा है। वेद और वैदिक साहित्य के रूप में ज्ञान के आदित्य का उदय यहीं हुआ और यहीं से उसका प्रकाश पूरे वसुधा में फैला। कोश विज्ञान का विकास निश्चित रूप से भारत में ही हुआ। भाषा वैज्ञानिक डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, ''भाषा विज्ञान की अन्य शाखाओं की भाँति ही कोश निर्माण भी सबसे पहले अपने प्रारम्भिक रूप में भारतवर्ष में विकसित हुआ।''

शब्दकोश को निश्चित रूप से अगर परिभाषा में बांधा जाए, या पारिभाषित किया जाए तो कहा जाए कि शब्दकोश एक बड़ी सूची या ऐसा ग्रंथ है, जिसमें शब्दों की वर्तनी, उनकी व्युकत्पबत्ति , व्याकरण निर्देश, अर्थ, परिभाषा, प्रयोग और पदार्थ आदि का सन्निवेश हो। शब्दकोश एक भाषीय हो सकते हैं, द्विभाषिक हो सकते हैं या बहुभाषिक हो सकते हैं। अधिकतर शब्दकोशों में शब्दों के उच्चारण के लिये भी व्यवस्था होती है, जैसे– अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपि में, देवनागरी में या आडियो संचिका के रूप में, कुछ शब्दकोशों में चित्रों का सहारा भी लिया जाता है। अलग–अलग कार्य–क्षेत्रों के लिये अलग–अलग शब्दकोश हो सकते हैंय जैसे– विज्ञान शब्दकोश, चिकित्सा शब्दकोश, विधि ाक शब्दकोश, गणित का शब्दकोश आदि। अनेकानेक प्रकार के कोश हो सकते हैं, जिनका किसी विशेष संदर्भ में अथवा संबंध में निर्माण और प्रयोग होगा या हो सकता है। सभ्यता और संस्कृति के उदय से ही मानव जान गया था कि भाव के सही संप्रेषण के लिए सही अभिव्यक्ति आवश्यक और सही अभिव्यक्ति के लिए सही शब्द का चयन आवश्यक है और शब्द के चयन के लिए शब्दों के संकलन आवश्यक हैं शब्दों और भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता समझ कर आरंभिक लिपियों के उदय से बहुत पहले ही आदमी ने शब्दों का लेखा जोखा रखना शुरू कर दिया था इसके लिए उसने कोश बनाना शुरू किया कोश

में शब्दों को इकट्ठा किया जाता है और ये शब्द विभिन्न कालखण्डों, संस्कृतियों, साहित्य, समाज इत्यादि क्षेत्रों से आते हैं।

NOTES

➢ शब्दकोश की आवश्यकता एवं महत्व

शब्दकोश एक खास तरह की किताब होती है। अँगरेजी में इसे डिक्शनरी कहा जाता है। शब्दकोश में शब्दों को एक के बाद एक अकारादि क्रम से लिखा जाता है, जैसेः अंक, अंकगणित, अंकुर, अंकुश, या – अंग, अंगद, अंगारा या – आग, आगत, आगम, या – कक्ष, कक्षा, कगार, खग, खगोल, खचखच। जिस ग्रंथ में शब्दों के अर्थ, पर्याय, व्याख्यायें आदि होती है उन्हें शब्दकोश कहते हैं और जिस कोश में किसी शब्द के संबंध की विशेष ज्ञातव्य बातें विस्तार से दी जाती है या विषयवार उनका विस्तृत विवेचन होता है, उन्हें ज्ञान कोश अथवा विश्वकोश कहते हैं।

शब्दकोश चाहे जिसका हो, चाहे जैसा हो, उसमें समान रूप से हर शब्द के बाद बताया जाता है कि वह शब्द संज्ञा है या सर्वनाम या क्रिया आदि। इसके बाद उस का अर्थ लिखा जाता है। बड़े कोशों में शब्द का अर्थ समझाने के लिए उसकी परिभाषा भी होती है। कई बार यह भी बताया जाता है कि वह शब्द कैसे बना यानी उसकी व्युत्पसत्ति के बारे में भी जानकारी लिखी जाती है। यानी वो जो शब्द है वो हमारी अपनी भाषा का शब्द है या किसी और भाषा से आया है।

किसी भी किताब को पढ़ते समय हर एक अनजान शब्द के अर्थ को समझना बहुत जरूरी होता है। तभी किताब पढ़ने से हमें पूरा ज्ञान मिल पायेगा। मान लीजिए मां शब्द है यह तो हम अच्छी तरह जानते हैं कि मां, क्या होती है, अम्मा, मम्मी, माई, माता लिखे हैं तो भी कोई मुश्किल नहीं होती ये शब्द हम बचपन से ही जानते हैं लेकिन कहीं जननी लिखा होगा तो हम में से कुछ को उसके मायने शायद न पता हों या कुछ के लिए इसका ये अर्थ स्पष्ट न हो। तब हम 'जननी' शब्द के बारे में किसी कोश का रुख करेंगे। वहां लिखा होगा– जन्म देने वाली, मां, माता, इस प्रकार हमें जननी का अर्थ किसी कोश से पता चल सकेगा, हालाकि शब्दों के अर्थ को जानने का यही तरीका प्रचलित भी है।

बारिश के लिए कई शब्द हम बचपन से ही जान जाते हैं, जैसे– वर्षा, बरखा, बरसात, बूंदाबांदी । इसी प्रकार वर्षा ऋतु के अनेक शब्द हमें पता होते हैं, जैसे– चौमासा, बरसात। लेकिन पावस और वृष्टि जैसे शब्द शायद हमें नए लगें, इन का अर्थ भी बारिश या वर्षा ऋतु है– यह कोश ही बताता है। यानी जिन शब्दों का प्रचलन हमारे समाज में बोलचाल के रूप में कम होता है हम उसका अर्थ शब्द कोशों से ही जान सकते हैं। चौमासा तो ठीक है, लेकिन चातुर्मास आ गया तो मुश्किल बढ़ जाती है। तब भी हमें कोश देखना चाहिए। पहले जब साधु संत देश भर में घूमा करते थे, तो बारिश के मौसम में कच्चे रास्ते चलने लायक नहीं रहते थे इसलिए वे लोग किसी उपयुक्त स्थान पर चार महीनों का पड़ाव करते थे। शब्दकोश हमें बताएगा कि बरसात में पड़ाव की इस प्रथा को ही चातुर्मास कहते हैं। हर एक भाषा में प्रायः एक ही शब्द के कई मायने होते हैं तब भी संकट उत्पन्न हो जाता है। हिंदी के एक शुरुआती शब्द अंक को ही ले लीजिए इसके क्या क्या मायने हो सकते हैं ये हमें शब्दकोश से ही पता चलता है। जैसे–संख्या, गोदी, चिह्न, नाटक का एक भाग।

➢ bdkb & 9 fgUnh 'kCnk dk ifjp;

शब्दार्थ एवं व्युहत्पत्ति

व्युशत्पवत्ति से तात्पर्य शब्द की उत्पत्ति की मूलभाषा से अथवा शब्द की जननी भाषा से ह, व्यु त्पबत्ति में भाषा का नाम संक्षिप्ति में दिया जाता है। अगर शब्द अरबी और फारसी दोनों का है तो व्युथत्पीत्ति अरबी ही दी जाती है, क्योंकि ऐसे शब्दों को फारसी ने अरबी से ही लिए हैं। तत्सम और तद्भव दोनों रूपों की व्युात्पनत्ति संस्कृत ही दी जाती है। यदि शब्द हिंदी के हैं तो उनकी व्युेत्प।त्ति नहीं दी जाती है। लेकिन यदि शब्द दो भाषाओं के योग से बने हैं, जैसे– दादागिरी त्र दादा (हिं.) गिरी (फा.) तो ऐसे शब्दों को शब्दकोश में इस प्रकार दिया गया है– दादागिरी हिंध्फा,

शब्दकोशों में व्याकरणिक कोटि की बात करें तो इनमें भी प्रायः भिन्नता होती है अथवा ये भी कह सकते हैं कि हर दूसरे शब्दकोश में पहले के मुकाबले कुछ नयापन मिलेगा। जो शब्द अभी तक हिंदी में 'अव्यय' लिखे जाते थे, उनको कई शब्दकोशों में कई विभागों में बाँट दिया है, या कहें की अलग–अलग तरीके से विभागों की रचना की गई है जो भिन्न–भिन्न हैं। जैसे– क्रिया विशेषण, निपात, परसर्ग, पूर्वप्रत्यय, परप्रत्यय आदि।

➢ आधुनिक कोश की विधाएँ

वर्तमान युग ने कोशविद्या को अत्यन्त व्यापक परिवेश में विकसित किया। सामान्य रूप से उसकी दो मोटी–मोटी विधाएँ कही जा सकती हैं– (1) शब्दकोश और (2) ज्ञानकोश। शब्दकोश के स्वरूप का बहुमुखी प्रवाह निरंतर प्रौढ़ता की ओर बढ़ता लक्षित होता रहा है। आज की कोशविद्या का विकसित स्वरूप भाषा विज्ञान, व्याकरणशास्त्र, साहित्य, अर्थविज्ञान, शब्दप्रयोगीय, ऐतिहासिक विकास, सन्दर्भसापेक्ष अर्थविकास और नाना शास्त्रों तथा विज्ञानों में प्रयुक्त विशिष्ट अर्थों के बौद्धिक और जागरूक शब्दार्थ संकलन का पुंजीकृत परिणाम है।

शब्दकोश

हमारे परिचित भाषाओं के कोशों में ऑक्सफोर्ड–इंग्लिश–डिक्शनरी के परिशीलन में उपर्युक्त समस्त प्रवृत्तियों का उत्कृष्ट निदर्शन देखा जा सकता है। उसमें शब्दों के सही उच्चारण का संकेत–चिह्नों से विशुद्ध और परिनिष्ठित बोध भी कराया है। योरप के उन्नत और समृद्ध देशों की प्रायः सभी भाषाओं में विकासित स्तर की कोशविद्या के आधार पर उत्कृष्ट, विशाल, प्रमाणिक और सम्पन्न कोशों का निर्माण हो चुका है और उन दोशों में कोशनिर्माण के लिये ऐसे स्थायी संस्थान प्रतिष्ठापित किए जा चुके हैं जिनमें अबाध गति से सर्वदा कार्य चलता रहता है। लब्धप्रतिष्ठा और बडेध्–बडेध विद्वानों का सहयोग तो उन संस्थानों को मिलता ही है, जागरूक जनता भी सहयोग देती है। अंग्रेजी डिक्शनरी तथा अन्य भाषाओं में निर्मित कोशकारों के रचना–विधान–मूलक वैशिष्टयों का अध्ययन करने से अद्यतन कोशों में निम्ननिर्दिष्ट बातों का अनुयोग आवश्यक लगता है–

क) उच्चाणमसूचक संकेतचिह्नों के माध्यम से शब्दों के स्वरों व्यंजनों का पूर्णतः शुद्ध और परिनिष्ठित उच्चारण स्वरूप बताना और स्वराघात बलगात का निर्देश करते हुए यतासम्भव उच्चार्य अंश के अक्षरों की बद्धता और अबद्धता का परिचय देनाय

ख) व्याकरण संबंद्ध उपयोगी और आवश्यक निर्देश देनाय

NOTES

ग) शब्दों की इतिहास– संबंद्ध वैज्ञानिककृव्युत्पत्ति प्रदर्शित करनाय

घ) परिवारकृसंबंद्ध अथवा परिवारमुक्त निकट या दूर के शब्दों के साथ शब्दरूप और अर्थरूप का तुलनात्मक पक्ष उपस्थित करनाय

ङ) शब्दों के विभिन्न और पृथक्कृत नाना अर्थों को अधिककृन्यून प्रयोग क्रमानुसार सूचित करनाय

च) अप्रयुक्त–शब्दो अथवा शब्दप्रयोगों की विलोपसूचना देनाय

छ) शब्दों के पर्याय बतानाय और

ज) संगत अर्थों के समर्थनार्थ उदाहरण देनाय

झ) चित्रों, रेखाचित्रों, मानचित्रों आदि के द्वारा अर्थ को अधिक स्पष्ट करना।

'आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी' का नव्यतम और बृहत्तम संस्करण आधुनिक कोशविद्या की प्रायः सभी विशेषताओं से संपन्न है। नागरीप्रचारिणी सभा के हिंदी शब्दसागर के अतिरिक्त हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रकाश्यमान मानक शब्दकोश एक विस्तृत आयास है। हिंदी कोशकला के लब्धप्रतिष्ठ सम्पादक रामचन्द्र वर्मा के इस प्रशंसनीय कार्य का उपजीव्य भी मुख्यातः शब्दसागर ही है। उसका मूल कलेवर तात्विक रूप में शब्दसागर से ही अधिकांशतः परिकलित है। हिंदी के अन्य कोशों में भी अधिकांश सामग्री इसी कोश से ली गयी है। थोडे–बहुत मुख्यतः संस्कृत कोशों से और यदा–कदा अन्यत्र से शब्दों और अर्थों को आवश्यक अनावश्यक रूप में ठूँस दिया गया है। ज्ञानमण्डल के बृहद् हिंदी शब्दकोश में पेटेवाली प्रणाली शुरू की गई है। परन्तु वह पद्धति संस्कृत के कोशों में जिनका निर्माण पश्चिमी विद्वानों के प्रयास से आरम्भ हुआ था, सैकड़ो वर्ष पूर्व से प्रचलित हो गई थी। पर आज भी, नव्य या आधुनिक भारतीय भाषाओं के कोश उस स्तर तक नहीं पहुँच पाए हैं जहाँ तक आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी अथवा रूसी, अमेरिकन, जर्मन, इताली, फरांसीसी आदि भाषाओं के उत्कृष्ट और अत्यन्त विकसित कोश पहुँच चुके हैं।

कोशरचना की ऊपर वर्णित विधा को हम साधारणतः सामान्य भाषा शब्दकोश कह सकते हैं। इस प्रकार शब्दकोश एकभाषी, द्विभाषी, त्रिभाषी और बहुभाषी भी होते हैं। बहुभाषी शब्दकोशों में तुलनात्मक शब्दकोश भी यूरोपीय भाषाओं में ऐतिहासिक और तुलनात्मक भाषाविज्ञान की प्रौढ़ उपलब्धियों से प्रमाणीकृत रूप में निर्मित हो चुके हैं। इनमें मुख्य रूप से भाषावैज्ञानिक अनुशीलन और शोध के परिणामस्वरूप उपलब्ध सामग्री का नियोजन किया गया है। ऐसे तुलनात्मक कोश भी आज बन चुके हैं जिनमें प्राचीन भाषाओं की तुलना मिलती है। ऐसे भी कोश प्रकाशित हैं जिनमें एक से अधिक मुल परिवार की अनेक भाषाओं के शब्दों का तुलनात्मक परिशीलन किया गया है।

➢ **शब्दकोशों के नाना रूप**

शब्दकोशों के और भी नाना रूप आज विकसित हो चुके हैं और हो रहे हैं। वैज्ञानिक और शास्त्रीय विषयों के सामूहिक और उस–उस विषय के अनुसार शब्दकोश भी आज सभी समृद्ध भाषाओं में बनते जा रहे हैं। शास्त्रों और विज्ञानशाखाओं के परिभाषिक शब्दकोश भी निर्मित हो चुके हैं और हो रहे हैं। इन शब्दकोशों की रचना एक भाषा में भी होती है और दो या अनेक भाषाओं में भी। कुछ में केवल पर्याय शब्द रहते हैं और कुछ

NOTES

में व्याख्याएँ अथवा परिभाषाएँ भी दी जाती है। विज्ञान और तकनीकी या प्रविधिक विषयों से संबद्ध नाना पारिभाषिक शब्दकोशों में व्याख्यात्मक परिभाषाओं तथा कभी कभी अन्य साधनों की सहायता से भी बिलकुल सही अर्थ का बोध कराया जाता है। दर्शन, भाषाविज्ञान, मनोविज्ञान, समाजविज्ञान और समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि समस्त आधुनिक विद्याओं के कोश विश्व की विविध सम्पन्न भाषाओं में विशेषज्ञों की सहायता से बनाए जा रहे हैं और इस प्रकृति के सैकडों–हजारों कोश भी बन चुके हैं। शब्दार्थकोश सम्बन्धी प्रकृति के अतिरिक्त इनमें ज्ञानकोशात्मक तत्वों की विस्तृत या लघु व्याख्याएँ भी संमिश्रित रहती है। प्राचीन शास्त्रों और दर्शनों आदि के विशिष्ट एवं पारिभाषिक शब्दों के कोश भी बने हैं और बनाए जा रहे हैं। अनके अतिरिक्त एक–एक ग्रन्थ के शब्दार्थ कोश (यथा मानस शब्दावली) और एक–एक लेखक के साहित्य की शब्दावली भी योरप, अमेरिका और भारत आदि में संकलित हो रही है। इनमें उत्तम कोटि के कोशकारों ने ग्रन्थसन्दर्भों के संस्करणात्मक संकेत भी दिए हैं। अकारादि वर्णानुसारी अनुक्रमणिकात्मक उन शब्दसूचियों का जिनके अर्थ नहीं दिए जाते हैं पर सन्दर्भ संकेत रहता हैं। युरोप और इंगलैड में ऐसी शब्द सूचियाँ अनेक बनीं। शेक्सपियर द्वारा प्रयुक्त शब्दों की ऐसी अनुक्रमणिका परम प्रसिद्ध है। वैदिक शब्दों की और ऋक्संहिता में प्रयुक्त पदों की ऐसी शब्दसूचियों के अनेक संकलन पहले ही बन चुके हैं। व्याकरण महाभाष्य की भी एक एक ऐसी शब्दानुक्रमणिका प्रकाशित है। परन्तु इनमें अर्थ न होने के कारण यहाँ उनका विवेचन नहीं किया जा रहा है।

➢ **ज्ञानकोश**

कोश की एक दूसरी विधा ज्ञानकोश भी विकसित हुई है। इसके वृहत्तम और उत्कष्ट रूप को इन्साइक्लोपिडिया कहा गया है। हिंदी में इसके लिये विश्वकोश शब्द प्रयुक्त और गृहीत हो गया है। यह शब्द बँगाल विश्वकोशकार ने कदाचित् सर्वप्रथम बंगाल के ज्ञानकोश के लिये प्रयुक्त किया। उसका एक हिंदी संस्करण हिंदी विश्वकोश के नाम से नए सिरे से प्रकाशित हुआ। हिंदी में यह शब्द प्रयुक्त होने लगा है। यद्यपि हिंदी के प्रथम किशोरोपयोगी ज्ञानकोश (अपूर्ण) को श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी तथा पं० कृष्ण वल्लभ द्विवेदि द्वारा विश्वभारती अभिधान दिया गया तो भी ज्ञान कोश, ज्ञानदीपिका, विश्वदर्शन, विश्वविद्यालय भण्डार आदि संज्ञाओं का प्रयोग भी ज्ञानकोश के लिये हुआ है। स्वयं सरकार भी बालशिक्षोपयोगी ज्ञानकोशात्मक ग्रन्थ का प्रकाशन 'ज्ञानसरोवर' नाम से कर रही है। परन्तु इन्साइक्लोपीडिया के अनुवाद रूप में विवकोश शब्द ही प्रचलित हो गया। उडीया के एक विश्वकोश का नाम शब्दार्थानुवाद के अनुसार ज्ञान मण्डल रखा भी गया। ऐसा लगता है कि बृहद् परिवेश के व्यापक ज्ञान का परिभाषिक और विशिष्ट शब्दों के माध्यम से ज्ञान देनेवाले ग्रन्थ का इन्साइक्लोपीडिया या विश्वकोश अभिधान निर्धारित हुआ और अपेक्षाकृ त लघुतरकोशों को ज्ञानकोश आदि विभिन्न नाम दिए गए। अंग्रेजी आदि भाषाओं में बुक ऑफ नालेज, डिक्शनरी आव जनरल नालेज आदि शीर्षकों के अन्तर्गत नाना प्रकार के छोटे बडे विश्वकोश अथवा ज्ञानकोश बने हैं और आज भी निरन्तर प्रकाशित एवं विकसित होते जा रहे हैं। इतना ही नहीं इन्साइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन ऐण्ड एथिक्स आदि विषयविशेष से संबंद्ध विश्वकोशों की संख्या भी बहुत ही बडी है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम

NOTES

से निर्मित अनेक सामान्य विश्वकोश और विशष विश्वकोश भी आज उपलब्ध हैं।

इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, इन्साइक्लोपीडिया अमेरिकाना अंग्रेजी के ऐसे विश्वकोश हैं। अंग्रेजी के सामान्य विश्वकोशों द्वारा इनकी प्रमाणिकता और संमान्यता सर्वस्वीकृत है। निरन्तर इनके संशोधित, संवर्धित तथा परिष्कृत संस्करण निकलते रहते हैं। इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के दो परिशिष्ट ग्रन्थ भी हैं जो प्रकाशित होते रहते हैं और जो नूतन संस्करण की सामग्री के रूप में सातत्य भाव से संकलित होते रहते हैं। इंग्लैंड में इन्साइक्लोपीडिया के पहले से ही ज्ञानकोशात्मक कोशों के नाना रूप बनने लगे थे।

➢ **ज्ञानकोशों के प्रकार**

ज्ञानकोशों के भी इतने अधिक प्रकार और पद्धतियाँ हैं जिनकी चर्चा का यहाँ अवसर नहीं है। चरितकोश, कथाकोश इतिहासकोश, ऐतिहासिक कालकोश, जीवनचरितकोश पुराख्यानकोश, पौराणिक–ख्यातपुरुषकोश आदि आदि प्रकार के विविध नामरूपात्मक ज्ञानकोशों की बहुत सी विधाएँ विकसित और प्रचलित हो चुकी हैं। यहाँ प्रसंगतः ज्ञानकोशों का संकेतात्मक नामनिर्देश मात्र कर दिया जा रहा है। हम इस प्रसंग को यहीं समाप्त करते हैं और शब्दर्थकोश से संबंद्ध प्रकृत विषय की चर्चा पर लौट आते हैं।

विविध प्रकार के शब्दकोश

स्क्रिप्ट त्रुटिः 'main' ऐसा कोई मॉड्यूल नहीं है। आजकल ऐसे कम्प्यूटर प्रोग्राम उपलब्ध हैं जो शब्दकोश के सारे काम करते हैं। वे कागज पर मुद्रित नहीं हैं बल्कि किसी विशिष्ट फाइल–फॉर्मट में हैं और किसी श्डिक्शनरी सॉफ्टवेयरश के द्वारा प्रयोक्ता को शब्दार्थ ढूढने में मदद करते हैं। इनमें कुछ ऐसी सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं जो परम्परागत शब्दकोशों में सम्भव ही नहीं हैय जैसे शब्द का उच्चारण ध्वनि के माध्यम से देना आदि। शब्दकोशों के कुछ प्रकार ये हैं–

सामान्य शब्दकोश

विशिष्ट शब्दकोश – गणित, विज्ञान, विधि, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा आदि के शब्दकोश।

पारिभाषिक शब्दकोश–

इनमें किसी क्षेत्र (विषय) के प्रमुख शब्दों के संक्षिप्त और मुख्य अर्थ दिए गए होते हैं।

प्राकृतिक भाषा संसाधन के लिए शब्दकोश –

ये मानव के बजाय किसी कम्प्यूतर प्रोग्राम द्वारा प्रयोग को ध्यान में रखकर बनाई जातीं हैं।

अन्य प्रकार के शब्दयकोश –

द्विभाषी शब्दकोश

एलेक्ट्रानिक शब्दकोश

ज्ञानकोषीय शब्दकोश (Encyclopedic dictionary)

बाल शब्दकोश तथा वृहत् शब्दकोश आदि

तुकान्त शब्दकोश (Rhyming dictionary)

व्युत्क्रम शन्दकोश (Reverse dictionary)

➢ पारिभाषिक शब्दावली

भाषाई प्रयोग के आधार पर वर्णों के मेल से शब्दों का निर्माण होता है या किसी उद्देश्यय विशेष के लिए निर्माण किया जाता है। सामान्यरत : सामाजिक व्यवहार में परस्पर विचार–विनिमय के लिए भाषा ही सर्वोत्तेम माध्यीम है। शब्दों। के मौखिक एवं लिखित दोनों रूप महत्विपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी भाषा की समृद्धि उसकी शब्द–संपदा और उसके प्रयोग पर निर्भर करती है। प्रयोग के आधार पर शब्दोंश के तीन प्रकार माने गए हैं प्रथम सामान्य् शब्दह, द्वितीय अर्द्ध पारिभाषिक शब्द तथा तृतीय पारिभाषिक शब्द। जिन शब्दोंभ का प्रयोग लोगों द्वारा प्रतिदिन सामान्यत दैनिक व्येवहार में किया जाता है वे सामान्या शब्दश हैं जैसे वस्तुबओं, स्थापनों, संबंधों आदि से संबंधित शब्दद। जो शब्दम सामान्य एवं पारिभाषिक दोनों रूप में मानव कार्य व्यायपार के लिए प्रयोग में लाए जाते हैं वे अर्द्ध पारिभाषिक शब्दद्य कहे जाते हैं। जिन शब्दोंय का प्रयोग किसी न किसी निश्चियत अर्थ के लिए किया जाता है और वह अपरिवर्तनीय होता है ऐसे शब्दद पारिभाषिक शब्दश होते हैं। शब्दन भाषा की संपदा के रूप में सामाजिक, वैज्ञानिक आदि आवश्यकताओं के लिए प्रयोग में लाए जाते हैं। आवश्यगकता के अनुसार बहुत बार शब्दों को आयातित किया जाता है तथा सप्रयास निर्माण भी किया जाता है। पारिभाषिक शब्द स्वयं में विशिष्ट अर्थ को व्यक्त करने वाले होते हैं। 'पारिभाषिक' शब्द की रचना 'परिभाषा' शब्द में 'इक' प्रत्यय के जुड़ने से हुई है। व्याकरणिक दृष्टि से 'पारिभाषिक' एक विशेषण है, जिसका आशय है– परिभाषा संबंधी। व्युत्पत्ति की दृष्टि से 'परिभाषा' शब्द की निर्मिति 'भाष' धातु में 'परि' उपसर्ग जोड़कर हुई है। 'भाष' धातु का आशय है–कथन और 'परि' उपसर्ग विशिष्टता का अर्थ देता है। इस प्रकार 'परिभाषा' का आशय विशेष शब्द या कथन की पहचान के स्पष्टीकरण से है। पारिभाषिक शब्द का संबंध किसी भी विषय अथवा विषय वस्तु, अर्थ, क्षेत्र या संदर्भ से हो सकता है। इस प्रकार पारिभाषिक शब्द विशिष्ट शब्द है। पारिभाषिक शब्द के पर्याय के रूप में 'तकनीकी' शब्द भी प्रयोग किया जाता है। पारिभाषिक या तकनीकी शब्द के लिए अंग्रेजी भाषा में 'टेक्निकल टर्म' का प्रयोग होता है।

पारिभाषिक शब्द वे शब्द होते हैं, जो किसी विशिष्ट क्षेत्र में एक विशिष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं। ये क्षेत्र चिकित्सा, विज्ञान, दर्शन, साहित्य, विधि व वाणिज्य आदि हो सकते हैं। कई बार एक ही शब्द कई क्षेत्रों में मिलता है। परंतु प्रत्येक क्षेत्र में वह शब्द एक विशेष अर्थ को लिए हुए होता है। जैसे– सेल (ब्मसस) शब्द का लोक प्रचलित अर्थ है कोठरी या छोटा कमरा, कक्ष, प्रकोष्टह इत्यासदि परंतु जीव विज्ञान, प्राणी विज्ञान, भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में तथा साहित्य के क्षेत्र में अलग–अलग है। परंतु अनेकार्थी होते हुए भी किसी विशिष्ट क्षेत्र में इस शब्द का प्रयोग करने पर यह एक विशिष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति करता है और उस क्षेत्र में कार्य कर रहे लोगों को भ्रम की स्थिति से बचाता है, यही पारिभाषिक शब्दावली का स्व रूप है।

दूसरे शब्दों में, पारिभाषिक शब्दावली से आशय ऐसे मानक एवं आधुनिकीकृत शब्दों से है जो अंग्रेजी भाषा के शब्दों का समानार्थी, सही और स्पष्ट भाव व्यक्त करने में सक्षम एवं समर्थ हों। आज हिंदी का प्रयोग विज्ञान, कला, वाणिज्य, व्यापार, उद्योग, प्रशासन एवं

NOTES

चिकित्सा आदि अनेक क्षेत्रों में हो रहा हैं अतः हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली भी अलग–अलग हैं।

पारिभाषिक शब्द की परिभाषा, पारिभाषिक ऐसा शब्द हैं, जो–

1. विषय विशेष में प्रयुक्त किया जाता हो।
2. उस विषय विशेष से संबद्ध किसी सुनिश्चित धारणा को प्रकट करता हो।
3. जिसकी अर्थ सीमा सुनिश्चित हो।
4. तथा जो अन्य पारिभाषिक शब्द तथा उनके प्रयोगों से स्पष्टतः भिन्न हो।

➢ पारिभाषिक शब्द की विशेषताएं

1. पारिभाषिक शब्द का अर्थ सुनिर्धारित होता हैं।
2. जिस विषय या सिद्धांत के लिए हैं, उसी से संबद्ध या वही अर्थ व्यक्त करता हैं।
3. पारिभाषिक शब्द छोटा हो–प्रयोग में सुविधा हो।
4. सामान्यतः पारिभाषिक शब्द मूल हो–व्याख्यात्मक नहीं। जैसे श्अहिंसाश एक पारिभाषिक शब्द है, इसके स्थान पर श्किसी के प्रति हिंसा भाव न रखनाश नहीं हो सकता, यह पारिभाषिक शब्द श्अहिंसाश की व्याख्या हैं।
5. एक ही विषय क्षेत्र से संबद्ध पारिभाषिक शब्दों में रूप की दृष्टि से सादृश्य हो तो संगत लगता है जैसे विज्ञान के विषय में 'ऑक्सीडेशन', 'रिडक्शन', 'हाइड्रोजीनेशन' आदि शब्दों के अपने विशेष अर्थ तो हैं ही, ये पारिभाषिक शब्द भी हैं, साथ ही इनके रूपों में एक सादृश्य हैं।
6. पारिभाषिक शब्द ऐसा हो जिससे उसके अर्थ से संबद्ध छाया को प्रकट करने वाले शब्द बनाये जा सकें। जैसे भाषा विज्ञान में एक पारिभाषिक शब्द हैं 'स्वन'। इससे 'स्वनिम', 'स्वनिमिकी', सहस्वन आदि शब्दों का निर्माण हुआ तथा ये स्वन से संबंध रखने वाली विविध धारणाओं को प्रकट करने में भी सक्षम हैं।

➢ पारिभाषिक शब्द की परिभाषाएं

जब किसी शब्द का प्रयोग एक सुनिश्चित अर्थ में किया जाता है और लक्षणा–व्यंजना में उनका कोई अन्य अर्थ निकालने की कोशिश नहीं होतीय उनके अर्थ को पूरी तरह सीमित कर दिया जाता है। तब वह पारिभाषिक शब्द कहलाता है। इस प्रकार की विशेष शब्दावली ही पारिभाषिक शब्दावली कहलाती है।

डॉ. रघुवीर सहाय

"जिन शब्दों की सीमा बाँध दी जाती है। वे पारिभाषिक शब्द हो जाते हैं और जिनकी सीमा नहीं बाँधी जाती वे साधारण शब्द होते हैं।'' (गार्गी गुप्त, संपादक, पारिभाषिक शब्दावली की विकास यात्रा, भारतीय अनुवाद परिषद्, नई दिल्ली, 1992, पृष्ठ 19)

डॉ. गोपाल शर्मा

"पारिभाषिक शब्द वह शब्द है जो किसी ज्ञान विशेष के क्षेत्र में एक निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होता हो तथा जिसका अर्थ एक परिभाषा द्वारा स्थिर किया गया हो।'' (गोपाल शर्मा, सामाजिक विज्ञानों की पारिभाषिक शब्दावली का समीक्षात्मक अध्ययन, एस चाँद एंड कंपनी, दिल्ली, 1968, पृष्ठ 192)

डॉ. भोलानाथ तिवारी

"पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्दों को कहते हैं जो रसायन, भौतिकी, दर्शन, राजनीति आदि विभिन्न विज्ञान या शास्त्रों के शब्द होते हैं तथा जो अपने–अपने क्षेत्रों में विशिष्ट अर्थ में सुनिश्चित रूप से पारिभाषिक होते हैं। अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से निश्चित रूप से पारिभाषिक होने के कारण ही ये शब्द पारिभाषिक शब्द कहे जाते हैं।'' (भोलानाथ तिवारी, पारिभाषिक शब्दावली : कुछ समस्याएं, शब्दकार, दिल्ली, 1978, पृष्ठ 16)

श्री जीवन नायक

"विशेष ज्ञान के क्षेत्र में जब कोई शब्द निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होता है तो उसे पारिभाषिक शब्द कहते हैं।" (रवींद्रनाथ श्रीवास्तव एवं कृष्ण कुमार गोस्वामी, संपादक, अनुवादरू सिद्धांत और समस्याएं, आलेख प्रकाशन, दिल्ली, 1985, पृष्ठ 131)

डॉ. दंगल झाल्टे

"जो शब्द सामान्य व्यवहार की भाषा में प्रयुक्त न होकर ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में विषय एवं संदर्भ के अनुरूप विशिष्ट किंतु निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं। इसे तकनीकी शब्दावली भी कह सकते हैं।"(प्रयोजनमूलक हिंदीरू सिद्धांत और प्रयोग, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ 100)

➢ **पारिभाषिक शब्दों के प्रमुख गुण**

पारिभाषिक शब्द का अर्थ नियत निश्चित होना चाहिए और एक अर्थ को व्यक्त करने वाला केवल एक ही शब्द होना चाहिए। 1. नियतार्थता, (2) परस्पर अपवर्णिता।

1. निर्यतार्थता से अभिप्राय है कि शब्द विशेष एक विशेष अर्थ का ही द्योतक होना चाहिए।
2. परस्पतर अपवर्णित से अभिप्राय है कि एक शब्द के यदि दो या दो से अधिक अर्थ हों तो उनमें अर्थ स्वभाव की छाया का सूक्ष्म अन्तर अवश्य होता है। अतः विषम परिस्थिति के अनुसार उचित शब्द का चयन करना चाहिए।

पारिभाषिक शब्दों के अन्य गुण

1. पारिभाषिक शब्दों के अर्थ में संदिग्धता, अस्पष्टता, दुर्बोधता नहीं होनी चाहिए।
2. एक संकल्पना के लिए एक ही पारिभाषिक शब्द होना चाहिए। पारिभाषिक शब्दों को बोलने का ढंग–प्रकृति और व्याकरण के नियम उस भाषा के अनुसार होना चाहिए। जिस भाषा में उसका प्रयोग किया जा रहा है।
3. पारिभाषिक शब्द छोटा व सरल होना चाहिए जिससे कि वह स्पष्ट रूप में सरलतापूर्वक याद हो सकेगा।
4. पारिभाषिक शब्दों में उर्वरता होनी चाहिए तथा एक श्रेणी विशेष के पारिभाषिक शब्द एक ही प्रकार के होने चाहिए।
5. पारिभाषिक शब्द यथासम्भव 'एक शब्दश और श्मूल शब्दश हों परन्तु जहाँ एक शब्द से काम न चलता हो वहाँ संयुक्त या मिश्रित शब्द का प्रयोग करना चाहिए।
6. पारिभाषिक शब्दों का चयन करते समय यह ध्यातव्य रहे कि उनका जन–जीवन से सम्बन्ध हो। सामान्य जन में जो विदेशी शब्द रूढ़ हो गये हैं, उन्हें यथावत्

स्वीकार कर लेना चाहिएय यथा–टिकट, रेल, रेडियो आदि।

7. पारिभाषिक शब्द व्याख्यात्मक नहीं होने चाहिए।

➢ **पारिभाषिक शब्दावली संबंधी विभिन्न विचार–दृष्टिया**

पारिभाषिक शब्दावली के विकासक्रम में आजादी के बाद भारत में पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के क्षेत्र में व्यक्तिगत एवं संस्थागत स्तर पर जो प्रयास हुए, उनमें प्राप्त मत–भिन्नता से आप पिछली इकाई में परिचित हो चुके हैं। इस मत–विभेद का कारण था हिंदी भाषा–भाषी क्षेत्र में भारत का तत्कालीन विविध–रूपी असाधारण परिदृश्य। जन–सामान्य अंग्रेजी भाषा नहीं जानता था और शिक्षित वर्ग अंग्रेजी भाषा एवं वैज्ञानिक शब्दों से परिचित था। खड़ी बोली में संस्कृत शब्दों का अधिकतम प्रयोग था और हिंदी–भाषी प्रदेशों में लोग हिंदी–उर्दू से परिचित थे। आम भाषा–व्यवहार में हिंदी–उर्दू के बीच का भाषा–रूप अर्थात् हिंदुस्तानी का प्रयोग अधिक था। इसी विविध–रूपी परिदृश्य में पारिभाषिक शब्दावली के संबंध में शुद्धतावादी, हिंदुस्तानीवादी, अंग्रेजीवादी और समन्वयवादी विचारधाराएँ उभरकर सामने आईं। इन्हें 'पारिभाषिक शब्दावली संप्रदायों की संज्ञा प्रदान की गई है। इन शब्दावली–संप्रदायों के विषय में क्रमशः विवेचन निम्न प्रकार से है–

1. **शुद्धतावादी दृष्टिकोण**

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण संबंधी शुद्धतावादी विचारधारा को 'पुनरुद्धारवादी', 'संस्कृतवादी', 'राष्ट्रीयतावादी', 'प्राचीनतावादी' विचारधारा आदि अन्य अनेक नामों से भी जाना जाता है। इस वर्ग के लोग भारतीय भाषाओं की समस्त पारिभाषिक शब्दावली संस्कृत भाषा से लेने के पक्ष में हैं। इस विचारधारा में विश्वास रखने वाले लोगों का मानना है कि संस्कृत में शब्द–रचना की अपार क्षमता है, इसलिए किन्हीं अन्य स्रोतों से शब्द–ग्रहण करने की जरूर नहीं है। वे यथासाध्य अधिक से अधिक पारिभाषिकशब्दों को प्राचीन संस्कृत वाङ्मय से लेना चाहते हैं, किंतु जिन आधुनिक पारिभाषिक शब्दों के लिए संस्कृत में प्रतिशब्द उपलब्ध नहीं हो पाते हैं, उनके लिए समास पद्धति द्वारा दो या अधिक संस्कृत शब्दों के मेल से, अथवा संस्कृत शब्द में उपसर्ग–प्रत्यय आदि जोड़कर या फिर आवश्यक होने पर नई धातुएँ बनाकर उनमें प्रत्यय–उपसर्ग जोड़कर नए तत्सम शब्द (संस्कृतनिष्ठ पारिभाषिक शब्दावली) निर्मित करने के पक्षधर हैं। डॉ. रघुवीर ने इस दृष्टिकोण का नेतृत्व किया। वे भारतीय शब्द–भंडार को संस्कृतनिष्ठ बनाने के प्रबल समर्थक थे। यह पुनरुद्धारवादी संप्रदाय इसलिए कहलाता है, क्योंकि इस विचार–दृष्टि वालों ने प्राचीन भारतीय शास्त्रों में उपलब्ध शब्दों का उद्धार किया। अंग्रेजी के वैज्ञानिक–तकनीकी शब्दों के समतुल्य नए तत्सम शब्दों की रचना–प्रक्रिया में प्राचीन भाषा संस्कृत के व्याकरण को साधन बनाते हुए प्राचीन व्याकरणिक पद्धति को अपनाया। शुद्धतावादी संप्रदाय के प्रमुख समर्थक डॉ. रघुवीर का अपनी भाषा को विदेशी शब्दों के प्रभाव से मुक्त रखने के प्रति आग्रह था। वे संसार की अन्य किसी भी भाषा की तुलना में हिंदी के शब्दों में पारदर्शिता स्वीकार करते थे। उनका कहना था कि संस्कृत भाषा शब्द–निर्माण का अनंत स्रोत है, क्योंकि इसकी 520 धातुओं, 20 उपसर्गों एवं 80 प्रत्ययों की सहायता से लाखों–करोड़ों शब्द बनाए जा सकते हैं। उनका विश्वास था कि इनके समुचित प्रयोग से पारिभाषिक शब्दों

NOTES

की क्रमबद्ध रचना की जा सकती है। डॉ. रघुवीर का शब्दावली निर्माण संबंधी कार्य उल्लेखनीय है। संस्कृत भाषा व्याकरण के नियमों के आधार और शब्द–निर्माण की उर्वरा–शक्ति का प्रयोग करते हुए डॉ.रघुवीर ने लगभग प्रत्येक पारिभाषिक शब्द के लिए नए शब्दों का निर्माण किया एवं पुराने शब्दों का जीर्णोद्धार किया। उन्होंने चार भागों में'। ए कंप्रेहेंसिव इग्लिस हिंदी डिक्श नरी' (आंग्ल भारतीय महाकोश) तैयार किया जिसमें प्रत्येक शब्द का पर्याय देवनागरी, बांग्ला, कन्नड़ और तमिल लिपियों में भी दिया गया है। अर्थशास्त्र शब्दकोश, वाणिज्य शब्दकोश, तर्कशास्त्र शब्दकोश, सांख्यिकी शब्दकोश, वैज्ञानिक शब्दकोश, पक्षिनामावली, भेषज–संहिता शब्दकोश, मंत्रालय कोश, विधिकोश, वानिकी कृषि कोश, अंग्रेजी–हिंदी वृहतकोश आदि का निर्माण किया है। वे मृत्यु–पर्यंत पाँच लाख पारिभाषिक शब्दों का निर्माण कर चुके थे, जबकि उनकी इच्छा अंग्रेजी के लाखों शब्दों के हिंदी पर्याय बनाने की थी। अपने शुद्धतावादी दृष्टि के आधार पर उन्होंने 1955 में प्रकाशित अपने प्रसिद्ध कोश ए कंप्रेहेंसिव इंग्लिस हिंदी डिक्शुनरी में अंग्रेजी शब्दों के प्रतिशब्द दिए हैं और पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के सिद्धांतों की विस्तृत व्याख्या की है।

शब्द–रचना संबंधी मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. अंग्रेजी भाषा से शब्द लेने के बजाए वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत तथापालि आदि भाषाओं में विरचित ग्रंथों के रूप में भारतीय परंपरा में विद्यमान उचित शब्दावली को ग्रहण करना। उदाहरण के लिए ऑक्ट्रोय के लिए 'राजतरंगिणी' से 'द्वारादेय' शब्द लेना। इसी प्रकार तेहसील के लिए अशोक के शिलालेख से 'भुक्ति' अम्पामयर के लिए महाभारत के 'प्रमाण पुरुष 'अउशन (aution)' के लिए कौटिल्य के अर्थशास्त्र से 'कोशविक्रय', अर्नेस्टप मनी (earnest money) के लिए याज्ञवल्क्य के 'सत्यंकार', विल (will) के लिए मनुस्मृति से 'रिक्थपत्र', इन्वेशन (invention) के लिए पाणिनि के 'उपज्ञा' आदि शब्दों को लेना।

2. भारतीय परंपरा का अनुसरण करते हुए डॉ. रघुवीर ने अंग्रेजी भाषा के तकनीकी शब्दों के लिए वर्तमान भाषा–साधनों (अर्थात प्रचलित देशी–विदेशी शब्दों) के स्थान पर नए शब्दों का बड़ी संख्याक में निर्माण किया। उदाहरण के लिए

- फेडेरल (federal)' के लिए प्रचलित 'संघीय' शब्द के स्थान पर 'संघानीय' शब्द
- टाइमबार्ड (timebarred)' के लिए प्रचलित शब्द 'काल–बाधित' के स्थान पर 'काल तिरोहित'
- डेफिसिट फाईनांसिग (deficit financing) के लिए 'घाटे की वित्त–व्यवस्था' के स्थान पर 'हीनार्थ प्रबंधन'
- फाउंटेन पेन (fountain pen) के लिए 'मसीपथ'
- जनेरल इलेक्श (general election) के लिए 'सामान्य निर्वाचन' आदि।

2. हिंदुस्तानीवादी दृष्टिकोण

पारिभाषिक शब्दावली के क्षेत्र में भाषा में प्रयोगवाद का पक्षधर वर्ग भी था। इस वर्ग का दैनिक प्रयोग के हिंदी–उर्दू के संयुक्त रूप 'हिंदुस्तानी भाषा' के शब्दों का प्रयोग करने में विश्वास था, ताकि देश की सामासिक संस्कृति का प्रचार हो। इसे 'प्रयोगवादी विचारधारा' के नाम से भी जाना जाता है। इस विचार–दृष्टि के पोषकों की मान्यता थी

NOTES

कि हमारी मिश्रित संस्कृति के अनुरूप शब्दावली भी मिश्रित होनी चाहिए। इस कारण इस विचारधारा का संस्कृत, अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी तथा तद्भव–देशज तत्वों की सहायता से पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के प्रयोग में विश्वास था। हैदराबाद स्थित उस्मानिया विश्वविद्यालय और इलाहाबाद की हिंदुस्तानी कल्चर सोसाइटी के डॉ.जाफर हसन और पंडित सुंदरलाल थे इस विचारधारा के प्रवर्तक थे। इस विचारधारा का प्रतिनिधित्व करने वाली शब्दावलियों (उस्मानिया विश्वविद्यालय से 1950–52 में प्रकाशित 'हिंदी टर्म्स ऑफ सोशियोलॉजी' और हिंदुस्तानी कल्चर सोसाइटी, इलाहाबाद से 1954 में प्रकाशित पुस्तिका 'हिंदुस्तानी के लिए शब्दयाती असूल') से इनके द्वारा निर्मित शब्द एवं सिद्धांतों का पता चलता है। हालाँकि इनका उद्देश्य पारिभाषिक शब्दावली को बोलचाल की भाषा एवं व्याकरण के निकट लाकर सरलशब्द विकसित करना था, किंतु इन दोनों संस्थाओं की विचारधाराओं में कमोबेश अंतर भी था।

इकाई – 11 हिन्दी शब्दकोश

हिंदुस्ता नी विचारधारा के विद्वानों ने तद्भव एवं विदेशी शब्दों में उर्दू व्याकरण में उपलब्ध पद्धति से 'ना', 'इयाना' प्रत्यय लगाकर कई शब्द बनाए गए। जैसे–

- Centralise के लिए 'केंद्रियाना'
- Acknowledgement के लिए 'रसीदियाना', (शुद्धतावादी विद्वानों ने इसके लिए पावती शब्द दिया)
- normalise के लिए 'नार्मलियाना'
- legalise के लिए 'कानूनियाना'
- individualise के लिए 'एकजियाना'
- atomize के लिए 'अणुयाना'
- standardize के लिए 'स्टेन्डर्डियाना
- particularize के लिए 'खासियाना' इत्युादि।

इसी प्रकार, 'अलगाई', 'रचनाई', 'रचनित', 'संकटिक', 'ठगित', 'तजित' आदि शब्द भी हैं, जिनमें संस्कृत के प्रत्ययों का प्रयोग किया गया है। वैसे नए शब्दों के साथ–साथ तत्सम एवं तद्भव शब्द भी दिए गए,जैसे

Reaction– प्रतिक्रिया, पलटकारी

Revolution– क्रांति, इन्कलाब

Absolutism – अरोकवाद, निरंकुशवाद

Adaptation –अनुकूलकरण, अपनाव

Schedule– अनुसूची, फेहरिस्त

Adabdoned दृतजित

Favoutism – पासकारी

Habitation – रहाव

Retrospect–पिछदर्शन

Sportine – खेलिक

Dogmatism – हठमतवाद)।

इसके अतिउरिक्ति अंग्रेजी धातुओं के आधार पर नए शब्द भी रचे गए, जैसे– Market–मार्केट, Nagetive–निगेटिव, Abnormal–नार्महीनता, Political–पोलिटिकी, Objective–ऑब्जेक्टिवता आदि।

NOTES

2. अंतरराष्ट्रीयतावादी दृष्टिकोण

डॉ. रघुवीर की संस्कृत–आधारित 'शुद्धतावादी विचारधारा' और शब्दावली के देशीकरण के रूप में 'हिंदुस्तानीवादी विचारधारा' के साथ–साथ धीरे–धीरे एक अन्य विचारधारा भी विकसित हुई। इस विचारधारा के पोषक अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण के पक्षधर थे। इस विचारधारा को 'शब्द–ग्रहणवादी', 'आदानवादी' एवं 'अंग्रेजीवादी' विचारधारा की संज्ञा भी प्रदान की जाती है। इस मत के समर्थकों में अधिकांशतः वैज्ञानिक, इंजीनियर, डॉक्टर, वकील और सरकारी अधिकारी थे। ये अंग्रेजी तथा अंतरराष्ट्रीय शब्दावली को लेने के पक्षधर थे। शब्द–ग्रहण संबंधी इस धारणा को दो पक्षों से देखा जा सकता है – (1) शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण करना लेना, अथवा (2) अंग्रेजी शब्दों में उपसर्ग–प्रत्यय लगाकर अथवा अपनी भाषा की प्रकृति के अनुसार ध्वनि परिवर्तन के रूप में यत्किंचित् परिवर्तन करके शब्दों को अनुकूलित रूप में चलन में लाना। जैसे–

Radio–'रेडियो', Oxygen–'ऑक्सीजन', Station–'स्टेशन', Police–'पुलिस', Litre–'लीटर', Meter–'मीटर', Heater–'हीटर', Radar–'राडार', Focus–'फोकस' आदि असंख्य शब्द को ज्यों के त्यों शब्द ग्रहण करने के उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। Commedy–'कामदी', Technique='तकनीक', Tragedy–'त्रासदी', Intrim–'अंतरिम', Academic–'अकादमी' आदि शब्द ध्वनि–परिवर्तन के रूप में अनुकूलन का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

3. लोकवादी दृष्टिकोण

पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में जहाँ शुद्धतावादी, हिंदुस्तानीवादी और अंतरराष्ट्रीयतावादी विचार–दृष्टियाँ प्रभावी थीं, वहीं लोकवादी दृष्टि भी देखने को मिलती है। इस प्रवृत्ति को 'स्वभाषावादी विचारधारा' के नाम से भी जाना जाता है। इस विचार–दृष्टि के समर्थकों की आधारभूमि जन–प्रयोग से शब्द ग्रहण करने अथवा जन–प्रचलित शब्दों के योग से शब्द निर्माण की रही है। पारिभाषिक शब्दों के निर्माण संबंधी इस दृष्टि को हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुकूल कहा जा सकता है। 'infiltrator' के लिए 'घुसपैठिया' शब्द एवं 'कममिबजवत' के लिए 'दलबदलू' अथवा 'आयाराम गयाराम' शब्द का प्रयोग करना जन–प्रयोग से शब्द ग्रहण करने की लोकवादी विचारदृष्टि का परिचायक है। इसी प्रकार, detention–'नजरबंद', Power House–'बिजलीघर', Post office–'डाकघर', Train–'रेलगाड़ी', 'कतंजि–'मसौदा' और 'maternity home–'जच्चाघर' आदि। जन–प्रचलित शब्दों के योग से निर्मित पारिभाषिक शब्द हैं। इसी भाँति कुछ अन्य शब्द हैं– 'बिचौलिया', 'फिरौती', 'हुंडी', 'मंदड़िया', 'तेजड़िया' आदि।

4. समन्वयवादी दृष्टिकोण

पारिभाषिक शब्दावली के संबंध में शुद्धतावादी दृष्टि से निर्मित शब्दावली की दुरूहता, हिंदुस्तानी विचारधारा द्वारा शब्दावली का देशीकरण, लोकवादी विचारधारा द्वारा शब्द–निर्माण की सीमित संभावनाएँ और अंतरराष्ट्रीयतावादी विचारधारा की अपनी सीमाएँ अतिवादिता की द्योतक हैं। इस कारण अराजकता की स्थिति का पैदा होना स्वाभाविक

NOTES

था। वास्तव में किसी भी भाषा–समाज को अतिशुद्धतावादी नियमों या भाषा के सहज नियमों को तोड़–मरोड़कर या विदेशी शब्द ग्रहण करना स्वीकार्य नहीं है। ऐसे में शब्द–रचना की कठिन प्रक्रियाओं को छोड़ने एवं विभिन्न विचारधाराओं के सही बिंदुओं के चयन से समन्वय–स्थली पर पहुँचने का मार्ग ही शेष रह जाता है। समन्वयवादी मत के आधार पर सुविधा एवं भारतीय भाषाओं की प्रकृति को दृष्टि में रखते हुए शब्द ग्रहण एवं नव–शब्द निर्माण का समन्वय किया जा सकता है। शब्दों को अंतरराष्ट्रीय, अंग्रेजी, संस्कृत, प्राकृत, आधुनिक भाषाओं के प्राचीन एवं मध्यकालीन साहित्य के अतिरिक्त अन्य सभी भारतीय भाषाओं और बोलियों की शब्दावली से लिया जा सकता है। महात्मा गांधी, डॉ. राजेंद्र प्रसाद एवं पंडित जवाहरलाल नेहरू जैसी महान विभूतियों ने पारिभाषिक शब्दावली में सरलता, स्पष्टता एवं सूक्ष्मार्थकता जैसे पक्षों को महत्व दिया है।

समन्वयवादी विचार–दृष्टि के विद्वानों का विश्वास है कि

1. जो शब्द अपने मूल रूप से ही चल सकें उनका यथावत स्वीकरण कर लेना चाहिए। शब्द ग्रहण करते समय जिनमें आवश्यक हो, उनमें अपनी भाषा की ध्वनि व्यवस्था के अनुरूप गृहीत शब्द का अनुकूलन कर लेना चाहिए (जैसे academy शब्द को ग्रहण करते हुए उसका लिप्यंतरण 'एकेडेमी' न करके हिंदी भाषा की ध्वनि–व्यवस्था के अनुकूल इसका अनुकूलन 'अकादमी' कर देना) अन्यथा उनमें उपसर्ग–प्रत्यय जोड़कर नए शब्द बना लिए जाएँ। (जैसे 'विबने' शब्द को ग्रहण करते हुए उसके लिप्यंतरित रूप 'फोकस' में उपसर्ग–प्रत्यय जोड़कर 'फोकसन', 'फोकसित' आदि शब्द बनाना)।
2. शब्द–ग्रहण अथवा नव–शब्द निर्माण में सर्वप्रथम संस्कृत अन्यथा विभिन्न भारतीय भाषाओं एवं बोलियों में उपलब्ध उपयुक्त शब्दों को यथासंभव ग्रहण कर लेना चाहिए एवं उनकी सहायता से नव–शब्द सृजित किए जाएँ। नई शब्द–रचना करते समय अपनी भाषा के शब्दों अथवा संस्कृत धातुओं में उपसर्ग–प्रत्यय लगाकर एवं व्याकरणिक नियमों के अनुसार संधि–समास का प्रयोग करते हुए नए तकनीकी शब्दों की रचना की जानी चाहिए। ऐसा करते समय वर्ण–संकर शब्दों (जैसे 'ऑक्सीकृत' (वगपकपेमक), 'रेडियोधर्मी' (radio&active) का प्रयोग भी ग्राह्य है। किंतु इस प्रकार के नव–निर्मित शब्द में अटपटापन नहीं है। वे भाषा में सरलता से चलने लायक होने चाहिए।
3. विशुद्धतावाद अथवा अनियंत्रित प्रयोगवाद संबंधी अतिवादी स्थितियों–परिस्थितियों से बचकर सहजता, सरलता, सूक्ष्मार्थकता तथा सुबोधता के मार्ग पर चलते हुए पारिभाषिक शब्दावली के प्रचलन के प्रति समुचित आस्था।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के स्थायी आयोग द्वारा स्वीकृत वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली निर्माण के सिद्धांत

1) अंतरराष्ट्रीय शब्दों को यथासंभव उनके प्रचलित अंग्रेजी रूपों में ही अपनाना चाहिए और हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं की प्रकृति के अनुसार ही उनका लिप्यंतरण करना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय शब्दावली के अंतर्गत निम्नलिखित उदाहरण दिए जा सकते हैंरू

क) तत्वों और यौगिकों के नाम जैसे हाइड्रोजन, कार्बन, कार्बन डाइऑक्साइड आदिय
ख) तौल और माप की इकाइयाँ और भौतिक परिमाण की इकाइयाँ, जैसे डाइन, कैलोरी, ऐम्पियर आदिय
ग) ऐसे शब्द जो व्यक्तियों के नाम पर बनाए गए हैं जैसे फारेनहाइट के नाम पर फारेनहाइट तापक्रम, वोल्टा के नाम पर वोल्टमीटर और ऐम्पियर के नाम पर ऐम्पियर आदिय
घ) वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान, भूविज्ञान आदि की द्विपदी नामावलीय
ङ) स्थिरांक जैसे आदिय
च) ऐसे अन्य शब्द जिनका आम तौर पर सारे संसार में व्यवहार हो रहा है जैसे रेडियो, पेट्रोल, रेडार, इलेक्ट्रॉन, प्रोटोन, न्यूट्रॉन आदिय।
छ) गणित और विज्ञान की अन्य शाखाओं के संख्यांक, प्रतीक चिह्न और सूत्र जैसे, साइन, कोसाइन, टेन्जेन्ट, लॉग आदि (गणितीय संक्रियाओं में प्रयुक्त अक्षर रोमन या ग्रीक वर्णमाला में होने चाहिए) य

2) प्रतीक, रोमन लिपि में अंतरराष्ट्रीय रूप में ही रखे जाएँगे परंतु संक्षिप्त रूप नागरी और मानक रूपों में भी, विशेषतः साधारण तौल और माप में लिखे जा सकते हैं, जैसे सेंटीमीटर का प्रतीक बउण् हिंदी में भी ऐसे ही प्रयुक्त होगा परंतु इसका संक्षिप्त रूप से.मी. हो सकता है। यह सिद्धांत बाल–साहित्य और लोकप्रिय पुस्तकों में अपनाया जाएगा परंतु विज्ञान और शिल्प–विज्ञान की मानक पुस्तकों में केवल अंतरराष्ट्रीय प्रतीक जैसे बउण् ही प्रयुक्त होना चाहिए।
3) ज्यामितीय आकृतियों में भारतीय लिपियों के अक्षर प्रयुक्त किए जा सकते हैं, जैसेः परंतु त्रिकोणमितीय संबंधों में केवल रोमन अथवा ग्रीक अक्षर ही प्रयुक्त करने चाहिए, जैसे साइन। क्रॉस आदि।
4) संकल्पनाओं को व्यक्त करने वाले शब्दों का सामान्यतः अनुवाद किया जाना चाहिए।
5) हिंदी पर्यायों का चुनाव करते समय सरलता, अर्थ की परिशुद्धता और सुबोधता का विशेष ध्यान रखनाचाहिए। सुधार विरोधी और विशुद्धिवादी प्रवृत्तियों से बचना चाहिए।
6) सभी भारतीय भाषाओं के शब्दों में यथासंभव अधिकाधिक एकरूपता लाना ही इनका उद्देश्य होना चाहिए और इसके लिए ऐसे शब्द अपनाने चाहिए जोरू
(क) अधिक से अधिक प्रादेशिक भाषाओं में प्रयुक्त होते हों, और
(ख) संस्कृत धातुओं पर आधारित हों।
7) ऐसे देशी शब्द जो सामान्य प्रयोग के वैज्ञानिक शब्दों के स्थान पर हमारी भाषाओं में प्रचलित हो गए हैं, जैसे telegraph, telegram के लिए तार, continent के लिए महाद्वीप, ंजवउ के लिए परमाणु आदि। ये सब इसी रूप में व्यवहार किए जाने चाहिएँ।
8) अंग्रेजी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी आदि भाषाओं के ऐसे विदेशी शब्द जो भारतीय भाषाओं

NOTES

में प्रचलित हो गए हैं, जैसे इंजन, मशीन, लावा, मीटर, लीटर, प्रिज्म, टॉर्च आदि इसी रूप में अपनाए जाने चाहिएँ।

9) **अंतरराष्ट्रीय शब्दों का देवनागरी लिपि में लिप्यंतरण** — अंग्रेजी शब्दों का लिप्यंतरण इतना जटिल नहीं होना चाहिए कि उसके कारण वर्तमान देवनागरी वर्णों में नए चिह्न व प्रतीक शामिल करने की आवश्यकता पड़े। अंग्रेजी शब्दों का देवनागरीकरण करते समय लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह मानक अंग्रेजी उच्चारण के अधिकाधिक अनुरूप हों और उनमें ऐसे परिवर्तन किए जाएँ जो भारत के शिक्षित वर्ग में प्रचलित हों।

10) **लिंग** — हिंदी में अपनाए गए अंतरराष्ट्रीय शब्दों को, अन्यथा कारण न होने पर, पुल्लिंग रूप में ही प्रयुक्त करना चाहिए।

11) **संकर शब्द**— वैज्ञानिक शब्दावली में संकर शब्द, जैसे पवदप्रंजपवद के लिए आयनीकरण, अवसजंहम के लिए वोल्टता, ring stand के लिए वलय स्टैंड, saponifier के लिए साबुनीकारक आदि के रूप सामान्य और प्राकृतिक भाषाशस्त्रीय क्रिया के अनुसार बनाए गए हैं और ऐसे शब्द रूपों को वैज्ञानिक शब्दावली की आवश्यकताओं और सुबोधता, उपयोगिता और संक्षिप्तता का ध्यान रखते हुए व्यवहार में लाना चाहिए।

12) **वैज्ञानिक शब्दों में संधि और समास**— कठिन संधियों का यथासंभव कम से कम प्रयोग करना चाहिए और संयुक्त शब्दों के लिए दो शब्दों के बीच हाइफन लगा देना चाहिए। इससे नए शब्द–रचनाओं को सरलता और शीघ्रता से समझने में सहायता मिलेगी। जहाँ तक संस्कृत पर आधारित 'आदिवृद्धि' का संबंध है, 'व्यावहारिक','लाक्षणिक' आदि प्रचलित संस्कृत तत्सम शब्दों में आदिवृद्धि का प्रयोग ही अपेक्षित है परंतु नव–निर्मित शब्दों में इससे बचा जा सकता है।

13) **हलंत** — नए अपनाए हुए शब्दों में आवश्यकतानुसार हलंत का प्रयोग करके उन्हें सही रूप में लिखना चाहिए।

14) **पंचम वर्ण का प्रयोग** — पंचम वर्ण के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग करना चाहिए, परंतु lens, patent आदि शब्दों का लिप्यंतरण लेंस, पेटेंट न करके लेंस, पेटेंट ही करना चाहिए।

➢ पारिभाषिक शब्दावली निर्माण की युक्तियाँतकनीकें

1. **अंगीकरण** (Principle of Adoption)

अंगीकरण का सिद्धांत, अन्य भाषा में विकसित और प्रचलित पारिभाषिक शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण करने से संबंधित है। कुछ अंतरराष्ट्रीय शब्द ऐसे हैं जिनकी संकल्पना अत्यंत जटिल एवं दुरूह होती है। ऐसे शब्दों को अपनी भाषा में यथावत ग्रहण कर लेना 'अंगीकरण' कहलाता है। इससे नए शब्द निर्मित करने का श्रम, समय और संसाधन व्यय होने से बच जाते हैं। कुछ विद्वानों ने इस रूप में गृहीत शब्दावली को 'उद्धृत शब्दावली' की भी संज्ञा दी है। इन शब्दों की विशेषता यह है कि ये पारिभाषिक शब्दावली के महत्वपूर्ण अंग होते हैं, इसलिए इनके संबंध में ढीलापन नहीं अपनाया जा सकता। इनके अंतर्गत

(क) नाइट्रोजन–ऑक्सीजन जैसे तत्वों–यौगिकों के नाम।

(ख) मीटर, कैलोरी, डाइन, ऐम्पियर जैसे माप–तौल और भौतिक परिमाण की इकाइयाँ

(ग) मैंजीफेरा इंडिका (आम आम्र) जैसे वनस्पतिविज्ञान और प्राणिविज्ञान की द्विपदी नामावली।

(घ) डार्विन और मार्क्स जैसे व्यक्तियों के नाम पर निर्मित शब्द (जैसे डार्विनवाद, मार्क्सवाद आदि)

(च) रेडियो, इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन जैसे आम तौर पर सारे संसार में व्यवहृत शब्द

(छ) चए ह आदि जैसे स्थिरांक।

(ज) गणित और विज्ञान की अन्य शाखाओं के संख्यांक, प्रतीक, चिह्न, सूत्र, लॉग आदि आते हैं। हिंदी भाषा की पारिभाषिक शब्दावली संस्कृत मूल अथवा परंपरागत एवं प्रयोग में प्रचलित शब्दों, उर्दू, अंग्रेजी एवं अन्य भारतीय भाषाओं रूपी विभिन्न स्रोतों से शब्दों को अपनाने से समृद्ध हुई है। उदाहरण के लिए, 'मंत्री', 'निरीक्षण', 'राष्ट्र', 'देश', 'निर्णय', 'सरकार', 'कृषि', 'दायित्व' आदि पूर्व–प्रचलित शब्दों अथवा संस्कृ त मूल के शब्दों को पारिभाषिक शब्दावली में स्थान दिया गया है। इसके साथ–साथ 'कच्चा माल', 'भत्ता', 'भाड़ा', 'बचत', 'भर्ती', 'कटौती', 'लागत', 'साख', 'समझौता', 'आँकड़े' आदि अनेक परंपरागत शब्दों को पारिभाषिक शब्दावली में स्थान दिया गया। इसके अतिरिक्त, 'रसीद', 'अर्जी', 'दस्तावेज', 'जुर्माना', 'दावेदार', 'मुआवजा', 'कुर्की' आदि उर्दू शब्दों को पारिभाषिक अर्थ में गृहीत कर लिया गया। बांग्ला से 'साज गृह', तेलुगु से 'औत्साहिक', मलयालम से 'चिल्लर', कन्नड़ से 'निवल' और 'प्रतिष्ठान', मराठी से 'आवक', 'जावक' और 'पावती' आदि पारिभाषिक शब्द लिए गए हैं। अंग्रेजी से 'रेलवे', 'गार्ड', 'गैस', 'चौक', 'बोनस', 'बिल', 'रेडियो', 'वायरमैन', 'फिटर' आदि असंख्य शब्दों को ज्यों का त्यों स्वीकार करना, शब्दों के अंगीकरण का उदाहरण है। इस प्रकार की गृहीत शब्दावली को देवनागरी में लिखने और उसे अपनी भाषा में प्रयुक्तकरते समय मुख्य कठिनाई वर्तनी की आती है। उदाहरण के लिए, उच्चारण की दृष्टि से 'न्यूमोनिया', 'मैशीन', 'वाइटैमिन' आदि शब्दों की वर्तनी में भिन्नता देखने में नजर आती है। इनके स्थान पर इन्हें हिंदी भाषा में क्रमशः 'निमोनिया', 'मशीन', 'विटामिन' के रूप में लिखा जाता है। इसी प्रकार species शब्द को 'स्पीशीज', 'स्पेशींज' तथा 'स्पीसीज' एवं Glucose–(ग्लूकोज) के लिए 'ग्लूकोस' बोला–लिखा जाना भी वर्तनी संबंधी कठिनाई का द्योतक है।

इकाई – 12 परिभाषिक शब्दावली

हिंदी में, अंतरराष्ट्रीय शब्दों को अंगीकृत करने का यह अभिप्राय नहीं है कि हमारी अपनी भाषा में शब्द–निर्माण क्षमता का अभाव है। वास्तव में यह भाषिक विकास की एक सामान्य प्रक्रिया है। अंग्रेजी में दर्शन–योग, न्याय आदि से संबंधित डंलं, Decoit, Yoga, Jungle, Thug, Chutney, Curry आदि अनेक भारतीय शब्दों का अंगीकरण इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। इसी प्रकार, अंग्रेजी में प्रचलित brother शब्द जर्मन से, position शब्द फ्रांसीसी से, agile शब्द इतालवी से और admiral शब्द अरबी भाषा से लिया गया है। वैसे, अगर कोई शब्द अन्य माध्यम से भाषा तक पहुँचे तो उसमें थोड़ा–बहुत परिवर्तन नजर आ ही जाता

NOTES

है। जैसे 'चंदन' और 'कपूर' जैसे भारतीय शब्द अंग्रेजी में अरबी भाषा के माध्यम से पहुँचे और क्रमशः sandal और campher हो गए। इसी भाँति, अंग्रेजी के बीपज शब्द को देखा जा सकता है, जिसकी उद्गम हिंदी का 'चिट्ठी' (chitty&chhitthi) शब्द है। और chitty का संक्षिप्त रूप अंग्रेजी में बीपज हो गया। इसी प्रकार, हिंदी का 'खाट', अंग्रेजी में 'cot' हो गया। वस्तुतः अंगीकृत शब्दों को लिप्यंतरित करते समय अपनी भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखा जाना आवश्यक होता है।

➢ अनुकूलन (**Principle of Adaptation**)

अनुकूलन को 'रूपांतरण' भी कहा जाता है। शब्द के संदर्भ में अनुकूलन का अभिप्राय है – शब्द में यत्किंचित परिवर्तन करते हुए उसे अपनी भाषा के अनुरूप ढालना। शब्दों का अनुकूलन करते समय विदेशी भाषा के उस शब्द–विशेष को अपना लेते हैं, उसे यथावत न लेकर उसका लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप विकास किया जाता है। यह अनुकूलन दो प्रकार से संभव हो पाता है–

क. अपनी भाषा के व्याकरणिक विधान के अनुसार, प्रत्यय लगाकर शब्द को अनुकूलित कर लेना। उदाहरण के लिए हिंदी के शब्द 'संत' को अंग्रेजी भाषा ने ग्रहण कर लिया, किंतु उसका विकास अपनी भाषा के व्याकरण के अनुसार करते हुए 'Saint' (u fd Sant) किया। इसी तरह से हिंदी का 'लूट' शब्द अंग्रेजी में 'looting हो गया। अंग्रेजी में brother' शब्द जर्मन से, 'position शब्द फ्रांसीसी से, agile शब्द इतालवी से और Admiral शब्द अरबी भाषा से तो लिया गया है किंतु उनसे व्युत्पन्न शब्द क्रमशः brotherhood, positioned, agileness, Admiralty' अंग्रेजी के अपने व्याकरणिक–नियमों के अनुसार बने हैं।

ख. शब्दों की ध्वनियों में थोड़ा–बहुत परिवर्तन करके शब्द का अनुकूलन करना। हिंदी भाषा में 'अकादमी', 'समन', 'फंतासी', 'संतरी', 'तकनीक', 'रपट', 'अपीलीय', 'गोदाम', 'त्रासदी', 'कामदी', और 'रिपोर्ताज' आदि शब्द अंग्रेजी के क्रमशः academy, summons, fantasy, sentry, technique, report, appellate, tragedy, comedy और reportage शब्दों के ध्वनि–साम्य के आधार पर निर्मित शब्द हैं।

➢ नव–निर्माण

उन पारिभाषिक शब्दों के पर्यायों के लिए नवनिर्माण की आवश्यकता पड़ती है जिनके समुचित पर्याय अपनी भाषा में पहले से ही उपलब्ध न हों और जिनका अंगीकरण अथवा अनुकूलन संभव, सुलभ एवं उपयोगी न हो। ऐसी स्थिति में नए शब्दों के निर्माण संबंधी सिद्धांत को अपनाया जाता है। विकसित से विकसित भाषा तक इस प्रकार के प्रयास करके समांतर प्रतिशब्द सृजित करती है। हिंदी भाषा में भी इसी प्रकार के प्रयास संभव है।

हिंदी भाषा में शब्द चार स्रोतों से आते हैं। ये हैं – तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्द। नए शब्दों के निर्माण के लिए 'धातु' आधार का काम करती है क्योंकि उसमें अर्थ का बीजभाव निहित होता है। हिंदी भाषा में शब्द निर्माण में संस्कृत की धातु का उपयोग किया जाता है और उसमें आवश्यकता के अनुसार, उपसर्ग–प्रत्यय लगाकर एवं संधि–समास विधि का प्रयोग करके नए शब्द गढ़े जाते हैं। किंतु यह आवश्यक नहीं है

NOTES

कि प्रत्येक शब्द में इन सभी का अंश विद्यमान ही हो। इनमें से एक का भी हो सकता है, दो का भी और तीन, चार, पाँच का भी। किंतु इनके मेल से बना शब्द एक ही रहता है। नव–शब्द निर्माण का यह सबसे अधिक प्रचलित तरीका है और तमिल, लैटिन–ग्रीक आदि सहित कमोबेश सभी भाषाओं में यह युक्ति व्यवहृत होती है। हिंदी में अनेक तकनीकी शब्दों का निर्माण इसी युक्ति के आधार पर किया गया है।

हिंदी भाषा में शब्द निर्माण के लिए अधिकांशतः संस्कृत भाषा का सहारा लिया जाता है क्योंकि इसमें शब्द–निर्माण का अनंत स्रोत है। संस्कृत भाषा की 520 धातुओं, 20 उपसर्गों एवं 80 प्रत्ययों की सहायता से लाखों–करोड़ों शब्द बनाए जा सकते हैं। इनके समुचित प्रयोग से पारिभाषिक शब्दों की क्रमबद्ध रचना तक की जा सकती है। किंतु नव शब्द निर्माण के लिए मौलिक चिंतन, सतत अभ्यास, भाषा एवं विषय–विशेषज्ञों का सहयोग अपेक्षित होता है। धातु में उपसर्ग–प्रत्यय लगाकर एवं संधि–समास विधि का प्रयोग करके नव–शब्द निर्माण संबंधी इस सिद्धांत को 'वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग' ने भी स्वीकार करके अनेक पारिभाषित शब्द निर्मित किए हैं।

➢ **अनुवाद**

पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की प्रक्रिया में अनुवाद का भी सहारा लिया जाता है। तकनीकी शब्द के रूप में व्यक्त मूल संकल्पना को ग्रहण करने वाली भाषा के लिए वह ग्राह्य स्थिति बनाती है। किसी भी नई संकल्पना को दूसरी भाषा में व्यक्त करने के लिए शब्द को ग्रहण करते समय अनुवाद पद्धति के आधार पर राष्ट्रीय शब्दावली परिवार का

NOTES

विकास किया जाता है। इस विधि द्वारा निर्मित पारिभाषिक शब्दों को अनुवाद पर्याय कहा जाता है। लगातार प्रयोग के कारण लक्ष्य भाषा–समाज पारिभाषिक शब्द के अनुवाद पर्याय को स्वीकार कर लेता है। 'जनसंचार माध्यम' (mass medi), 'काला धन' (black money), 'तृतीय विश्व' (third world), 'कार्यशाला' (workshop), 'हरित क्रांति' (green revolution) आदि अनेक पारिभाषिक शब्दों के निर्माण में अनुवाद पद्धति को अपनाया गया है।

प्रत्येक भाषा–समाज को किसी भी नए विचार, संकल्पना अथवा स्थिति से साक्षात् होने पर उसकी अभिव्यक्ति के लिए शब्दों की आवश्यकता होती है। इसके लिए परंपरागत, नवागत और नवनिर्मित शब्दों के माध्यम से शब्दावली परिवार को विकसित–समुन्नत किया जाता है। शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण करने के रूप में 'अंगीकरण', 'अनुकूलन', 'नव शब्द–निर्माण' और 'अनुवाद' की युक्ति को अपनाकर जो पारिभाषिक शब्द निर्धारित किए जाते हैं। वे भाषा शब्दावली का अंग बनकर उसका शब्द भंडार समृद्ध करते हैं। आयोग ने इन सभी का आधार लेकर शब्दावली निर्माण किया है और इस संदर्भ में उसने कुछ सिद्धांत भी निर्धारित किए हैं। इन्हें व्यवहार में लाने पर भाषा में शाब्दिक एकरूपता की स्थापना होती है और उसका मानकीकरण संभव हो पाता है। वहीं, साथ ही, इन सिद्धांतों की सहायता से विदेशी अथवा प्रादेशिक भाषाओं की तकनीकी शब्दावली का अनुवाद भी सरल हो जाएगा।

■■

माड्यूल – 5

हिंदी भाषा का मानकीकरण

इकाई – 13 मानक भाषा अर्थ व महत्व

➢ मानकीकरण

भाषा किसी भी समाज और संस्कृति का मूल आधार होती है। यह संचार का प्रमुख माध्यम ही नहीं, बल्कि मानवीय भावनाओं, विचारों और संस्कृति का संवाहक भी होती है। भारत विविध भाषाओं और बोलियों का देश है, जहां विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग भाषाएं और उनकी बोलियां बोली जाती हैं। हिंदी, भारत की सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। हिंदी भाषा के विकास और विस्तार की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया 'मानकीकरण' रही है। मानकीकरण का अर्थ है– किसी भाषा को एक निश्चित रूप, व्याकरण, लिपि, शैली और उच्चारण के मानकों के अनुसार स्थापित करना, ताकि वह भाषा पूरे समाज में एकरूपता और स्पष्टता के साथ स्वीकृत हो सके।

भाषा मानकीकरण सभी कार्यात्मक प्रयोजनों के लिए स्वीकार्य एक भाषा या भाषा किस्मों बनाने की प्रक्रिया है। यह भी एक भाषा या भाषा विविधता या एक भाषा के प्रयोग के विशेष प्रकार की स्थिति के संवर्धन के रूप में इस तरह से जाना जा सकता है कि यह प्रभावी ढंग से और कुशलता से आधुनिक समय की संचार प्रणालियों में इस्तेमाल किया जा सकता है जो राष्ट्र के लिए एक लाभ होगा या समाज। भाषा मानकीकरण की प्रक्रिया

NOTES

के माध्यम से, भाषा प्रणाली एक उच्च स्वीकार्य मानदंड बन जाता है और एक सजातीय इकाई के रूप में है। मानक भाषा एक भाषा है जो व्यापक संचार के प्रयोजनों के लिए प्रयोग किया जाता है और जो एक समाज के एक बड़े हिस्से को स्वीकार्य हो जाता है के रूप में जाना जाता है।

फर्गुसन (9162), हौगेन (1966), गार्विन (1959) और रुबिन (1977) मानक भाषा को उपर्युक्तद दृष्टिकोण से परिभाषित करने का कार्य किया। गार्विन और मथायोट (960:783–90) के रूप में परिभाषित मानक भाषा ''एक भाषा के एक संधित रूप द्वारा स्वीकार किए जाते है और एक बड़ा भाषण समुदाय के एक मॉडल के रूप में सेवारत''। मानकीकरण एक सतत प्रक्रिया है जो लेखन और भाषा के भाग के लिए नियमों का एक निर्धारित सांचा विकसित करती है ताकि इस प्रत्येरक प्रयोगकर्ता समाज में इसका अध्यकयन एवं अभ्यास कर भाषा में समान रूप से दक्ष हो सके।

मानकीकरण मुख्य्‍ रूप से विशिष्ट मानव भाषा विकास से संबंधित है और किसी भी उन्नभत एवं समृद्ध भाषा का मानकीकरण तभी संभव हो सकता है जब एक समाज में घटित समस्ति अवयवों एवं कार्य व्याापार, क्रिया कलापों की अभिव्यरक्ति के लिए को उस भाषा में पर्याप्तम व्यािकरणिक एवं शब्दायवलीगत समृद्धता आ चुकी हो। बहुत से विकल्पों में एक सर्व या अधिकांश प्रचलित रूप जो व्या करण आदि के नियमों के अनुरूप हो तथा वह प्रयोगकर्ताओं के लिए सप्रयास सीखने एवं अभ्याास के लिए सहायक हो आदि को एकरूपता प्रदान कर मानक रूप निर्धारित किए जाते हैं। इससे अत्येधिक वैविध्यकपूर्ण स्थिति से छुटकारा मिलता है और एक ही रूप का प्रयोग बड़ी संख्यास में लोग करते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि भाषा के मानकीकरण का अर्थ है भाषा के प्रयोग को एक निश्चित स्वरूप देना, ताकि संचार के स्तर पर एकरूपता बनी रहे। इसके अंतर्गत भाषा के व्याकरण, शब्दावली, उच्चारण और लिपि को एक निश्चित रूप में स्थापित किया जाता है। मानकीकरण का उद्देश्य भाषा को सरल, सुगम और व्यापक संचार का माध यम बनाना होता है।

➢ भाषा के मानकीकरण की आवश्यकतारूहिंदी भाषा के संदर्भ में

भाषा किसी भी समाज की सांस्कृतिक पहचान और संचार का प्रमुख माध्यम होती है। समाज के विकास के साथ–साथ भाषा का भी विकास होता है। भाषा के इस विकास क्रम में मानकीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। किसी भी भाषा का मानकीकरण उस भाषा के स्वरूप, व्याकरण, उच्चारण, वर्तनी और अभिव्यक्ति के नियमों को निश्चित करने की प्रक्रिया है। हिंदी भाषा के संदर्भ में भी मानकीकरण की आवश्यकता ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। हिंदी भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से हुई–

1. राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की स्वीकृति

भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में हिंदी को एक संपर्क भाषा के रूप में स्वीकार किया गया है। 14 सितंबर 1949 को संविधान सभा द्वारा हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया। हिंदी को एक राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने के लिए उसके मानकीकरण की आवश्यकता महसूस हुई ताकि देशभर में संचार की एकरूपता बनी रहे।

NOTES

2. संचार और प्रसार के लिए एकरूपता

यदि किसी भाषा के कई रूप और बोलियां प्रचलित हों तो संचार में भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है। हिंदी के भी अनेक रूप प्रचलित हैं, जैसे दृ अवधी, ब्रज, भोजपुरी, मैथिली आदि। इन सभी को एक सामान्य रूप देने और संचार की सुविधा के लिए हिंदी का मानकीकरण आवश्यक हो गया।

3. शिक्षा और साहित्य के विकास के लिए

शिक्षा के क्षेत्र में एक मानक भाषा की आवश्यकता होती है ताकि पूरे देश में समान पठन–पाठन सामग्री तैयार की जा सके। साहित्य के विकास के लिए भी एक सुनिश्चित व्याकरण और शब्दावली की आवश्यकता होती है, जिससे लेखकों और पाठकों के बीच समानता और समझ बनी रहे।

4. प्रौद्योगिकी और आधुनिकता के अनुकूल बनाने के लिए

आज के डिजिटल युग में कंप्यूटर, इंटरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से भाषा का प्रयोग व्यापक स्तर पर हो रहा है। हिंदी के मानकीकरण से उसकी लिपि और शब्दावली को तकनीकी माध्यमों के अनुकूल बनाया जा सका है।

5. प्रशासनिक और विधिक कार्यों के लिए

सरकारी कार्यालयों, न्यायालयों और प्रशासनिक क्षेत्रों में हिंदी का प्रयोग सुगम और प्रभावी बनाने के लिए उसके मानकीकरण की आवश्यकता पड़ी। संविधान के अनुच्छेद 343 के अंतर्गत हिंदी को राजभाषा के रूप में स्थापित करने के लिए एक निश्चित मानक भाषा की आवश्यकता थी।

6. विज्ञान और तकनीकी विकास के लिए

विज्ञान और तकनीकी क्षेत्रों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए तकनीकी शब्दावली के मानकीकरण की आवश्यकता पड़ी। वैज्ञानिक शब्दावली आयोग द्वारा हिंदी के लिए वैज्ञानिक शब्दों का मानकीकरण किया गया, जिससे तकनीकी संचार सुगम हुआ।

➢ **हिंदी के मानकीकरण के लिए प्रमुख विद्वानों के योगदान**

1. पं. किशोरीदास वाजपेयी

पं. किशोरीदास वाजपेयी को हिंदी के मानकीकरण का अग्रदूत माना जाता है। उन्होंने हिंदी व्याकरण के नियमों को सरल और स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया। उनकी रचना 'हिंदी शब्दानुशासन' (1957) हिंदी व्याकरण का एक मानक ग्रंथ है। वाजपेयी जी ने हिंदी के व्याकरण, शब्द रचना, समास, संधि, उपसर्ग और प्रत्यय को स्पष्ट किया।

2. डॉ. रामचंद्र वर्मा

डॉ. वर्मा ने हिंदी के वाक्य विन्यास और शैली पर गहन शोध किया। उनकी पुस्तक शहिंदी भाषा और व्याकरणश (1947) में हिंदी व्याकरण के नियमों को वैज्ञानिक पद्धति से प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने हिंदी के मानकीकरण के लिए उच्चारण और वर्तनी को सरल बनाने पर बल दिया।

3. डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी

उन्होंने हिंदी के ध्वन्यात्मक विकास और शब्द संरचना पर कार्य किया। हिंदी की लिपि, विशेषकर देवनागरी लिपि के मानकीकरण में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने

NOTES

हिंदी को भारतीय भाषाओं के बीच संपर्क भाषा के रूप में विकसित करने का प्रयास किया।

4. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य और भाषा को एक सुसंगठित रूप देने में योगदान दिया। उन्होंने हिंदी के व्याकरण और भाषा संरचना पर विशेष बल दिया। उन्होंने हिंदी के शब्दकोश निर्माण और मानकीकरण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

5. डॉ. नामवर सिंह

नामवर सिंह ने हिंदी के मानकीकरण में आधुनिक संदर्भ जोड़े। उन्होंने हिंदी की शैली, वाक्य संरचना और उच्चारण को मानकीकरण की दिशा में दिशा दी। उनके लेखन और व्याख्यान हिंदी को आधुनिक रूप देने में सहायक रहे।

➢ **सरकारी स्तर पर हिंदी के मानकीकरण के प्रयास**

हिंदी के मानकीकरण के लिए भारत सरकार द्वारा भी अनेक महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गए।

1. **संविधान में हिंदी को राजभाषा का दर्जा (1949)** 14 सितंबर 1949 को संविधान सभा ने हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति दी। इसके तहत हिंदी के मानकीकरण के लिए एक निश्चित रूपरेखा तैयार की गई।
2. **हिंदी शब्दावली निर्माण समिति (1950)** भारत सरकार द्वारा वैज्ञानिक, तकनीकी और प्रशासनिक शब्दों के लिए एक मानक हिंदी शब्दावली तैयार करने के लिए इस समिति का गठन किया गया। इस समिति ने हिंदी के लिए 50,000 से अधिक वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दों का संकलन किया।
3. **केंद्रीय हिंदी निदेशालय (1960)** : इसका गठन भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के अंतर्गत किया गया। निदेशालय का कार्य हिंदी व्याकरण, वर्तनी और उच्चारण के नियमों को एकरूपता प्रदान करना था। इसके अंतर्गत हिंदी वर्तनी का मानकीकरण (1971) किया गया।
4. **भारतीय भाषा संस्थान (मैसूर) का योगदान** : भारतीय भाषा संस्थान ने हिंदी के लिए एक मानक व्याकरण और उच्चारण के नियम तैयार किए। इस संस्थान ने हिंदी के लिए एक राष्ट्रीय स्तर की शब्दावली तैयार की। केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान (सीआईआईएल), मैसूर, जो मानव संसाधन विकास मंत्रालय का एक अधीनस्थ कार्यालय है, की स्थापना भारत सरकार की भाषा नीति का विकास और उसे कार्यान्वित करने के लिए और भाषा विश्लेएषण, भाषा शिक्षा शास्त्र, भाषा प्रौद्योगिकी और समाज में भाषा–प्रयोग के क्षेत्रों में अनुसंधान के द्वारा भारतीय भाषाओं के विकास को समन्वित करने के लिए की गई थी।
5. **राजभाषा आयोग का गठन (1955)** हिंदी के राजभाषा के रूप में प्रयोग को सुनिश्चित करने के लिए इस आयोग का गठन किया गया। आयोग ने हिंदी के प्रचार–प्रसार और मानकीकरण के लिए आवश्यक सुझाव दिए।
6. **हिंदी अनुवाद और प्रचार परिषद** : भारत सरकार द्वारा प्रशासनिक और विधिक कार्यों के लिए हिंदी अनुवाद और प्रचार परिषद का गठन किया गया। इस परिषद ने हिंदी में प्रशासनिक और कानूनी शब्दों के अनुवाद और संकलन का कार्य

NOTES

किया।

हिंदी भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया

हिंदी के मानकीकरण के लिए निम्नलिखित प्रयास किए गए –

1. **हिंदी व्याकरण** : हिंदी के लिए एक निश्चित व्याकरण का निर्माण किया गया। हिंदी भाषा के मानकीकरण की दिशा में कई विद्वानों ने अपना योगदान दिया। इन विद्वानों ने हिंदी के व्याकरण, वर्तनी, उच्चारण और लिपि के मानक स्वरूप को स्थापित करने का कार्य किया।
2. **लिपि का निर्धारण** : हिंदी के लिए देवनागरी लिपि को मानक लिपि के रूप में स्वीकार किया गया।केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा हिंदी भाषा के लिए मानक देवनागरी लिपि के प्रयोग संबंधी नियमावली जारी की है जिसे अग्रलिखित रूप में देखा जा सकता है–

मानक हिंदी वर्णमाला तथा अंक

वर्ण ध्वनियों के लिखित रूप हैं। वर्ण भाषा के मौखिक रूप के प्रतीक होते हैं। वर्णों को ध्वनि चिह्न भी कहा जाता है। इन वर्णों के क्रमबद्धप समूह को 'वर्णमाला' कहते हैं। वर्णमाला में सर्वत्र एकरूपता बनाए रखने के लिए 'केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा विद्वानों के विचार–विमर्श के पश्चात् हिंदी वर्णमाला तथा अंकों का अद्यतन मानक स्वरूप निर्धारित किया गया है जो इस प्रकार है–

हिंदी वर्णमाला

स्वर वर्ण – अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ (कुल स्वर 11 हैं।)

अनुस्वार एवं विसर्ग – अं अः

संस्कृत के लिए प्रयुक्त देवनागरी में ृ तथा लृ भी सम्मिलित हैं, किंतु हिंदी में इनका प्रयोग न होने के कारण इन्हें हिंदी की मानक वर्णमाला में स्थान नहीं दिया गया है।

व्यंजन – क ख ग घ ङ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म
य र ल व
श ष स ह

संयुक्त व्यंजन–
क्ष त्र ज्ञ श्र

उत्क्षिप्त व्यंजन :

ड़ ढ़

विशिष्ट व्यंजन– ळ

नोट–

- मूल व्यंजनों की संख्या 33, व्यंजनों की कुल संख्याः 40 है।
- क्ष (क+ष), त्र(त्+र), ज्ञ (ज्+ञ), श्र (श+र) हिंदी वर्णमाला के 4 संयुक्त व्यंजन हैं।
- 'ळ' वर्ण का प्रयोग हिंदी की प्रमुख बोलियों यथा हरियाणवी, मारवाड़ी, गढ़वाली, कुमाऊँनी के अतिरिक्त देवनागरी का प्रयोग करने वाली मराठी जैसी समृद्धं भाषाओं में भी है। इसके अतिरिक्त देवनागरीतर लिपियों वाली भारतीय भाषाओं यथा तमिळ, तेलुगु, मलयाळम, कन्नड़ और ओड़िआ में भी 'ळ' ध्वनि का व्यापक प्रयोग है। व्यक्तिवाचक संज्ञाओं (व्यक्ति, स्थान, भू–आकृतियों के नामों में) में इनके प्रयोग किए जाने का अवकाश अपेक्षित है। अतः वर्णमाला में विशिष्ट व्यंजन के रूप में ळ वर्ण को स्थान दिया गया है।
- व्यंजनों को वर्णमाला में सामान्यतः स्वर 'अ' के साथ मिलाकर लिखा जाता है। परिवर्धित देवनागरी लिपि में स्वीकृत लिपि–चिह्न

अनुस्वार (ं) और चंद्रबिंदु (ँ) अनुस्वार एक व्यंजन है और चंद्रबिदु स्वर की अनुनासिकता का अभिलक्षण। हिंदी में ये दोनों अर्थभेदक भी हैं। अतः हिंदी में अनुस्वार (ं) और चंद्रबिंदु (ँ) दोनों ही प्रचलित रहेंगे। विसर्ग

संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है, वे शब्द संधि या समास के साथ तत्सम रूप में प्रयुक्त हों तो विसर्ग का प्रयोग किया जाए, जैसे–दुःखानुभूति, दुरूखार्त, दुरूखांत। यदि हिंदी में गृहीत तदभव रूप में विसर्ग का लोप हो चुका हो तो विसर्ग के बिना ही लिखा जाएगा, जैसेकृदुख–सुख के साथी। तत्सम शब्दों के अंत में प्रयुक्त विसर्ग का प्रयोग अनिवार्य है,जैसे–अतः, पुनः, स्वतः, प्रायः, पूर्णतः, मूलतः, अंततः, वस्तुतः, क्रमशः। ऐसे संधि स्थलों को छोड़कर जहाँ स, श का द्वित्व हो रहा हो विसर्ग ही लिखा जाएगा। स, श के द्वित्व वाले शब्दों में संधियुक्त रूप ही ग्राह्यत होगा। यथारूनिस्स्वार्थ, निश्शेष, निस्संतान आदि। शेष स्थानों पर यथा अंतःकरण, अंतःपुर, आदि शब्द विसर्ग के साथ ही लिखे जाएँगे। विसर्ग को वर्ण के साथ मिलाकर लिखा जाए, जबकि कॉलन–चिह्न (उपविराम) शब्द से कुछ दूरी पर हो, जैसे–प्रातः (विसर्गयुक्त शब्द)। फूल के पर्यायवाची हैंकृसुमन, कुसुम।

हल् चिह्न

व्यंजन के नीचे लगा हल् चिह्न उस व्यंजन के स्वर रहित होने की सूचना देता है, यानी वह व्यंजन विशुद्ध् रूप से व्यंजन है। संयुक्ताक्षर बनाने के नियम के अनुसार छ, ट, ठ, ड, ढ, ह में हल् चिह्न का प्रयोग होगा, जैसेकृचिह्न और बुड्ढा। शब्दों के अंत में आने वाला 'हल' चिह्न हिंदी की प्रकृति के अनुरूप नहीं है। अतरू महान, राजन, तेजस,

NOTES

ओजस, जैसे शब्दोंथ में 'हल' चिह्घ्न का प्रयोग नहीं होगा। किंतु, इन सभी हलंत शब्दोंह के व्योकरणिक प्रयोग में नियमों की समुचित व्याओख्यार के लिए हल् चिह्घ्न से दर्शाया जा सकेगा। जैसेकृ'जगत' शब्दल हिंदी में सामान्य तरू बिना हल् चिह्घ्न के ही लिखा जा सकेगा किंतु, 'जगदीश' शब्द के संधि विच्छेकृद को दर्शाने के लिए 'जगत्. ईश' में इसे हल् चिह्घ्न के साथ दर्शाया जाएगा। संस्कृत से लिए गए अव्ययों में हल् चिह्घ्न मूल भाषा के अनुसार अपरिवर्तित रहेगा। जैसे– अर्थात, आत्मसात, पश्चात, अकस्मात, प्राक। मकारांत अव्यय में 'म' के स्थान पर अनुस्वार लिखा जाएगा। यथा रू स्वयम् दृ स्वयंय सायम् दृ सायं कतिपय अव्ययेतर शब्द भी हल् चिह्घ्न के साथ लिखे जाएँगे। जैसेकृवाक् (वाक्पटु), भगवत् (श्रीमद्भगवद्गीता)

आगत चिह्घ्न

1. अवग्रह ऽ सोऽहं – संस्कृत पदों में संधि के 'अ' वर्ण के लोप को संकेतित करने के लिए अवग्रह चिह्घ्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे–सोऽहं, शिवोऽहं आदि

2. अर्धचंद्र – ऑ – डॉक्टर, कॉलेज, नॉलेज इत्यातदि।

हिंदी अंक संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप होगा। परंतु राष्ट्रपति, संघ के किसी भी राजकीय प्रयोजन के लिए भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय रूप के साथ–साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकते हैं।

भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप 1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

देवनागरी अंक १ २ ३ ४ 5 ६ ७ 8 9 0

अनुस्वार () तथा चंद्रबिंदु (ँ)

अनुस्वार (शिरोबिंदु) –संस्कृत शब्दों में अनुस्वार का प्रयोग अन्य वर्गीय वर्णों ('य' से 'ह' तक) से पहले यथावत् रहेगा, जैसेकृसंयोग, संरक्षण, संलग्न, अंश, कंस, सिंह। संयुक्त व्यंजन के रूप में जहाँ पंचम वर्ण (पंचमाक्षर) के बाद सवर्गीय शेष चार वर्णों में से कोई वर्ण हो तो एकरूपता के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग करना चाहिए, जैसेकृपंकज, गंगा, चंचल, मंजूषा, कंठ, संत, संध्या, मंदिर, संपादक, संबंध आदि। यदि पंचमाक्षर के बाद किसी अन्य वर्ग का कोई वर्ण आए तो पंचमाक्षर अनुस्वार के रूप में परिवर्तित नहीं होगा। जैसे–उन्मुख, वाङ्मय, अन्य, चिन्मय। पंचम वर्ण यदि द्वित्व रूप में (साथ–साथ) आए तो वह अनुस्वार में परिवर्तित नहीं होगा। जैसेकृअन्न, सम्मेलन, सम्मति आदि। संस्कृत के कुछ तत्सम शब्दों के अंत में अनुस्वार का प्रयोग 'म' का सूचक है, जैसे–अहं (अहम्) एवं (एवम) शिवं (शिवम्)।

☐ चंद्रबिंदु (अनुनासिकता का चिहन) हिंदी के शब्दों में उचित ढंग से चंद्रबिंदु का प्रयोग अनिवार्य होगा। अनुनासिक चिह्घ्न व्यंजन नहीं है, स्वरों का ध्वनिगुण है। उदाहरण–आँ, ऊँ, एँ, माँ, हूँ, माँगें। चंद्रबिंदु के प्रयोग के बिना प्रायः अर्थ में भ्रम की संभावना रहती है, जैसे–हंसः हँस, अंगनाः अँगना आदि में। अतएव ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए चंद्रबिंदु का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। हिंदी में चंद्रबिंदु का प्रयोग केवल तद्भव और देशज शब्दों के साथ होता है। जैसे–आँख, चाँद, आँत, दाँत, गाँठ। अनुस्वार

NOTES

एवं चंद्रबिंदु के प्रयोग में आधारभूत अंतर अनुस्वार और चंद्रबिंदु के प्रयोग को लेकर बहुध ा भ्रम की स्थिति रहती है और इसलिए समाचारपत्रों, पत्रिकाओं और कभी–कभी तो पाठ्यपुस्तकों में भी अनुनासिक के स्थान पर भी अनुस्वार का प्रयोग किया जाता है। (क) इन नासिक्य व्यंजनों (ङ, ञ, ण, न, म) के बाद यदि कोई सवर्गीय वर्ण आए तो नासिक्य व्यंजन अनुस्वार के रूप में अपने पूर्ववर्ती वर्ण के ऊपर आ जाते हैं। जैसेकृचञ्चल झ चंचलय गङ्गा झ गंगाय पण्डित झ पंडित। (ख) वहीं हिंदी में चंद्रबिंदु का प्रयोग हिंदी में देशज और तदभव शब्दों में प्रयोग किया जाता है। जैसे–आँख, माँ, साँस, यहाँ, वहाँ, हँसना। ऐसे शब्दों में जहाँ स्वर मात्राएँ शिरोरेखा के ऊपर लगती हों वहाँ स्थान लाघव के लिए चंद्रबिंदु के स्था न पर केवल बिंदु का प्रयोग होता है। जैसेकृमे. ँ = में। इसी प्रकार घखिंचाई, खींचना, बेंत, भैंस, चोंच, भौंरा इत्यादि। हिंदी में अकारांत, आकारांत, इकारांत, ईकारांत, उकारांत एवं ऊकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के बहुवचन रूपों में चंद्रबिंदु का ही प्रयोग होता है। जैसे–लड़कियाँ, लताएँ, चींटियाँ, नदियाँ, महिलाएँ, ऋतुएँ, वस्तुएँ, वधुएँ, रीतियाँ। (ग) अनुस्वार और चंद्रबिंदु की उच्चारण प्रक्रिया भिन्न है। अनुस्वार में प्रश्वास जहाँ नासिका से निकलता है, वहीं अनुनासिक में नासिका और मुँह दोनों से निकलता है।

स्वन परिवर्तन – तत्सम शब्दों की वर्तनी को ज्यों–का–त्यों ग्रहण किया जाए।

'ऐ', 'औ' का प्रयोग दृ

हिंदी में ऐ (है), औ (लौ) का प्रयोग दो प्रकार के उच्चारण को व्यक्त करने के लिए होता है। पहले प्रकार का उच्चारण 'है', 'और' आदि में मूल स्वरों की तरह होता है जबकि दूसरे प्रकार का उच्चारण गैया, नैया, भैया, कौवा आदि जैसे शब्दों में संध्यक्षरों के रूप में आज भी प्रचलित है। नियमानुसार 'य' के पहले 'ऐ' होने से उसका उच्चारण 'अई' के रूप में होगा और 'व' के पहले 'औ' होने पर उसका उच्चारण 'अउ' के रूप में होगा। दोनों ही प्रकार के उच्चारणों को व्यक्त करने के लिए इन्हीं चिह्घ्नों (ऐ, औ) का प्रयोग किया जाए। अन्य उदाहरण हैंकृभैया, सैयद, तैयार, हौवा आदि। दक्षिण के अय्यर, नय्यर, रामय्या आदि व्यक्तिनामोंध्कुलनामों को मूल भाषा के अनुरूप लिखा जाए। अव्वल, कव्वाल, कव्वाली जैसे शब्द प्रचलित हैं। इन्हें लेखन में यथावत् रखा जाए।

पूर्वकालिक कृदंत प्रत्यय 'कर'

पूर्वकालिक कृदंत प्रत्यय 'कर' क्रिया से मिलाकर लिखा जाए, जैसे–पाकर, खा–पीकर, रो– रोकर आदि। कर. कर के संयोग से 'करके' और करा. कर के संयोग से 'कराके' बनेगा।

'वाला' प्रत्यय

क्रिया रूपों में 'करने वाला', 'आने वाला', 'बोलने वाला' आदि को अलग लिखा जाए, जैसे–मैं घर जाने वाला हूँ, जाने वाले लोग। संज्ञा और विशेषण के योजक प्रत्यय के रूप में 'घरवाला', 'टोपीवाला' (टोपी बेचने वाला), दिलवाला, दूधवाला आदि एक शब्द के समान ही लिखे जाएँगे। 'वाला' जब प्रत्यय के रूप में आएगा तब मिलाकर लिखा

NOTES

जाएगा, अन्यथा अलग से। यह वाला, यह वाली, पहले वाला, अच्छा वाला, लाल वाला, कल वाली बात आदि में 'वाला' निर्देशक शब्द है। अतः इसे अलग से ही लिखा जाए। इसी तरह लंबे बालों वाली लड़की, दाढ़ी वाला आदमी आदि शब्दों में भी 'वाला' अलग लिखा जाएगा। इससे हम रचना के स्तर पर अंतर कर सकते हैं। जैसे—गाँववाला – (ग्रामीण) गाँव वाला मकान – (गाँव का मकान)

श्रुतिमूलक 'य', 'व'

क्रिया रूपों में श्रुतिमूलक 'य' और 'व' स्व र के रूप में ही प्रस्तुजत हों जबकि शेष में 'य' और 'व' ही लगाया जाए। जैसेकृ'जाना' क्रिया दृ गया दृ गई दृ गएय लेकिन अन्यथा 'य' का प्रयोगकृ'नया' विशेषण दृ नया दृ नयी दृ नये क्रिया पदों में भूतकाल में स्त्रीलिंग के लिए 'ई' प्रत्यय और भूतकाल पुल्लिंग बहुवचन अथवा आदरार्थक बहुवचन के लिए 'ए' प्रत्यय लगाए जाने का नियम है। जहाँ श्रुतिमूलक 'य' व्याकरणिक परिवर्तन न होकर शब्द का ही मूल तत्त्व हो वहाँ वैकल्पिक श्रुतिमूलक स्वरात्मक परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है, जैसेकृस्थायी, अव्ययीभाव, दायित्व। श्रुतिमूलक 'व' का रूप हिंदी के क्रियेतर पदों (संज्ञा, विशेषण आदि) में ही होता है। इनमें लिंग एवं वचन के कारण बनने वाले विविध रूपों में 'व' का ही प्रयोग किया जाए। जैसेकृकौवाकृकौवेकृकौवों और स्त्री लिंग में कौवी। इसी प्रकार पौवाकृपौवेकृपौवों।

आगत शब्द

1. उर्दू शब्द

उर्दू से आए अरबी–फारसी मूलक वे शब्द जो हिंदी के अंग बन चुके हैं और जिनकी ध्वनियों का हिंदी ध्वनियों में रूपांतर हो चुका है, हिंदी रूप में ही स्वीकार किए जा सकते हैं। जैसे—कलम, किला, दाग। नुक्ता हिंदी में प्रचलित नहीं है। अतः, देवनागरी की मूल हिंदी वर्णमाला में नुक्तेज को नहीं रखा जाना चाहिए। उर्दू के जो शब्द हिंदी ने आत्मसात् कर लिए हैं, वहाँ नुक्तेद के प्रयोग का कोई औचित्य नहीं है। उर्दू के मूल पाठ्य साहित्य का लिप्यंतरण करने में नुक्तात का प्रयोग चलता रहेगा।

2. अंग्रेजी शब्द

अंग्रेजी के जिन शब्दों में अर्धविवृत 'ओ' ध्वनि का प्रयोग होता है, उनके शुद्ध रूप का हिंदी में प्रयोग अभीष्ट होने पर 'आ' की मात्रा के ऊपर अर्धचंद्र (ॅ) का प्रयोग किया जाए, जैसे—कॉलेज, हॉल, मॉल, टॉकीज, ऑफिस। सभी विदेशी भाषाओं से आगत शब्दों का देवनागरी लिप्यंतरण यथासंभव विदेशी भाषाओं के मानक उच्चारण के अधिक से अधिक निकट होना चाहिए।

अन्य नियम

1. शिरोरेखा का प्रयोग आवश्यक है।

2. पूर्ण विराम (फुलस्टॉप) को छोड़कर हिंदी में शेष विरामादि चिह्न्न वही ग्रहण कर लिए गए हैं जो अंग्रेजी में प्रचलित हैं,जैसे—योजक चिह्न्न (–), निर्देशक चिह्न्न (——), विवरण चिह्न्न (:–), अल्पविराम (,), अर्धविराम (य), उपविराम (:), प्रश्न चिह्न्न (?), विस्मयादिसूचक चिह्न्न (!), अपोस्ट्रॉफीध्ऊर्ध्व अल्पविराम ('), उद्ध्धरण–चिह्न्न (""), शब्द–चिह्न्न (''), तीनों कोष्ठक ((), {}, ख्), लोप चिह्न्न (...), संक्षेपसूचक चिह्न्न (०),

NOTES

हंसपद (')।

हिंदी के मानक रूप के विकास में आधिकारिक रूप से निम्न लिखित विद्वानों का सहयोग स्म,रणीय है, जो कि केंद्रीय हिंदी निदेशालयकी समिति के सदस्यर रहे–

- श्री अक्षय कुमार जैनदृभूतपूर्व संपादक, नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली
- डॉ. इंद्रनाथ चौधरी अध्यक्ष, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
- डॉ. ई. पांडुरंग राव निदेशक (हिंदी), संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली
- डॉ. ए. चंद्रशेखर भूतपूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. एन. एन. बवेजा भाषाविद
- श्री एन. के. तोशखानी भाषाविद
- प्रो. एन. नागप्पा भूतपूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर
- डॉ. एम. के. जेतली रीडर, आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. कृष्णगोपाल रस्तोगी प्रोफेसर, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली
- डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया प्रोफेसर, हिंदी तथा प्रादेशिक भाषाएँ, ला.ब.शा. राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी
- प्रो. गुरुबख्श सिंह भाषाविद
- श्री गोलोक बिहारी धळ भूतपूर्व अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, राजकीय कॉलेज, पुरी (ओडिशा)
- डॉ. छैलबिहारी गुप्त अलीगढ़
- डॉ. जे. एल. रेड्डी दयाल सिंह कॉलेज, नई दिल्ली
- प्रो. जोगेंद्र सिंह सोंधी भाषाविद
- प्रो. टी.पी. मीनाक्षीसुंदरन् भूतपर्व कुलपति, मदुरै विश्वविद्यालय, मदुरै
- श्री देवराज प्रतिनिधि, हिंदी प्रकाशन संघ, दिल्ली
- प्रो. देवेंद्रनाथ शर्मा भूतपूर्व अध्यक्ष, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना
- श्री नंदकुमार अवस्थी संचालक, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ
- डॉ. नगेंद्र भूतपूर्व प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- डॉ. पी.बी. पंडित भूतपूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- श्री पृथ्वीनाथ पुष्प अध्यक्ष, हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, श्रीनगर
- डॉ. बाबूराम सक्सेना भूतपूर्व कुलपति, रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर

NOTES

एवं भूतपूर्व अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली

- व डॉ. बालगोविंद मिश्र निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- व डॉ. बी.पी. कोलते अध्यक्ष, मराठी विभाग, नागपुर विश्वविद्यालय
- व डॉ. भोलानाथ तिवारी रीडर, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- व डॉ. मसूद हुसैन खाँ भूतपूर्व कुलपति, जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली
- व डॉ. मोहनलाल सर पूर्वप्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- व डॉ. रवींद्रनाथ श्रीवास्तव प्रोफेसर, भाषाविज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- व श्री लोकनाथ भराली क्षेत्रीय अधिकारी, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, गुवाहाटी
- व डॉ. विद्यानिवास मिश्र निदेशक, क.मुं. हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा
- व डॉ. विश्वनाथ प्रसाद प्रतिनिधि, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
- व डॉ. सविता जाजोदिया संपादक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली
- व डॉ. सुकुमार सेन भूतपूर्वप्रोफेसर, कोलकाता विश्वविद्यालय, कोलकाता
- व डॉ. हरदेव बाहरी भूतपूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
- व प्रो. वी.रा. जगन्नाथन पूर्वप्रोफेसर (हिंदी), इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली
- व डॉ. अशोक चक्रधर साहित्यकार, नई दिल्ली
- व डॉ. ओमविकास वरिष्ठ निदेशक, सूचना एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, नई दिल्ली
- व प्रो. सूरजभान सिंह सलाहकार, सी–डैक तथा पूर्व अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली
- व डॉ. रामशरण गौड़ पूर्व सचिव, हिंदी अकादमी, नई दिल्ली
- व श्री विजय कुमार मल्होत्रा पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, नई दिल्ली
- व प्रो. जगदीश चंद्र शर्मा भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर
- व प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी प्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- व प्रो. श्रीशचंद्र जैसवाल केंद्रीय हिंदी संस्थान, नई दिल्ली
- व प्रो. रामजन्म शर्मा एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली
- व प्रो. दिलीप सिंह दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, धारवाड़
- व प्रो. अश्विनी कुमार श्रीवास्तव केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- व डॉ. हेमंत दरबारी प्रोग्राम कोऑर्डिनेटर, सी–डैक, पुणे
- व डॉ. प्रभात कुमार प्रबंधक, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
- व डॉ. बालकृष्ण राय राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय, नई दिल्ली
- व डॉ. हेमंत जोशी भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली
- व श्री उमेश प्रसाद साहू सचिव, ओडिशा हिंदी परिवेश, कटक
- व श्री ब्रजसुंदर पाढ़ी सचिव, हिंदी शिक्षा समिति, ओडिशा
- व डॉ. नरेंद्र व्यास भाषाविद

NOTES

व डॉ. ठाकुरदास भाषाविद

व श्री हरिवंश राय बच्चन भूतपूर्व विशेषाधिकारी (हिंदी) विधि, न्याय तथा कंपनी कार्य मंत्रालय

व श्री बालकृष्ण भूतपूर्व कार्यकारी सचिव, राजभाषा विधायी आयोग

व श्री ब्रजकिशोर शर्मा संयुक्त सचिव, राजभाषा स्कंध, राजभाषा विधायी आयोग सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय

व श्री हृदय नारायण अग्रवाल प्रतिनिधि

व श्री चंद्रगुप्त विद्यालंकार प्रतिनिधि गृह मंत्रालय

व श्री रमाप्रसन्न नायक भूतपूर्व हिंदी सलाहकार

व श्री मुनीश गुप्त भूतपूर्व संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

व श्री हरिबाबू कंसल भूतपूर्व उपसचिव, राजभाषा विभाग

व श्री राजकृष्ण बंसल भूतपूर्व उपसचिव, राजभाषा विभाग

व श्री रामेश्वर प्रसाद मालवीय भूतपूर्व निदेशक, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, नई दिल्ली

व श्री काशीराम शर्मा भूतपूर्व निदेशक, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, नई दिल्ली शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय

व डॉ. कपिला वात्स्यायन भूतपूर्व अपर सचिव श्री कृष्णदयाल भार्गव भूतपूर्व उपसचिव

व श्री पी.एन. नाटू भूतपूर्व उपसचिव

व डॉ. ब्रजेंद्र त्रिपाठी साहित्य अकादमी, नई दिल्ली

व प्रो. प्रमोद पांडेय विभागाध्यक्ष, भाषा संस्थान, जे.एन.यू, नई दिल्ली

व डॉ. उमा बंसल सहायक निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, वसंतकुंज, नई दिल्ली

व डॉ. परमानंद पांचाल नागरी लिपि परिषद, नई दिल्ली

व डॉ. मोहिनी हिंगोरानी निदेशक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली

व प्रो. टी.एन. शुक्ल हिंदी विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश

व प्रो. आत्मप्रकाश श्रीवास्तव डीन, अनुवाद विद्यापीठ, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

व डॉ. एम. शेषन भाषाविद, चेन्नई, तमिळनाडु

व डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र संपादक, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना

व के.एल. वर्मा हिंदी विभाग, पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर

व डॉ. जे. रामचंद्रन नायर केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम

व डॉ. दिनेश चौबे, रीडर हिंदी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग,

NOTES

मेघालय

- व डॉ. स्वर्णलता निदेशक, सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी मंत्रालय, नई दिल्ली
- व डॉ. वी.रा. राल्ते निदेशक, यू.एच.सी.सी., आइजोल, मिजोरम
- व डॉ. अरुण होता पं. बंगाल राज्य विश्वविद्यालय, कोलकाता
- व प्रो. जयसिंह नीरद क.मु. हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा
- व डॉ. सुधांशु नायक हिंदी विभाग, खलीकोड कॉलेज, गंजाम, ओडिशा संताली विशेषज्ञ
- व प्रो. कृष्णचंद्र टुडु संताली विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची
- व डॉ. धनेश्वर माँझी संताली विभाग, विश्वभारती शांतिनिकेतन विश्वविद्यालय, पश्चिम बंगाल
- व डॉ. ठाकुर प्रसाद मुर्मू संताली विभाग, सी.आई.आई.एल., मैसूर
- व प्रो. बिरबल हेम्ब्रम बहरागोड़ा कॉलेज, झारखंड
- व डॉ. रमणिका गुप्ता संपादक 'आम आदमी', नई दिल्ली
- व डॉ. शशि शेखर तोशखानी कश्मीरी भाषाविद, नई दिल्ली
- व डॉ गौरीशंकर रैना दूरदर्शन, दिल्ली
- व डॉ. रामनाथ भट्ट भाषाविद, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस, उत्तर प्रदेश
- व श्री बी.एन. बेताब आकाशवाणी, दिल्ली
- व डॉ. सीतेश आलोक हिंदी लेखक एवं समीक्षक, नई दिल्ली, भाषाविद
- व डॉ. गुरचरण सिंह उपाचार्य, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
- व पंजाबी भाषा विशेषज्ञ प्रो. मनजीत सिंह पंजाबी विभाग
- व प्रो. पीतांबर ठाकवाणी दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
- व पंजाबी भाषा विशेषज्ञ डॉ. रत्नोंत्तमा दास सेवानिवृत्त प्रोफेसर (अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान), केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा,
- व सिंधी भाषा विशेषज्ञ डॉ. श्रीता मुखर्जी असिस्टेंट प्रोफेसर, दयाल सिंह महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
- व बांग्ला भाषा विशेषज्ञ डॉ. एच. बालसुब्रह्मण्यम पूर्व विजिटिंग प्रोफेसर, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली,
- व तमिळ एवं मलयाळम भाषा विशेषज्ञ डॉ. जी. राजगोपाल एसोसिएट प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- व तमिळ भाषा विशेषज्ञ प्रो. टी.एस. सत्यनाथ सेवानिवृत्त प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
- व कन्नड़ भाषा विशेषज्ञ डॉ. वेंकटरामय्या असिस्टेंट प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,
- व तेलुगु भाषा विशेषज्ञ श्री उमाकांत खुबालकर सेवानिवृत्त सहायक निदेशक, वै.

NOTES

त.श. आयोग, नई दिल्ली,

व मराठी भाषा विशेषज्ञ डॉ. भगत दशरथ तुकाराम पोस्ट डॉक्टरेट (मराठी), दिल्ली,

व मराठी भाषा विशेषज्ञ डॉ. राजेंद्र मेहता असिस्टेंट प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,

व गुजराती भाषा विशेषज्ञ डॉ. रूपकृष्ण भट्ट सेवानिवृत्त प्रोफेसर, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली,

व कश्मीरी भाषा विशेषज्ञ डॉ. जितेंद्रनाथ मुरमु सी.एम.ओ. (एन.एफ.एस.जी.), केंद्रीय सरकार स्वास्थ्य योजना, नई दिल्ली,

व संताली भाषा विशेषज्ञ डॉ. गंगेश गुंजन सेवानिवृत्त निदेशक, आकाशवाणी महानिदेशालय, नई दिल्ली,

व मैथिली भाषा विशेषज्ञ डॉ. कामिनी कामायनी लेखिका (हिंदी एवं मैथिली), नई दिल्ली,

व मैथिली भाषा विशेषज्ञ प्रो. देवशंकर नवीन भारतीय भाषा केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली,

व मैथिली भाषा विशेषज्ञ डॉ. मोहन सिंह लेखक, जम्मू,

व डोगरी भाषा विशेषज्ञ प्रो. शिवदेव सिंह मन्हास डोगरी विभाग, जम्मूविश्वविद्यालय, जम्मू,

व डोगरी भाषा विशेषज्ञ डॉ. चंद्रलेखा डिसौजा एसोसिएट प्रोफेसर, गोवा विश्वविद्यालय, गोवा,

व कोंकणी भाषा विशेषज्ञ डॉ. स्नेहलता शरेशचंद्र सेवानिवृत्त प्राध्यापिका, ६ ाारवाड़,कर्नाटक,

व कोंकणी भाषा विशेषज्ञ डॉ. सी. प्रमोदिनी एसोसिएट प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,

मणिपुरी भाषा विशेषज्ञ

व प्रो. इर्तेजा करीम निदेशक, उर्दू भाषा विकास परिषद, नई दिल्ली,

उर्दू भाषा विशेषज्ञ डॉ. अब्बास रजा नैय्यर एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, उर्दूविभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उ.प्र.

व डॉ. बलदेवानंद सागर सेवानिवृत्त संस्कृत समाचार प्रसारक, आकाशवाणी एवं दूरदर्शन, नई दिल्ली,

व संस्कृत भाषा विशेषज्ञ श्री विष्णु बहादुर गुरुंग अनुवादक–उद्घोषक, नेपाली एकांश, विदेश प्रसारण सेवा, आकाशवाणी, नई दिल्ली

व डॉ. विजयकुमार मोहंती सेवानिवृत्त हिंदी प्राध्यापक, बालेश्वर, ओडिशा,

NOTES

व ओडिआ भाषा विशेषज्ञ श्री भारत बसुमतारी समाचार वाचक, आकाशवाणी, नई दिल्ली,

व बोडो भाषा विशेषज्ञ श्री मनोज जैन निदेशक, इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, लोधी रोड, नई दिल्ली,

व कंप्यूटर विशेषज्ञ श्री करुणेश कुमार अरोड़ा संयुक्त निदेशक, सी–डेक, नोएडा,

व कंप्यूटर विशेषज्ञ श्री परमानंद पांचाल भूतपूर्व विशेष कार्याधिकारी, राष्ट्रपति, भारत

व प्रोफेसर ठाकुर दास केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा

व प्रोफेसर कृष्ण कुमार गोस्वासमी दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

व प्रोफेसर नरेश मिश्र महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

व प्रोफेसर पूरन चंद टंडन दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

व श्री पंकज चतुर्वेदी संपादक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली

3. शब्दावली का विकास दृ

हिंदी के लिए तकनीकी और साहित्यिक शब्दों की मानक शब्दावली विकसित की गई। मानक शब्दावली का विकास, वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग (वै. त. श. आ.) के जरिए होता है। इस आयोग ने कई भाषाओं और विषयों के लिए मानक शब्दावली तैयार की है। इसके अलावा, इस आयोग ने शब्दकोश, पाठ्य–पुस्तक, संदर्भ ग्रंथ, और त्रैमासिक पत्रिका भी प्रकाशित की हैं। मानक शब्दावली के विकास के लिए किए गए प्रयासों में वैज्ञानिक तकनीकी शब्दाावली आयोग ने कई भाषाओं और विषयों के लिए मानक शब्दावली तैयार की है। इस आयोग ने पारिभाषिक शब्दावली भी तैयार की है। इस आयोग ने शासकीय विभागों में इस्तेमाल होने वाली प्रशासनिक शब्दावली भी विकसित की है। इस आयोग ने हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की मानक शब्दावली को लोकप्रिय बनाने के लिए कार्यशालाएं, संगोष्ठियां, सम्मेलन, अभिविन्यास, और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए हैं। इस आयोग ने वैज्ञानिक शब्दावली पर भाषाविदों की संगोष्ठी आयोजित की थी। इस संगोष्ठी में अंतरराष्ट्रीय शब्दावली के देवनागरी लिप्यंतरण के संबंध में सिफारिशें की गई थीं।

4. प्रचार–प्रसार के प्रयास दृ

आकाशवाणी, दूरदर्शन, समाचार पत्र और सरकारी संचार माध्यमों के माध्यम से हिंदी के मानकीकरण को बढ़ावा दिया गया।

5. अनुवाद और संकलन दृ

विभिन्न भारतीय और विदेशी भाषाओं के शब्दों का हिंदी में अनुवाद और संकलन किया गया।

ध हिंदी के मानकीकरण के लाभ

संचार की सुगमता और स्पष्टता।

शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में एकरूपता।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में हिंदी का प्रभावी प्रयोग।

राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक पहचान को सुदृढ़ करना।

वैश्विक स्तर पर हिंदी के प्रचार और प्रसार में वृद्धि।

शिक्षा, साहित्य, संचार और प्रशासन में स्पष्टता आई।

हिंदी के साहित्यिक और तकनीकी शब्दावली का विकास हुआ।

हिंदी ने वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान स्थापित की।

हिंदी सिनेमा, टेलीविजन और इंटरनेट के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय हुई।

भाषा के मानकीकरण से समाज में संचार की सुविधा, शिक्षा और साहित्य के विकास, तथा सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा मिलता है। हिंदी के मानकीकरण ने इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने, शिक्षा और प्रशासन में उपयोग करने, तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी के अनुकूल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मानकीकरण के कारण ही हिंदी आज वैश्विक मंच पर अपनी पहचान स्थापित कर पाई है। इस प्रकार, हिंदी के मानकीकरण ने इसे एक सशक्त, सुचारू और प्रभावी संचार माध्यम के रूप में विकसित किया है।

हिंदी भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया

हिंदी भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया मुख्य रूप से निम्नलिखित चरणों से होकर गुजरीरू

1. लिपि का मानकीकरण

हिंदी की मानक लिपि देवनागरी है। देवनागरी लिपि को 11वीं शताब्दी में व्यवस्थित रूप दिया गया। 1950 में भारतीय संविधान द्वारा देवनागरी लिपि को हिंदी की मानक लिपि के रूप में स्वीकृति दी गई। इस पर ऊपर चर्चा की जा चुकी है।

2. व्याकरण का मानकीकरण

हिंदी व्याकरण का पहला व्यवस्थित ग्रंथ रामचन्द्र वर्मा और नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा तैयार किया गया। डॉ. रामचन्द्र वर्मा की पुस्तक ष्हिंदी शब्दानुशासनष ने हिंदी व्याकरण के मानकों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

3. शब्दावली का मानकीकरण

हिंदी की शब्दावली को संस्कृतनिष्ठ बनाया गया। 1950 में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय की स्थापना की गई, जिसने हिंदी की मानक शब्दावली तैयार की। अरबी–फारसी शब्दों के स्थान पर संस्कृत के शब्दों को अपनाया गया। उदाहरणरू

स्कूल ६ विद्यालय

स्टेशन ६ स्टेशन (रूढ़ हो गया)

NOTES

पुलिस ६ आरक्षक

4. वर्तनी और उच्चारण का मानकीकरण

हिंदी की वर्तनी और उच्चारण को सरल और वैज्ञानिक बनाया गया। 1960 में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय ने हिंदी वर्तनी के नियम प्रकाशित किए। उदाहरणरू

ऋतु ६ त्पजन

विद्या ६ टपकलं

भाषा ६ ठीीं

5. शैली और प्रयोग का मानकीकरण

हिंदी में आधिकारिक और साहित्यिक शैली को मान्यता दी गई। प्रशासनिक, तकनीकी और शैक्षणिक भाषा के रूप में एकरूपता लाई गई। हिंदी समाचार, प्रसारण और प्रकाशन में मानक शैली का पालन किया जाने लगा।

६ चुनौतियां एवं समाधान और भविष्यय की दिशा

चुनौतियाँ

६ क्षेत्रीय बोलियों और भाषाओं के प्रति लोगों का झुकाव।

६ अंग्रेजी का प्रभाव।

६ तकनीकी शब्दावली को सरल बनाना।

६ क्षेत्रीय विविधता के कारण हिंदी के मानकीकरण में असंगति।

समाधान और भविष्य की दिशा

६ हिंदी को सरल और व्यावहारिक बनाने की आवश्यकता है।

६ तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दावली को सामान्य जनता के लिए सुगम बनाया जाए।

६ हिंदी को वैश्विक स्तर पर प्रचारित और प्रसारित किया जाए।

६ आधुनिक संचार माध्यमों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाए।

हिंदी भाषा का मानकीकरण एक सतत प्रक्रिया है। इसने हिंदी को न केवल राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी प्रतिष्ठित किया है। मानकीकरण ने हिंदी भाषा को एकरूपता, स्पष्टता और व्यावहारिकता प्रदान की है। हिंदी अब सिर्फ एक भाषा नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति और पहचान का प्रतीक बन चुकी है। मानकीकरण के माध्यम से हिंदी भाषा का भविष्य उज्ज्वल है। ष्हिंदी का मानकीकरण भारतीय समाज को एकता और पहचान का आधार प्रदान करता है।ष

ध हिंदी भाषा का आधुनिकीकरण

भाषा किसी भी समाज के संचार, संस्कृति और विकास का प्रमुख माध्यम होती है। समय के साथ समाज और उसकी आवश्यकताओं में बदलाव आता है, जिससे भाषा में भी परिवर्तन की आवश्यकता महसूस होती है। यह परिवर्तन ही भाषा के आधुनिकीकरण का आधार बनता है। हिंदी भाषा, जो संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश से विकसित होकर वर्तमान स्वरूप में आई है, ने आधुनिक युग में तेजी से बदलाव का अनुभव किया है। संचार क्रांति, वैश्वीकरण, तकनीकी विकास और सूचना प्रौद्योगिकी के कारण हिंदी का आधुनिकीकरण एक स्वाभाविक प्रक्रिया बन चुका है। इस निबंध में हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण के विभिन्न आयामों, उसकी प्रक्रिया, लाभ और चुनौतियों पर विस्तार से चर्चा की जाएगी।

आधुनिकीकरण का अर्थ

आधुनिकीकरण का अर्थ है दृ किसी भाषा को आधुनिक आवश्यकताओं के अनुसार समृद्ध और व्यवस्थित करना, जिससे वह वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक और वैश्विक संचार के अनुरूप हो सके। आधुनिकीकरण के अंतर्गत निम्नलिखित प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैंरू

ध भाषा में नए शब्दों और शब्दावलियों का समावेश।

ध संचार और तकनीकी माध्यमों में भाषा का समायोजन।

ध प्रशासनिक, विधिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में भाषा की स्वीकृति।

ध व्याकरण और वर्तनी का मानकीकरण।

ध वैश्वीकरण के अनुरूप भाषा का विकास।

ध हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया

हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया मुख्य रूप से चार चरणों में संपन्न हुई हैरू

1. तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दावली का विकास

1950 के बाद भारत सरकार द्वारा हिंदी के आधुनिकीकरण की योजना तैयार की गई। केन्द्रीय हिंदी संस्थान और केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा हिंदी के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली तैयार की गई। उदाहरणरू

ब्वउचनजमत ध संगणक

डवनेम ध माउस

क्ंजंइेंम ध आंकड़ा आधार

2. प्रशासन और शिक्षा में आधुनिकीकरण

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। शिक्षा, प्रशासन और न्याय व्यवस्था में हिंदी को अपनाया गया। विश्वविद्यालयों और

NOTES

महाविद्यालयों में हिंदी माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाने लगी। उदाहरणरू

1. न्यायालय के आदेश हिंदी में जारी किए जाने लगे।
2. सरकारी कार्यालयों में हिंदी में पत्र–व्यवहार किया जाने लगा।

3. संचार माध्यमों में हिंदी का विकास

हिंदी समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन और सिनेमा के माध्यम से हिंदी का विस्तार हुआ। सोशल मीडिया, इंटरनेट और डिजिटल माध्यमों में हिंदी का उपयोग बढ़ा। उदाहरणरू

हिंदी में ब्लॉग लेखन, यूट्यूब चौनल और वेब पोर्टल्स का विकास।

हिंदी में गूगल, फेसबुक और ट्विटर के संस्करण।

4. वैश्वीकरण और हिंदी का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विकास

वैश्वीकरण के कारण हिंदी को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली। प्रवासी भारतीयों के बीच हिंदी लोकप्रिय बनी। संयुक्त राष्ट्र, विश्व व्यापार संगठन और अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों में हिंदी के प्रयोग की मांग बढ़ी। उदाहरणरू

मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, नेपाल आदि देशों में हिंदी को स्वीकृति।

संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाने की मांग।

द हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण के लाभ

1. संचार में सरलता दृ

हिंदी में वैज्ञानिक, तकनीकी और प्रशासनिक शब्दावली के विकास से संचार सुगम हुआ।

2. वैश्विक पहचान दृ

हिंदी ने अंतरराष्ट्रीय मंचों पर अपनी पहचान स्थापित की।

3. साहित्य और सृजनात्मकता का विकास दृ

हिंदी में साहित्यिक, सांस्कृतिक और रचनात्मक विकास हुआ।

4. तकनीकी और डिजिटल विस्तार दृ

हिंदी के आधुनिकीकरण से सूचना प्रौद्योगिकी और इंटरनेट के माध्यम से हिंदी का विकास हुआ।

5. रोजगार और शिक्षा के अवसर दृ

हिंदी माध्यम से शिक्षा और रोजगार के नए अवसर मिले।

उदाहरण

1. संचार माध्यमों में प्रयोगरू

हिंदी के समाचार चौनल, जैसे दृ आजतक, एनडीटीवी इंडिया, एबीपी न्यूज।

NOTES

2. ऑनलाइन माध्यमों में प्रयोगरू

गूगल, फेसबुक और ट्विटर ने हिंदी में अपने संस्करण शुरू किए।

3. साहित्य में प्रयोगरू

हिंदी में ब्लॉग, ई–बुक्स और ऑनलाइन पत्रिकाओं का विकास हुआ।

4. वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्र में प्रयोगरू

आईआईटी, आईआईएम और अन्य शैक्षणिक संस्थानों में हिंदी माध्यम से शिक्षा का विस्तार हुआ।

- ६ हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण की चुनौतियाँ

1.अंग्रेजी का प्रभावरू वैश्वीकरण के कारण अंग्रेजी का प्रभाव बढ़ा है।

2. तकनीकी शब्दावली का दुरूह होनारू तकनीकी शब्दों का कठिन और संस्कृतनिष्ठ होना।

3. भाषा की शुद्धता का ह्रासरू अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के शब्दों के अंधाधुंध प्रयोग से हिंदी की शुद्धता प्रभावित हो रही है।

4. क्षेत्रीय बोलियों का प्रभावरू क्षेत्रीय बोलियों के कारण हिंदी की एकरूपता में कमी आ रही है।

६ समाधान और भविष्य की दिशा

६ सरल और व्यवहारिक शब्दावली का निर्माण।

६ तकनीकी शिक्षा और संचार माध्यमों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देना।

६ हिंदी के अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचार–प्रसार के लिए सरकारी और निजी स्तर पर प्रयास।

६ हिंदी के लिए आधुनिक उपकरण और सॉफ्टवेयर का विकास।

हिंदी भाषा का आधुनिकीकरण एक सतत प्रक्रिया है, जिसने हिंदी को वैश्विक मंच पर एक नई पहचान दिलाई है। विज्ञान, तकनीक, प्रशासन और संचार के क्षेत्रों में हिंदी ने अपने लिए एक सशक्त आधार तैयार किया है। आधुनिकीकरण ने हिंदी को न केवल भारत में, बल्कि विश्व स्तर पर एक सशक्त भाषा के रूप में स्थापित किया है। हिंदी भाषा का भविष्य उज्ज्वल है, बशर्ते हम इसके विकास और संरक्षण के प्रति सतत प्रयास करते रहें। षहिंदी का आधुनिकीकरण ही इसे विश्व भाषा के रूप में स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त करेगा।ष

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी उत्पत्ति एवं विकास :डॉ. हरदेव बाहरी
2. हिन्दी भाषा साहित्य का विकास जगदीश यादव
3. हिन्दी भाषा साहित्य का विकास तथा काव्यांग विवेचनः डॉ. आर.के. पाण्डेय
4. हिन्दी भाषा का इतिहास : डॉ. भोलानाथ तिवारी
5. व्याकरण भारती : सुरेन्द्रकुमार झा

MATS UNIVERSITY

MATS CENTER FOR OPEN & DISTANCE EDUCATION

UNIVERSITY CAMPUS : Aarang Kharora Highway, Aarang, Raipur, CG, 493 441
RAIPUR CAMPUS: MATS Tower, Pandri, Raipur, CG, 492 002

T : 0771 4078994, 95, 96, 98 M : 9109951184, 9755199381 Toll Free : 1800 123 819999
eMail : admissions@matsuniversity.ac.in Website : www.matsodl.com